Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

स्वास्थ्य के मूलभूत सिद्धान्त

आचार्य बलदेव

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

10.3
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

स्वास्थ्य के मूलभूत सिद्धान्त

आचार्य बलदेव

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशक

रेशमादेवी महादेव प्रसाद ट्रस्ट

डी ५९/१४ ए० महमूरगंज

वाराणसी – २२१०१०

वितरक

– रामलाल कपूर ट्रस्ट

बहालगढ़, सोनीपत हरियाणा – १३१०२१

– विजय कुमार गोविन्द राम हासानन्द,

नई सड़क, दिल्ली

प्रथम वार – १००० प्रति

मूल्य – ४०.००

लेजर टाईपसैटिंग –

आर्ष प्रकाशन

२७९, पाकेट १, पश्चिम पुरी,

नई दिल्ली – ११००६३

दूरभाष – ५४१८३४१

मुद्रक :

राधा प्रैस, दिल्ली

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समर्पण

जन्म : जुलाई १८९३ *निधन* : १९ अगस्त १९७१

सदा सत्प्रेरणा देने वाली साधु तथा अतिथियों का आदर सम्मान
करने वाली धर्मपरायणा स्नेहमयी श्रीमती रेशमादेवी
के पूज्य पवित्र चरणों में उनके स्नेहभाजन
कनिष्ठ पुत्र श्री उतराम द्वारा
सादर समर्पित ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशकीय

लगभग पच्चीस वर्ष पूर्व ब्रह्मचारी बलदेव जी वैदिक वाङ्मय का अध्ययन करने के लिए पाणिनि महाविद्यालय, बहालगढ़ में प्रविष्ट हुए थे। तभी उनसे मेरा प्रथम परिचय हुआ जो कालान्तर में घनिष्टता में परिणत हो गया। अध्ययन काल में उनकी आस्था, संयत आहार-विहार, स्वास्थ्य के प्रति सतत जागरूकता और ब्रह्मचर्य पालन के सत्प्रयास से कोई भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहता था। यहां अध्ययन समाप्ति के पश्चात् वे वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार में लग गये। उन्होंने उत्तर काशी में 'योग-साधना केन्द्र ' की स्थापना कर के उत्तराखण्ड को प्रचार-क्षेत्र बनाया। मेरा सम्पर्क उनसे सदा बना रहा। वे प्रति वर्ष कुछ काल के लिए विरजानन्दाश्रम बहालगढ़ में आते रहे हैं और यहां के वैदिक पुस्कालय का भरपूर लाभ उठाते रहे हैं। उनसे विभिन्न विषयों पर विचार-विमर्श होता रहता है। दो साल पूर्व उन्होंने कहा था कि वे स्वास्थ्य-विषयक अपने अनुभव लिखना चाहते हैं और यदि सम्भव हुआ, तो उन्हें पुस्तक रूप में प्रकाशित करना चाहते हैं ।

मैं शास्त्रीय वाङ्मय के प्रकाशन-विक्रय-वितरण से सम्बद्ध रहा हूं। मैं बहुत वर्षों से अनुभव कर रहा था कि सर्व साधारण जनों के लिए ऐसी पुस्तकें भी प्रकाशित हों जो शास्त्रीय जटिलताओं से रहित हों और जिन में जीवन के अनुभव सरल भाषा में प्रकट किये गए हों । इस लिए मैं ब्रह्मचारी जी के उपर्युक्त स्वास्थ्य-विषयक अनुभवों को लिपिबद्ध करने के विचार की ओर आकृष्ट हुआ और उन्हें शीघ्र लिखने की प्रेरणा की। वे अपने विचार कार्य में संलग्न रहे, मैं उन्हें बार बार प्रेरित करता रहा। अन्ततः उन्होंने अपने अनुभव लिपिबद्ध किये और पुस्तिका ले कर बहालगढ़ आये। यहां रामलाल कपूर ट्रस्ट के अधिकारियों को हस्तलिखित पुस्तक दिखाई, तो उन्होंने उसे प्रकाशित करने में कोई रुचि नहीं दिखाई। ब्रह्मचारी जी ने मुझ से बातचीत की और मैंने स्वयं ही पुस्तक के प्रकाशन का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया। इस से ब्रह्मचारी जी को सन्तोष हुआ ।

इस पुस्तक में स्वास्थ्य सम्बन्धी मौलिक सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला गया है। ब्रह्मचारी जी ने शारीरिक स्वास्थ्य के लिए मानसिक स्वास्थ्य को अनिवार्य मानते हुए परम सत्ता में आस्था, आशा से परिपूर्ण जीवन और दृढ़

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छा-शक्ति पर विशेष बल दिया है। इनके बिना स्वस्थ रहने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। आयुर्वेद के अनुसार आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य - जीवन के तीन स्तम्भ हैं। इस पुस्तक में इन तीनों स्तम्भों पर यथेष्ट प्रकाश डाला गया है। पुस्तक में बताया गया है कि नियमित दिनचर्या किस प्रकार व्यक्ति को स्वस्थ रखती है। व्यायाम से शारीरिक और प्राणायाम से मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त होता है। व्यायाम कितना और कैसा होना चाहिये, प्राणायाम की पद्धति क्या है और उसके अधिकारी कौन हैं --इस प्रकार के महत्त्वपूर्ण प्रश्नों का समाधान इस पुस्तक में बड़े सरल और स्वाभाविक ढंग से किया गया है। हम जिस पर्यावरण से सम्बद्ध हैं, उस के महत्त्व और यथेष्ट उपयोग की ओर सम्भवतः पहली बार ब्रह्मचारी जी ने इस पुस्तक के माध्यम से हमारा ध्यान आकृष्ट किया है।

मैं अपने माता पिता की अन्तिम सन्तान हूं। स्वभावतः मेरी माता जी का ध्यान सदा मेरे स्वास्थ्य पर अधिक रहता था। बड़े भाईयों की अपेक्षा मुझे शारीरिक सम्पत् अल्प प्राप्त हुई थी। मेरी पूज्यजननी तो यहां तक कहती थीं – ' भगवान् ने बची-खुची सामग्री से 'जीउत' (मेरा पारिवारिक नाम यही है) को बना दिया है!' उनका भरपूर स्नेह मुझे सदा प्राप्त रहा। अब वे परलोकवासिनी हो गई हैं, परन्तु उनकी स्मृति मेरा सम्बल है। मैं उनकी पुण्य स्मृति को अक्षुण्ण रखने के लिए इस पुस्तक के प्रकाशन का तुच्छ प्रयास कर रहा हूं। मेरे इस साधारण कृत्य से उन्हें (वे जहां भी हों) तुष्टि प्राप्त हो, यही परमेश्वर से प्रार्थना है।

पाणिनि महाविद्यालय के प्राध्यापक और वेदवाणी के सहसम्पादक पं० प्रदीप कुमार शास्त्री तथा ब्र० दोलामणि आर्य के प्रति मैं हार्दिक आभार प्रकट करता हूं। उन्होंने बड़े मनोयोग से इस पुस्तक के प्रूफ संशोधन किये हैं। कम्प्यूटर-अक्षरविन्यास के लिए श्री सतीश आर्य, आर्ष प्रकाशन, नई दिल्ली और मुद्रण के लिए राधा प्रैस, दिल्ली का हार्दिक धन्यवाद करता हूं। इन सभी सज्जनों के सहयोग के विना यह कार्य इतनी सुविधा और उत्कृष्टता से सम्पन्न नहीं हो सकता था।

विनीत

जीवन राम

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुभ-आशंसन

मैंने ब्रह्मचारी बलदेव आचार्य द्वारा लिखित पुस्तक 'स्वास्थ्य के मूलभूत सिद्धान्त' पढ़ी। मेरी दृष्टि में यह पुस्तक स्वास्थ्य की प्राप्ति और रक्षा के उपायों को प्रदर्शित करने वाली पुस्तकों में से एक है। आयुर्वेद के मर्मज्ञों ने 'स्वस्थ' का लक्षण किया है -

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः ।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते ॥

स्वस्थ वह है जिस के वात-पित्त-कफ, कोष्ठस्थ अग्नि, रस-रक्त आदि धातु और मल-मूत्र आदि क्रियाएं सम (यथोचित) हों, चित्त शुद्ध, मन प्रसन्न और इन्द्रियों की प्रवृत्ति यथेष्ट हों। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए विद्वान् , अनुभवी, महापुरुषों ने विभिन्न उपाय सुझाये हैं। ब्रह्मचारी बलदेव जी ने प्राचीन-अर्वाचीन, पौरस्त्य-पाश्चात्त्य मनीषियों द्वारा सुझाये गये उपायों को जीवन में उतार कर देखा है। इस दृष्टि से उन का यह प्रयास स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों का संक्षिप्त संकलन मात्र ही नहीं है, जैसा कि आज कल अनेक लेखक कर रहे हैं, अपितु स्वानुभूत जीवनचर्या का लेखा है, उत्कृष्ट विवरण है। उन्होंने अपने कथ्य को प्रामाणिकता प्रदान करने के लिए वेद से लेकर आधुनिकतम ग्रन्थों से सैकड़ों वचन उद्धृत किये हैं।

लेखक का यह वचन कि ईश्वरोपासना स्वास्थ्य प्राप्ति में परमसहायक है, सर्वथा युक्त है। कुछ लोगों का यह विचार सही नहीं है कि रोग ईश्वर के प्यार के परिचायक हैं - रोग तो प्रकृति के विरुद्ध आहार-विहार का फल हैं। ब्रह्मचारी जी ने अपनी बात ब्राह्ममुहूर्त्त में शय्यात्याग से आरम्भ की है। उषःपान, मलत्याग, दन्तधावन, व्यायाम, प्राणायाम, स्नान आदि विषयों पर उत्तम प्रकाश डाला गया है, इन की उचित विधियां सरल रीति से बताई गई हैं। व्यायामों में आप ने आसनों और भ्रमण को श्रेष्ठ बताया है और प्रमुख सात आसनों की विधियों एवं लाभों को प्रस्तुत किया है। जीवन के आधार भूत तीन स्तम्भों - आहार, निद्रा, ब्रह्मचर्य - पर प्रभूत प्रकाश डाला है। प्रमुख पर्यावरणों - भूमि, आकाश, वायु, प्रकाश - के महत्त्व को सभी स्वीकार करते हैं। इस पुस्तक में उन के यथोचित उपयोग की विधियां

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रदर्शित की गई हैं। स्वास्थ्य के लिए दृढ़ इच्छा-शक्ति और आशा-उल्लास पूर्ण जीवन पर विशेष बल दिया गया है। अन्त में आधुनिक विज्ञान के अनुसार आहार-विहार का प्रतिपादन उपयोगी होते हुए भी साधारण जन की पहुंच से परे है। कुल मिला कर पुस्तक उपयोगी है। किशोरावस्था में ही छात्रों को पढ़ने के लिए दी जाय और वे क्रियात्मक रूप से इस से लाभ उठाएं, तो राष्ट्र को स्वस्थ एवं उत्साही नागरिक प्राप्त होंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं। ब्रह्मचारी बलदेव जी के इस ' गागर में सागर ' प्रयास के लिए, उन्हें हार्दिक बधाई एवं शुभ कामनाएं।

बहालगढ़
दि० ६.१.१९९८

विजयपाल विद्यावारिधि,
आचार्य, पाणिनि महाविद्यालय,
बहालगढ़, जि० सोनीपत (हरियाणा)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

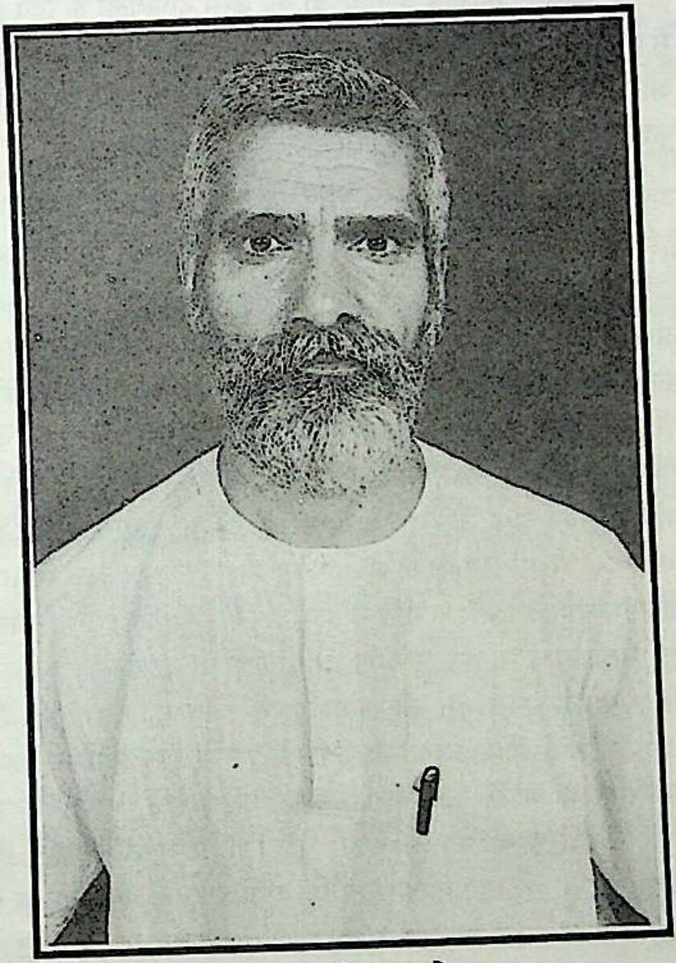

आचार्य बलदेव

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखक का जीवन-वृत्त

जन्म – आचार्य बलदेव जी का जन्म दीपावली के दिन सन् १९४५ में ग्राम-बसौली जिला-मेरठ में हुआ था। आप के पिता जी कठोर परिश्रमी और सरल स्वभाव के व्यक्ति थे। तथा माता जी धर्म परायणा, व्यवहार कुशल और अनुशासन प्रिय देवी थीं।

शिक्षा एवं कार्य – आचार्य जी की प्राथमिक शिक्षा अपने गांव में ही हुई। बालपन से ही इन्हें साधु सन्तों में श्रद्धा थी। सन्ध्या करना और योगासनों में बाल्यकाल से ही रुचि हो गई। चतुर्थ श्रेणी में पढ़ते समय इन्होंने अपने विद्यालय में योगासनों का प्रदर्शन करके अपने विद्यालय के गुरुजनों को विस्मित कर दिया। जिससे प्रभावित होकर वहां के सभी छात्रों को पी०टी० में योगासन कराये जाने लगे। उसके परिणाम स्वरूप आपके गांव के स्कूल के छात्र जिलास्तर की खेलकूद प्रतियोगिता में प्रथम आने लगे और यही क्रम कई वर्षों तक वहां बना रहा। उस को देख कर पास के गांव के विद्यालयों में भी योगासनों का प्रचलन हो गया। प्राथमिक शिक्षा के बाद माध्यमिक शिक्षा पास के गांव में हुई। अपने अनुशासित और धार्मिक जीवन एवं सत्याचरण के कारण आप वहां निर्विरोध छात्राध्यक्ष चुन लिये गये। तीन वर्ष तक उस पद पर कुशलतापूर्वक कार्य किया। उसके बाद बी.एस सी. तक की इनकी शिक्षा जनता कॉलिज बड़ौत में हुई। पाणिनि महाविद्यालय बहालगढ़ में आपने अष्टाध्यायी-महाभाष्य, निरुक्त, भारतीय दर्शनों और अन्य वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन, वैदिक विद्वान् श्री आचार्य विजयपाल विद्यावारिधि एवं महामहोपाध्याय पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक के श्री चरणों में पूरा किया। बाद में आप ने प्राकृतिक चिकित्सा साहित्य का गम्भीर अध्ययन किया। मध्यप्रदेश में आप ने योगाचार्य की उपाधि प्राप्त की। कई गुरुकुलों में आपने प्रधानाचार्य के रूप में अध्यापन कार्य भी किया। आजकल उत्तरकाशी में साधनात्मक जीवन व्यतीत करते हुए वैदिक साहित्य का अनुशीलन और आर्षग्रन्थों का पठन-पाठन कर रहे हैं। प्रस्तुत पुस्तक आपके स्वास्थ्य सम्बन्धी विचारों का ही परिकलन है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो शब्द

ऐसा कौन व्यक्ति होगा, जिसे अपने स्वास्थ्य से प्रेम न हो ? स्त्री-पुरुष, धनी-निर्धन, बहुविज्ञ और अल्पज्ञ सभी को स्वास्थ्य प्रिय होता है। सुन्दर और सुगठित शरीर में वह आकर्षण होता है जो सभी दर्शकों के मन को मोहित कर लेता है। सुन्दर स्वास्थ्य की कमनीय कान्ति दर्शक के मन पर प्रथम नजर में ही जादू कर देती है।

जवानी का सारा रूप लावण्य और सौन्दर्य स्वास्थ्य पर ही निर्भर करता है। प्राकृतिक विधा के अनुसार बाल्यावस्था के बाद किशोरावस्था और फिर यौवनावस्था आती है। वे लोग सौभाग्यशाली हैं जो जवानी में सुन्दर स्वास्थ्य का आनन्द लेते हैं। अनेक बालक-बालिकाएँ कुसङ्ग में पड़कर अज्ञानतावश प्रकृति के सहज विकास को भी रोक देते हैं, जिसके परिणामस्वरूप वे अपने जीवन में सुन्दर स्वास्थ्य के अनमोल आनन्द से वञ्चित हो जाते हैं। तथा अपनी जवानी में ही ऐसे लोग अनेक भयंकर रोगों के शिकार हो जाते हैं। तब वैद्य और डाक्टरों की शरण में दौड़ते हैं। दैवयोग से यदि उन्हें कोई सद्वैद्य मिल गया तो वह उन्हें सन्मार्ग का पथिक बनाकर स्वास्थ्य-धन का धनी बना देता है। अन्यथा दूसरे वैद्य और डाक्टर तो उसके स्वास्थ्य के साथ ही धन को भी हर लेते हैं।

मानव जीवन में किशोरावस्था ऐसी अवस्था है जो उमंग से भरपूर किन्तु विवेक से शून्य होती है। इस अवस्था में बालकों के मन में नई-नई तरङ्गें और नई-नई जिज्ञासाएँ उत्पन्न होती हैं। ज्ञान की खोज में किये गये प्रयत्न बुरे नहीं हैं, किन्तु उन सभी प्रयत्नों में सतर्कता आवश्यक है। यह ठीक है कि इन्द्रियाँ बेलगाम होना चाहती हैं और मन बिना किसी रोक-टोक के दौड़ना चाहता है। मन और इन्द्रियों की यह दौड़ मर्यादा के अन्दर ही रहे, तब तक तो ठीक है; क्योंकि मर्यादा का तनिक भी उल्लङ्घन खतरे से खाली नहीं है। इन मर्यादाओं की रक्षा और निर्धारण विवेकी जन करते हैं। किशोरावस्था के बालक-बालिकाओं को अपने सुन्दर स्वास्थ्य और उज्ज्वल भविष्य की कामना से अपने अनुभवी विद्वान् माता-पिता, आचार्य और अभिभावकों के प्रति अपने मन में श्रद्धा-भक्ति उत्पन्न करनी चाहिये। ये ही वे स्तम्भ हैं जो उन्हें सन्मार्ग दर्शाते हैं और जीवन की मर्यादाओं से अवगत कराते हैं। उदाहरण के तौर पर यदि कोई माँ अपनी पुत्री को किसी युवक के साथ बैठने और खेलने से रोकती है अथवा कोई आचार्य किसी छात्र को शृङ्गार करने से रोकता है, तो वे दोनों उन बालकों के सच्चे हितैषी हैं। वे उनके भविष्य के खतरों को भी जानते हैं। जिस प्रकार बिना माली के बाग

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उजड़ जाते हैं उसी प्रकार किशोरों के जीवन भी सच्चे संरक्षकों के अभाव में पथभ्रष्ट होकर सर्वथा नष्ट हो जाते हैं। जीवन का बसन्त खिलने से पूर्व ही पतझड़ आ जाता है। जीवन का सारा आनन्द हवा में उड़ जाता है और जवानी तथा जीवन के सारे स्वप्न धूल में मिल जाते हैं।

एक सच्चा संरक्षक किशोर बालक–बालिकाओं को उत्तम पथ का पथिक बनाकर उन्हें जीवन का आनन्द दिलाता है। एक संरक्षक की भावना से मैं अपने देश के किशोरों के हाथ में यह पुस्तक पहुँचाना चाहता हूँ जिससे प्रेरणा पाकर वे प्राकृतिक जीवन जीना सीखें। अप्राकृतिक और कृत्रिम जीवन साधनों के खतरों से सावधान होकर अपने अमूल्य स्वास्थ्य–धन का परिवर्धन और उसकी रक्षा कर सकें।

मनुष्य अल्पज्ञ है। उससे भूल होना स्वाभाविक है। किन्तु भूल में सुधार करना मनुष्य का ही कार्य है। जो लोग अज्ञानवश अपने स्वास्थ्य को गंवा बैठे हैं उनके लिये यह पुस्तक प्रकाश स्तम्भ का काम करेगी। इसके प्रकाश में वे पुनः अपने खोये हुए स्वास्थ्य को प्राप्त कर सकेंगे। ऊपर उठने के अभिलाषियों को यह पुस्तक सम्बल प्रदान करेगी; किन्तु जो निज प्रयत्न के बिना पुस्तक की पंक्तियों को पढ़कर ही स्वास्थ्य–लाभ लेना चाहेंगे उनके हाथ खाली ही रह जायेंगे। ज्ञान अपना फल क्रिया रूप में परिणत होकर ही देता है। अतः पुस्तक में दर्शाये गये सिद्धान्तों के अनुसार निज आचरण को बनाकर लाभ उठाईये।

मानव मस्तिष्क को झकझोरने वाले प्रमुख प्रश्नः–

(१) जिस मानव जाति के लाखों डाक्टर तथा चिकित्सा जगत् के अनेक नोबेल पुरस्कार विजेता संरक्षक हैं, वह अगणित बीमारियों की शिकार क्यों है ?

(२) मानव जाति में पायी जाने वाली नाना प्रकार की भयंकर बीमारियों से पशु और पक्षी जगत् किस कारण से बचे हुए हैं ?

(३) चींटी से हाथी पर्यन्त सभी पशु तथा कीट, पतङ्ग आदि व सभी पक्षी पृथ्वी पर स्वतंत्र विचरण करते हैं। समान ऋतुओं और जलवायु के सहचर में रहने पर भी उनके शरीर की प्रतिरोधक शक्ति न्यून नहीं होती जबकि मानव के शरीर पर जलवायु और ऋतुओं के परिवर्तन प्रभाव डालते हैं तथा उसे बीमार बनाते हैं ?

(४) सैकड़ों वर्षों से लगातार अनेक वैज्ञानिकों द्वारा खोजपूर्ण लाखों औषधियों का प्रयोग आज तक मानव शरीर की प्रतिरोधक शक्ति के ह्रास को क्यों नहीं रोक पाया ?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रिय पाठकगण! यदि ऐसा मान लिया जाये कि रोगों की उत्पत्ति में अदृश्य कारण हैं तो यह तर्क निराधार है। क्योंकि अदृश्य की समानता में पशु–पक्षी भी बीमार होने चाहिये। किन्तु वे स्वस्थ रहते हैं। वस्तुतः अदृश्य के शुभ होने के कारण ही तो हमें यह श्रेष्ठतम नर तन मिला है। अतः बीमारियों का दृश्य ही कारण है। और वह है–**सभ्य मनुष्य द्वारा प्रकृति के नियमों का उल्लङ्घन।**

पशुओं ने स्वास्थ्य विषयक लम्बे–चौड़े ग्रन्थ नहीं पढ़े होते। उन्होंने विभिन्न खाद्योज और विटामिनों की खोज नहीं की। फिर भी वे अधिक सबल और स्वस्थ रहते हैं। हम कभी विचार ही नहीं करते कि पशु अनजाने में ही ऐसे किन नियमों का पालन करके स्वस्थ रहते हैं जिन्हें हम अपनी बुद्धि के तेज प्रकाश में भी नहीं देख पाते। विज्ञान के साथ–साथ मानव बुद्धि का भी खूब विकास हुआ किन्तु फिर भी हम स्वास्थ्य के शिखर को नहीं खोज पाये। हमारे मस्तिष्क ने जितनी भी खोजें की हैं वे सब इन्द्रियों की दासता में की हैं। इन्द्रियों की दासता ने हमें विषयलोलुप और विवेकशून्य बना दिया। क्या अज्ञ और क्या विज्ञ, सभी इस दासता की बेड़ी में जकड़े हुए हैं। साधारण जन की तो कौन कहे, पढ़ा लिखा सुसभ्य समाज ही विषयव्यसनों से अधिक ग्रस्त है। यह जानते हुए भी कि शराब, मांस, अण्डा, चाय, बीड़ी, सिगरेट आदि उसके स्वास्थ्य के लिये हानिकारक हैं फिर भी वह उनकी राहों पर चलने को विवश है। जिस समाज के अग्रगण्य पुरुषों का यह हाल है उसमें जन सामान्य की रक्षा कौन कर सकता है। इतना ही नहीं मानव का नैतिक स्तर इस सीमा तक गिर चुका है कि वह अपने ही भाईयों के जीवन और स्वास्थ्य की बलि देकर अर्थ संचय करने से नहीं झिझकता।

मानव का अन्तरात्मा स्वतन्त्र होना चाहता है। विषयों की नश्वरता और इन्द्रियों की उच्छृंखलता से वह भलीभाँति परिचित है। सत्यान्वेषी पुरुषों के हृदय में प्रकृति पथ पर चलने की एक उत्कण्ठा उत्पन्न होती है। इस पुस्तक के पृष्ठों में जिज्ञासु हृदयों को प्रकृति के अनमोल बोल सुनने को मिलेंगे। जिनका अनुगमन कर वे अपने शरीर और स्वास्थ्य की रक्षा कर सकेंगे। कोई डाक्टर हो या इंजीनियर, कृषक हो या उद्योगपति, प्रकृति की नजर में सब समान हैं। वह किसी को क्षमा नहीं करती। जो उसके आदेशों का पालन करेगा वह विजयी होगा। प्रकृति के राज्य में अप्राकृतिक जीवन जीकर सुखों की कामना करना बहुत बड़ी भूल है। स्वस्थ रहकर सुखी जीवन का आनन्द प्राकृतिक जीवन में ही है। नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।

प्रस्तुत पुस्तक में जहाँ हमारे अपने कुछ मौलिक विचार हैं वहीं हमनें अनेक विद्वानों की पुस्तकों से भी बहुत कुछ लिया है। उन सभी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्वानों के प्रति हम हार्दिक कृतज्ञ हैं। पुस्तक को हमने यथाशक्ति शुद्ध रूप देने की कोशिश की है। पुनरपि मानव अल्पज्ञ है। विज्ञ पाठकगण यदि किसी भूल की ओर ध्यान दिलायेंगे तो उनके हम अत्यन्त आभारी होंगे।

वेदमन्दिर — विनीत-

कुटेटी उत्तरकाशी — बलदेव आचार्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

अध्याय	विषय	पृष्ठ
१.	ईश्वरोपासना	१
२.	प्रातःजागरण	५
	नित्य के कर्त्तव्य-कर्म	१०
३.	व्यायाम	१५
४.	प्राणायाम	२२
५.	जल के उपयोग	३१
६.	हमारा भोजन कैसा हो ?	३९
७.	उपवास	५८
८.	निद्रा	६२
९.	ब्रह्मचर्य या जीवन रक्षा	७०
१०.	भूमि, आकाश और प्रकाश का हमारे जीवन के लिए महत्त्व और उनके उपयोग	७९
११.	श्रम और सफाई	९२
१२.	दृढ़ इच्छा-शक्ति	९७
१३.	निराश क्यों ?	१०२
१४.	स्वास्थ्य-विज्ञान	१०६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहायक सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

१. वेद
२. दर्शन
३. उपनिषद्
४. कल्पसूत्र
५. चरक
६. सुश्रुत
७. शतपथ ब्राह्मण
८. नाड़ी-तत्त्व-दर्शनम् — वैद्य सत्यदेव वासिष्ठ
९. वैदिक विचारधारा का वैज्ञानिक आधार — सत्यव्रत विद्यालङ्कार
१०. जल चिकित्सा — फादर सेब० क्नाइप
११. अपक्व आहार द्वारा स्वास्थ्य — डा० हीरालाल
१२. अपने डाक्टर आप बनो — एन० विगमोर
१३. प्राकृतिक जीवन की ओर — अनु०-विट्ठलदास मोदी
१४. अपक्व आहार — एतर होव
१५. निराश रोगियों का मार्गदर्शक — स्वामी जगदीश्वरानन्द
१६. आरोग्य की कुञ्जी — महात्मा गान्धी
१७. ब्रह्मचर्य के अनुभव — महात्मा गान्धी
१८. ब्रह्मचर्य ही जीवन है — स्वामी शिवानन्द
१९. ब्रह्मचर्य के साधन — स्वामी ओमानन्द
२०. Hints for self culture — लाला हरदयाल एम० ए०
२१. उपवास से जीवन रक्षा — हर्बर्ट एम० शेल्टन
२२. हमारा भोजन — अनु०-धर्मचन्द सरावमो
२३. Origin of life — Gardon Rattray Taylor
२४. हम अण्डा मांस क्यों न खायें ? — ब्र० आर्य नरेश
२५. अण्डा मांस शराब — स्वामी वेदमुनि परिव्राजक
२६. सत्यार्थ प्रकाश — स्वामी दयानन्द सरस्वती
२७. संस्कार विधि — स्वामी दयानन्द सरस्वती
२८. योग के श्रेष्ठ आसन — अद्वैतानन्द सरस्वती
२९. मिट्टी के उपचार — डा० ओम्प्रकाश आनन्द
३०. चिकित्सा आलोक — ब्र० कृष्ण देव चैतन्य
३१. मनोविज्ञान तथा शिव संकल्प — स्वामी आत्मानन्द

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य के मूलभूत सिद्धान्त

१. ईश्वरोपासना

मानव जीवन का क्या उद्देश्य है ? और उस उद्देश्य की प्राप्ति में स्वास्थ्य का क्या महत्व है ? ये दो प्रश्न ही हमें विश्व की एक महान् शक्ति में विश्वास करने को बाधित करते हैं। ईश्वर ने मनुष्य को सोद्देश्य उत्पन्न किया है। और यह शरीर उसके उद्देश्य की प्राप्ति का साधन है। साधन की सार्थकता इसी में है कि वह साधक को उसके साध्य तक पहुँचा देवे। यह शरीर जीवात्मा के लौकिक व पारलौकिक मनोरथों की पूर्ति में सहायक होता है। पुनरपि शरीर का ग्रहण और त्याग जीवात्मा की अपनी इच्छा पर नहीं है। मानव जीवन में उसका जन्म, मृत्यु, सुख, दुःख उसके अपने अधिकार में नहीं हैं। फिर भी जीव इन बन्धनों में आबद्ध है। कुछ सीमा तक कर्म–कर्तृत्व मानव के अपने अधिकार में है। ईश्वर की व्यवस्थानुसार स्व–कर्म का फल भोगने को वह विवश है।

विश्व की सर्जन शक्ति को समझकर, यदि मानव अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग उसके प्राकृतिक नियमोपनियमों की परिसीमाओं में करता है, तो वह सहजतया स्व–जीवन के अन्तिम उद्देश्य की ओर उत्तरोत्तर अग्रसर होता जाता है। और उस उद्देश्य के प्राप्त्यर्थ स्वास्थ्य रक्षा को अपना परम कर्त्तव्य समझता है। क्योंकि एक स्वस्थ व्यक्ति ही लौकिक और पारमार्थिक उन्नति को प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार व्यक्ति आस्तिकता की भावना से अभिभूत होकर अपने अधिकृत कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिये विश्व की उस महान् शक्ति से प्रेरणा पाने के लिये प्रार्थना करता है।

सच्चे हृदय से की गई प्रार्थना प्रथमतः मानव के मस्तिष्क में एक परिवर्तन पैदा करती है। फिर मस्तिष्क अपनी उन भावनाओं के अनुरूप शरीर की चेष्टाओं को प्रभावित करता है। विश्व की महाशक्ति से की गई प्रार्थना हमारे हृदय और मस्तिष्क में आशा का संचार पैदा करती है। और उससे हमें अपने कर्त्तव्य की प्रेरणा प्राप्त होती है। कष्ट व पीड़ाओं की तुच्छता स्पष्ट दिखलायी देती है। उसे सहन करने की शक्ति बढ़ती है। आत्मविश्वास जागृत होकर पुरुषार्थ शक्ति का उदय होता है। प्रार्थना के ये लाभ क्या कम महत्त्व के हैं ?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो लोग प्रार्थना का ऐसा अर्थ लेते हैं कि हमने कुछ निश्चित शब्दों या वाक्यों का मन अथवा वाणी से उच्चारण किया कि तुरन्त कष्ट गायब हो गया। जैसे कि किसी विद्युत् के बटन को दबाते ही विद्युत्-दीप जल उठता है। वस्तुतः ऐसे लोग प्रार्थना के अर्थ को ही नहीं समझते हैं। प्रार्थना का अर्थ है-प्रार्थी ने प्राप्तव्य वस्तु की उपयोगिता को पूर्णतया समझ करके हृदयङ्गम कर लिया है तथा अपने पूर्ण पुरुषार्थ से उसे पाने में जुटा है। अब महाशक्ति से अपने उस लक्ष्य की प्राप्त्यर्थ वा पूर्त्यर्थ अभ्यर्थना करता है। ऐसी प्रार्थना अवश्यमेव स्वीकार्य होती है।

इन्हीं भावनाओं से प्रेरित होकर हमने अपनी पुस्तक के प्रथम अध्याय में ईश्वरोपासना पर लिखा है। हम अपने विचारों की पवित्रता और दृढ़ता के लिये तथा जीवन के सर्वोत्कृष्ट एवं प्रधानतम साधन शारीरिक स्वास्थ्य के लिये ईश्वर से सहायता चाहते हैं। हमारा दृढ़ विश्वास है कि सच्चे हृदय से की गई प्रार्थना को ईश्वर अवश्य सुनता है और वह प्रार्थी की सहायता करता है। स्व प्रार्थनानुसार प्रार्थी का पुरुषार्थ अवश्य होना चाहिये। पुरुषार्थ विहीन प्रार्थना तो प्रार्थना ही नहीं है।

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्न आसुव ॥यजु० ३०।३

हे जीवन दांता, प्राणरक्षक परमेश्वर! आप कृपा करके हमारे सब दुर्गुण, दुःख दारिद्र्य को, सब पाप, कष्ट, क्लेशों को हमसे दूर कर दीजिये; और हमें उत्तम गुण, उत्तम कर्म, उत्तम स्वभाव युक्त बनाकर सब प्रकार के सुख, सम्पन्नता, आरोग्यता तथा विद्यादि पवित्र भूषणों से भूषित कीजिये। जगत् के सभी भद्रों से हमें भर दीजिये।

ओम् तनूपा अग्नेऽसि तन्वं मे पाहि।
आयुर्दा अग्नेऽसि आयुर्मे देहि।
वर्चोदा अग्नेऽसि वर्चो मे देहि॥
ओम् अग्ने यन्मे तन्वाऽऊनं तन्म आपृण॥
पार० गृह्य० २।४।७,८॥

हे जीवन जगत् के प्रकाशक परमेश्वर! आप सम्पूर्ण जड़-चेतन जगत् के रक्षक और पालन-कर्ता हैं। कृपा करके आप मेरे भी शरीर की

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्षा कीजिये। आप ही आयु और तेज के दाता हैं, कृपा करके आप मुझे भी आरोग्यता, बल, वीर्य देकर दीर्घायु और तेजस्वी बनाईये। मेरे शरीर में जो भी न्यूनतायें, कमजोरियाँ व रुग्णतायें हैं उन्हें आप अपने कृपा–कटाक्ष से दूर कीजिये और मुझे उत्तम स्वास्थ्य के आनन्द से आनन्दित कर दीजिये। हे नाथ! आप तो सर्वान्तर्यामी रूप से मेरी सभी न्यूनताओं से परिचित हैं उन सबको आप दूर करके मुझे पूर्णता प्रदान कीजिये। धन, बल, बुद्धि आदि सभी क्षेत्रों में मुझे पूर्ण कीजिये।

ओम् तेजोऽसि तेजो मयि धेहि।
वीर्यमसि वीर्य्यं मयि धेहि।
बलमसि बलं मयि धेहि।
ओजोऽस्योजो मयि धेहि।
मन्युरसि मन्युं मयि धेहि।
सहोऽसि सहो मयि धेहि॥
(युज० १९।९)

हे परमपिता परमेश्वर! आप तेजस्वरूप हैं, मुझे भी तेजस्वी बनाईये। आप अनन्त पराक्रम युक्त हैं मुझ में भी पराक्रम धारण कराईये। आप महान् बलवान् तथा अनन्त सामर्थ्ययुक्त हैं मुझे भी सब प्रकार के बल और ओज से युक्त कीजिये। आप दुष्टों पर कोप करने वाले तथा धैर्य धारण करने वाले हैं, अनन्त सहनशील हैं, कृपा करके आप मुझे भी अपने सदृश बनाईये।

ओज, तेज, बल, वीर्य, मन्यु तथा सहनशीलता ये सभी गुण पूर्ण स्वस्थ, विवेकी, बलवान् व्यक्ति के ही आभूषण बनते हैं।

वैदिक संस्कृति से सुसंस्कृत पिता स्व–पुत्र को आशीर्वाद देता हुआ कहता है–

ओम् अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्तृतं भव।
वेदो वै पुत्र नामासि स जीव शरदः शतम्॥
(आश्व० गृह्य० १।१५।३)

हे पुत्र! तेरा शरीर पत्थर के समान कठोर, परशु के समान

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओजस्वी, शत्रु के विनाश करने में समर्थ और स्वर्ण के समान सुन्दर तेजस्वी होवे। और सौ वर्षों की लम्बी आयु तक संसार के सुखों का तुम उपभोग करो। ईश्वर की कृपा से तुम्हें सुन्दर स्वास्थ्य और सुदृढ़ शरीर तथा शत वर्ष की दीर्घायु प्राप्त हो।

हे जगन्नियन्ता! तेरी अपार कृपा से मुझे यह देव दुर्लभ, स्वर्ण के समान सुन्दर, सर्वाङ्गपूर्ण मानव देह प्राप्त हुई है। मेरे ज्ञान और शक्तियाँ स्वल्प हैं। हे नाथ! मुझे उस पथ पर चलाईये जिससे मैं निज जीवन की आयु और स्वास्थ्य की रक्षा करता हुआ जीवन के परम उद्देश्य को प्राप्त कर सकूँ।

हे पिता! जग में पग-पग पर प्रलोभन हैं। मेरा मन चंचल है। इन्द्रियाँ बहिर्मुखी हैं। हे पूषन्! मुझे विवेक विज्ञान देकर इस जगत् की चकाचौंध से बचाईये। और सत्य धर्म के दर्शन कराईये। मेरे मन और प्राण को अधर्माचरण से रोककर धर्माचरण में प्रेरित कीजिये। मुझ में वह शक्ति-धारण कराईये जिससे मैं अपने मन, वाणी और शरीर से कदाचित् कोई पाप न करूँ। मेरे शरीर में शक्ति हो, सौन्दर्य हो किन्तु कभी अभिमान न करूँ। शक्तियों का कभी दुरुपयोग न करूँ। आलसी बनकर भी न पड़ा रहूँ। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इस पुरुषार्थ-चतुष्टय की सिद्ध्यर्थ ही मेरे बल, बुद्धि का उपयोग हो। दैहिक, दैविक और भौतिक तीनों प्रकार की शान्ति हमें इस जीवन में प्रदान कराईये।

ऐसा समझना कि ईश्वर जिससे प्यार करता है उसके लिये रोग और कष्ट भेजता है, बहुत बड़ी और दुःखद भूल है। यह तो ईश्वर का अपनी प्रजा के प्रति किये गए असीम प्यार का मजाक उड़ाना है। सारे दुःख और कष्ट मानव के प्रकृति पथ से हटने और अपने जीवन को प्राकृतिक नियमों के विपरीत चलाने के अपराध का परिणाम हैं। ईश्वर हमें प्राकृतिक जीवन जीने के लिये प्रेरित करता है। प्राकृतिक नियमों के अनुसार आहार-विहार का आचरण ईश्वरोपासना का ही अङ्ग है। प्रातःजागरण के बिना प्रातःकाल की उपासना के लाभ नहीं मिल सकते। अतः प्रार्थना रचनात्मक व क्रियात्मक होनी चाहिए।

---- o ----

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. प्रातःजागरण

विश्व के इतिहास में आज तक विना बीज के कोई फसल उगती हुई नहीं देखी गई। किसी भी जीवन के उत्कर्ष के लिये कुछ मूल आधार चाहिये। जीवन एक-एक दिन और रात्रि के योग से बनता है। शतवर्ष की लम्बी आयु का अर्थ है ३६,५०० दिन और ३६,५०० रात्रियों का संकलन। जो व्यक्ति स्व-जीवन का उत्थान चाहता है, वह कौन सा प्रथम कदम उठावे, जिससे उसके जीवन का उत्थान हो। जो निज जीवन में उत्थान देखना चाहता है, उसे जीवन के आने वाले प्रत्येक दिन में उत्थान खोजना चाहिये। जीवन के उत्थान का अर्थ है प्रत्येक दिन का उत्थान। जिस व्यक्ति ने जीवन के अर्धभाग में श्रम से कुछ पाया हो और शेष अर्धभाग में उसे लुटाया हो तो उसके पल्ले क्या पड़ेगा ? राई के समान मिट्टी का एक-एक कण जोड़ते-जोड़ते दीमक मिट्टी का पहाड़ खड़ा कर देती है। इसी प्रकार निज जीवन का उत्थान चाहने वाला व्यक्ति अपने जीवन के प्रत्येक दिन में उत्थान की ओर कदम बढ़ाता है और उत्थान की ओर उठता हुआ एक-एक कदम, एक दिन व्यक्ति को उत्थान के शिखर पर पहुँचा देता है। जिसे देखकर अन्य व्यक्ति विस्मय में पड़ जाते हैं। उत्थान का शिखर, जो मानव की कल्पना में एक दिन बहुत दूर था आज वह उसे अपने चरणों से रोंदता है।

जो भी व्यक्ति चाहे कोई गृहस्थ हो वा ब्रह्मचारी, साधक वा संन्यासी, स्व-जीवन में ऊपर उठना चाहता है, उन्नति करना चाहता है, उसे सर्वप्रथम प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त में उठने का अभ्यास करना चाहिये। यह जीवन के उत्थान की अनिवार्य शर्त है। रात और दिन के मध्य में आने वाला प्रत्येक उषा काल मानव को जीवन के उत्थान का सन्देश देता है। वे लोग अहोभाग्य वाले हैं, जो उसका सन्देश पाने के लिये सदैव तैयार रहते हैं। प्रातरुत्थायी व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफल होते हैं। धन, बल, बुद्धि, आरोग्यता और संसार के समस्त भोग ऐश्वर्य इसी प्रकार के श्रीमान् देव पुरुषों के घर पर निवास करते हैं। भाग्यहीन व्यक्ति प्रतिदिन आने वाले जीवन उत्थान के इस स्वर्णिम अवसर को चारपाई में पड़े-पड़े नष्ट कर देते हैं। ऐसे पापी व्यक्ति का सभी सद्‌गुण एक-एक करके साथ छोड़कर भाग जाते हैं। सचमुच जिस व्यक्ति में निज जीवन के उत्थान की भावना ही नहीं वहाँ सद्‌गुण क्या करेंगे। ऐसे व्यक्ति मृग के समान भार रूप होकर धरती पर विचरण करते हैं। अन्न को खाकर भी वे उसे नष्ट ही करते हैं। और अपने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन तथा कुल को अपने पुत्र-पौत्रों के सहित दिनानुदिन रसातल को पहुँचाते हैं।

हम लोग प्रातः जागरण की बात को एक साधारण सी बात समझकर यूँ ही अनसुनी कर देते हैं किन्तु आप एक बार इसका अभ्यास करके देखिये। यह एक ही गुण अपने अभ्यासी को महापुरुष बना देता है। मनुज को देव बना देता है। प्राचीन काल के हों वा आधुनिक काल के सभी महापुरुष प्रातःकाल में उठने के अभ्यासी हुए हैं। इसके विना मानव ऊपर उठ ही नहीं सकता। छोटी सी दिखलायी देने वाली बात का अत्यधिक महत्त्व और बहुत विशाल फल है। प्रातः उठने वाले अपने तेज की रक्षा करते हैं। और दिनानुदिन अधिक तेजस्वी होते जाते हैं।

कुछ व्यक्ति जिन्होंने निज जीवन का लौकिक या पारलौकिक कोई उद्देश्य ही नहीं बनाया होता उनका जीवन खाना, सोना, विषयों के कीचड़ में पड़े रहना तथा सिर पर आ पड़े कार्य को किसी तरह पूरा करना, बाल बच्चे पैदा कर लेना और बच्चों के साथ बालवत् जीवन निर्वाह कर लेना इन सभी कार्यों तक ही सीमित होता है। ऐसे लोगों को यदि प्रातः उठने की बात समझायी जाती है तो वे लोग प्रश्न करते हैं कि प्रातः उठकर क्या करें ? मानो कि उनके विचार में उस समय का सोने की अपेक्षा अन्य कोई बेहतरीन उपयोग ही नहीं है। जिन लोगों में अपने जीवन के उत्थान की कोई कामना तथा इच्छाशक्ति नहीं, उन्हें तो न जाने किस कारण से यह मनुष्य का शरीर मिल गया। वे ईश्वर की ओर से या माता-पिता की ओर से जीवन के जो अच्छे या बुरे साधन प्राप्त हैं उन्हीं में किसी तरह से जीवन पूरा करना चाहते हैं। उनके जीवन में मानव जीवन की कोई वरीयता नहीं या इसकी उन्हें अभी कोई सुध ही नहीं है। ऐसे मानव, जीवन के उत्थान शिखर से अभी सैंकड़ों योजन दूर हैं। उनके लिये उपदेश का कोई महत्त्व ही नहीं है। उनके अन्तर्मानस में तमोगुण अत्यधिक प्रबल होने से वे किसी भी सुप्रेरणा या उपदेश के ग्रहण करने की स्थिति में नहीं हैं। ऐसे व्यक्ति जागते हुए भी सो रहे हैं और जीवित होते हुए भी जड़वत् हैं। ऐसे लोगों के लिए ही कहा गया है- पश्यन्नपि न पश्यति मूढः----। किन्तु जिन लोगों के हृदय में निज जीवन के कल्याण की भावना जगी है और उत्थान की ओर कदम बढ़ाने का जिन्होंने संकल्प लिया है, ऐसे व्यक्तियों के लिये मनु महाराज प्रातःकाल के कर्त्तव्य कर्मों का इस प्रकार निर्देश करते हैं-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत्।
कायक्लेशांश्च तन्मूलान् वेदतत्त्वार्थमेव च॥ (मनु ४।९२)

अर्थात्– ब्राह्ममुहूर्त में उठकर अपने कर्त्तव्य कर्म, धर्म और अर्थ का चिन्तन करना चाहिये। निज शरीर के रोग, उनके कारण और निवारण का विचार करना चाहिये। तथा ज्ञान के मूल स्रोत वेद का स्वाध्याय करना चाहिये। आत्मा–परमात्मा का चिन्तन और उनका ध्यान करना चाहिये। साराँश यह है कि व्यक्ति ने निज वर्णानुसार जीवन का जो क्षेत्र चुना है उसमें प्रगति की योजनाएँ उषाकाल में ही उठकर तैयार कर लेनी चाहियें और सूर्योदय से पूर्व ही कर्त्तव्य कर्म के लिए सन्नद्ध हो जाना चाहिये।

ब्राह्ममुहूर्त का सेवन बहुमुखी प्रतिभा का देने वाला प्रगति पथ है। जीवन के उत्थान और विकास का यह प्रथम चरण है। प्रातःकाल का समय अमृत वेला है। उसे नष्ट करने वाला व्यक्ति स्वयमेव नष्ट हो जाता है। सूर्य अपनी शक्ति से सोने वाले व्यक्ति के तेज को हर लेता है। नित्य प्रति वह अपने तेज को क्षीण करता हुआ विनाश के मुख में प्रवेश करता है। दूसरी ओर जागने वाले व्यक्ति में, सूर्य की ब्राह्ममुहूर्त में आने वाली सूक्ष्म ultra voilet rays जीवनी शक्तियों को लेकर जो इस पृथ्वी पर अवतरित होती हैं; नवजीवन का संचार करती हैं। उस व्यक्ति के रोगों का क्षय और आयु की वृद्धि होती है। बुद्धि विशद तथा शरीर स्वस्थ होता है। इन्हीं सब कारणों से ब्राह्ममुहूर्त का भ्रमण, सूर्योदय पश्चात् के भ्रमण की अपेक्षा शतगुणा अधिक गुणकारी है। ब्राह्ममुहूर्त में जागने से महापुण्यों का उदय होता है। भाग्यहीन व्यक्ति अपनी उन्नति के प्रतिदिन आने वाले इस स्वर्णमय अवसर को अपने आलस्य और प्रमाद में ही खो देता है।

दिन–रात के चौबीस घण्टों में ब्राह्ममुहूर्त का समय सर्वश्रेष्ठ होता है। समय अपने में एक अमूल्य निधि है। और ब्राह्ममुहूर्त, समय का वह सर्वोत्कृष्ट भाग है जिसमें मनुष्य की उन्नति के बीज छिपे हुए हैं। जो मनुष्य उस काल में जागकर ईश्वर का ध्यान और सद्गुणों का चिन्तन करता है उसकी विजय अवश्यम्भावी है। ब्रह्मदर्शन का यही एक समय है। मानो सूर्योदय के पश्चात् ब्रह्मदर्शन के द्वार बन्द हो जाते हैं और माया के पट खुलते हैं। इसीलिये योगी लोग रात्रि के तीसरे प्रहर में ही जागकर लम्बी देर तक उस ईश्वर का ध्यान करते हैं। अतः स्वास्थ्य प्रेमी जन ब्राह्ममुहूर्त में उठकर भ्रमण, प्राणायाम, स्वच्छ वायु का सेवन, तेल–मालिश, और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शीतल–जल का स्नान आदि स्वास्थ्योपयोगी साधनों का अनुष्ठान करें, विद्याभ्यासी स्वाध्याय करें, साधक ध्यान करें, ब्रह्मचारी लोग अध्ययन करें, गृहस्थी धर्म और अर्थ का चिन्तन करें, शासक और उपदेशक राष्ट्रीय समस्याओं, उनके समाधान तथा जनहित के साधनोपसाधनों पर विचार करें।

प्रत्येक स्वास्थ्य प्रेमी जन को चाहिये कि वह अपने स्वास्थ्य को सुन्दर तथा जीवन को उन्नत करने के लिये आज से ही कृतसंकल्प हो और प्रातःजागरण को अपने जीवन का अंग बना ले। संसार की ऐसी कोई भी वस्तु नहीं जिसे प्रातरुत्थायी दृढ़संकल्पी व्यक्ति प्राप्त न कर सके।

प्रातःकाल उठकर आप महात्मा गान्धी के प्रिय भजन को गुनगुनाईये। अपनी मधुर ध्वनि से अपने बालकों और प्रियजनों को जगाईये। जागृति का दीप जलाकर निद्रा के तमस् को दूर भगाईये। प्रसन्न होकर हृदय से मुस्कराईये और गाईये–

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो जागत हैं सो पावत हैं, जो सोवत हैं वो खोवत हैं॥१॥
टुक नींद से अँखियाँ खोल जरा और अपने प्रभु में ध्यान लगा।
यह प्रीत करन की रीत नहीं, प्रभु जागत हैं तू सोवत है॥२॥
जो कल करना सो अज कर ले, जो अज करना सो अब कर ले।
जब चिड़ियों ने चुग खेत लिया फिर पछताये क्या होवत है॥३॥
नादान भुगत करनी अपनी ए पापी! पाप में चैन कहाँ।
जब पाप की गठरी सीस धरी फिर सीस पकड़ क्यों रोवत है॥४॥

इसी प्रकार का एक और सुन्दर भजन है जो मानव को प्रातः-जागरण की प्रेरणा देता है–

वेला अमृत गया आलसी सो रहा बन अभागा।
साथी सारे जगे तू न जागा॥

झोलियाँ भर रहे भाग्य वाले, लाखों पतितों ने जीवन सम्भाले।
रंक राजा बने, भक्तिरस में सने कष्ट भागा॥
साथी सारे जगे --------------॥१॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्म उत्तम थे नर तन जो पाया, आलसी बनके हीरा लुटाया।
उल्टी हो गई मति, करके अपनी क्षति रोने लागा॥
साथी सारे जगे------------------॥२॥
धर्म वेदों का देखा न भाला, वेला अमृत गया ना सम्भाला।
सौदा घाटे का कर, हाथ माथे पे धर रोने लागा॥
साथी सारे जगे------------------॥३॥
बन्दे! तूने न कुछ भी विचारा, सिर से ऋषियों का ऋण ना उतारा।
हंस का रूप था, पानी गन्दला पिया, बनके कागा॥
साथी सारे जगे------------------॥४॥

प्रातःकाल एक बार उठने के बाद भी तमोगुण कहीं आपका पीछा तो नहीं करता। वह आप को दोबारा सो जाने के लिये मजबूर तो नहीं करता। वह आप को, नींद न पूरी होने और थकान आदि के नाना प्रकार के प्रलोभन देकर आपको कर्त्तव्य पथ से च्युत करना चाहता है। आप उसे अपनी संगीतमयी भाषा में जवाब दीजिये–

जब जाग गये फिर सोना क्या रे॥
जो नर तन देवन को दुर्लभ,
सो पाया अब रोना क्या रे॥१॥
हीरा हाथ अमोलक आया,
काँच भाव में खोना क्या रे॥२॥
ईश मिलन का यही समय है,
बीत गया फिर होना क्या रे॥३॥
खेत बीज सब तैयार किये हैं
जब समय रहे नहीं बोना क्या रे॥४॥

प्रातःजागरण का गुण अत्यन्त महत्त्व का है किन्तु इस को जीवन में स्थायी रूप से धारण करने के लिये प्रबल इच्छाशक्ति के साथ कई मास के निरन्तर श्रद्धापूर्वक अभ्यास की आवश्यकता है। जीवन में स्थायी होने के बाद यह गुण अपने अभ्यासी को दिव्य जीवन प्रदान करता है। स्वास्थ्य प्रेमी प्रत्येक व्यक्ति को जो अपने जीवन का उत्थान चाहता है इसे श्रद्धापूर्वक निज जीवन में धारण करना चाहिये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. प्रातः उठने के बाद नित्य के कर्त्तव्य-कर्म

चक्षुःस्नान

चक्षु हमारे शरीर का बहुत महत्त्वपूर्ण अङ्ग है। चक्षु की ज्योति के क्षय हो जाने पर मानव के लिये सारे संसार में मानो अन्धकार छा जाता है। अतः शरीर रक्षा के साथ आँखों की रक्षा करना हमारा मुख्य कर्त्तव्य है। प्रातःकाल उठकर ईश्वर चिन्तन के पश्चात् शुद्ध जल से चक्षुःस्नान कीजिये। इसका प्रकार यह है कि मुख को पूरा जल से भरकर रखें और आँखों में जल के छींटे लगायें। बीस से पच्चीस बार तक दोनों आँखों में बारी-बारी से छींटे दें। बाद में मुख के पानी का कुल्ला कर दें। इस क्रिया से आँखों को अन्दर और बाहर दोनों ओर से ठण्डक मिलती है। आँखों का मल और उष्णता दूर होकर नेत्रज्योति बढ़ती है। नेत्रों के समस्त विकार इस क्रिया के नित्य प्रयोग से दूर होते हैं।

यह चक्षुःस्नान दूसरे प्रकार से भी लिया जा सकता है। मुख को पानी से पूरा भरकर पानी की भरी हुई बाल्टी में मुख को डुबोवें और गर्दन को दायें बायें घुमायें। आँखों को खुली रखें। फिर गर्दन को स्थिर करके आँखों की पुतलियों को इधर-उधर घुमाएं। बाद में मुख के पानी का कुल्ला कर दें। इस क्रिया से आँखों के दोष दूर होकर नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। इस क्रिया को दो-तीन बार दोहरायें।

उषःपान

चक्षुःस्नान के पश्चात् अच्छी प्रकार उँगली से दाँत, जिह्वा, तालु और कण्ठ को साफ करके जलपान करना चाहिये। अगर मुख को साफ किये बिना जल पिया जायेगा तो कफ आदि मल जल के साथ पेट में जाकर रोगोत्पत्ति का कारण बन जाते हैं। इसलिये उषःपान से पूर्व मुख आदि की सफाई का अवश्य ही ध्यान रखना चाहिये। उषःपान करने के पश्चात् मूत्र त्याग के लिये जायें। यदि शौच की शंका नहीं हुई है तो थोड़ा इधर-उधर घूमिये, शरीर को कुछ हिलाईये। जिन्हें कब्ज रहता है, वे उषःपान के जल में निम्बू निचोड़ कर प्रयोग करें या एक चम्मच त्रिफला रात्रि में पानी में भिगोकर रखें। प्रातः उसे मसल छानकर प्रयोग करें। शरीर का हल्की सी मात्रा में, पेट के व्यायाम आसन आदि करें या रात्रि में सोते समय पेट पर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कपड़े की गीली पट्टी बाँधकर सोवें, सवेरे समय से पेट साफ होने लगेगा।

अनुपम नुस्खा– रात्रि में सोते समय अपनी आयु के अनुसार त्रिफला चूर्ण लेकर उसमें ४–५ बूँद बादाम रोगन तथा एक चम्मच शहद मिलाकर चटनी सी बना लें और इसे चाट कर ऊपर से शीतोष्ण दूध पी लें। जैसे किसी व्यक्ति की आयु ५० वर्ष है तो वह ५० रत्ती, किसी की आयु ६० वर्ष है तो वह ६० रत्ती त्रिफला चूर्ण लेवे। त्रिफला चूर्ण में हरड़, बहेड़ा और आँवला क्रमशः १:२:३ के अनुपात में मिलावें। यह नुस्खा हृदय, मस्तिष्क, आँतें, आमाशय, फेफड़े, जिगर, आदि शरीर के सभी अवयवों के लिये अत्यन्त लाभकारी है। इसके सतत प्रयोग से शरीर के सैकड़ों रोग दूर हो जाते हैं। ओषधि के प्रयोगकर्ता को अपने आहार–विहार आदि के दोषों पर विचार करके उनको दूर करना चाहिये। ओषधि के साथ यदि व्यक्ति कुपथ्य आदि का प्रयोग जारी रखता है तो ओषध अपना पूरा गुण धर्म नहीं दिखलाती। इस ओषध के प्रयोग से प्रातः पेट साफ होने लगेगा।

उषःपान के लाभ

आयुर्वेद के ग्रन्थों में उषःपान के अनेक लाभ गिनाये हैं। बवासीर, सूजन, संग्रहणी, ज्वर, पेट के रोग, बुढ़ापा, कुष्ठ, मोटापा, मूत्रघात, रक्तपित्त, आँख, कान, नासिका, सिर, कमर, गले आदि के रोग, वात, पित्त, कफ और व्रण आदि जन्य सभी रोग उषःपान से दूर होते हैं।

धन्वन्तरि–संहिता में लिखा है–

सवितुः समुदयकाले प्रसृतीः सलिलस्य पिबेदष्टौ।
रोगजरापरिमुक्तो जीवेद्वत्सरशतं साग्रम्॥

जो व्यक्ति सूर्योदय से पूर्व आठ अञ्जलि जल पीता है, वह रोग और बुढ़ापे से मुक्त होकर शतवर्ष से भी अधिक आयु को प्राप्त करता है।

उषःपान मुख तथा नासिका दोनों प्रकार से किया जाता है। मुख से किया जाये या नासिका से दोनों ही प्रकार से यह उषःपान अमृत तुल्य लाभ करता है। प्रत्येक स्वास्थ्य प्रेमी व्यक्ति को इस का लाभ लेना चाहिये। पीने वाले जल की मात्रा को प्रत्येक व्यक्ति अपने शरीर की आवश्यकता तथा अभिरुचि के अनुसार निर्धारित कर सकता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शौच-निवृत्ति

उषःपान के बाद मानव का अगला कर्त्तव्य है-शौच से निवृत होना। जिन्हें कब्ज़ की शिकायत नहीं रहती, वे उषःपान के तुरन्त बाद शौच के लिये जायें। आरोग्याभिलाषी को ऐसी आदत बनानी चाहिये कि उषःपान के बाद ही प्रतिदिन शौच से निवृत्त हो लिया करें। किन्तु जिन्हें कब्ज़ रहता है वे उपर्युक्त साधनों का अवलम्बन करें, उन्हें भी प्रातः पेट साफ होने लगेगा। जो लोग आलस्य में प्रातः चारपाई नहीं छोड़ना चाहते ऐसे ही लोगों से कब्जियत की मैत्री होती है। और फिर कब्ज़ अनेक रोगों को जन्म देती है। इसलिये जाड़ा हो या बरसात प्रातः शौच जाने में विलम्ब नहीं करना चाहिये। मल के वेग को रोकने से आँतों में उष्णता बढ़ जाती है। जिसके कारण मल आँतों में ही सूखने लगता है। आँतें मल के दूषित अंश को भी चूस लेती हैं। जिससे रक्त भी दूषित हो जाता है। आँतों की उष्णता से नेत्र ज्योति क्षीण हो जाती है। भूख बन्द होकर, भोजन में अरुचि तथा शिर में पीड़ा रहने लगती है। पेट में गैस बनना, बवासीर, भगन्दर आदि रोगों का मूलतः शौच समय से न जाना ही कारण है।

सुश्रुत में महर्षि धन्वन्तरि ने प्रातः शौच-निवृत्ति के लाभों का इस प्रकार उल्लेख किया है-

आयुष्यमुषसि प्रोक्तं मलादीनां विसर्जनम्।
तदन्त्रकूजनाध्मानोदरगौरववारणम् ॥

अर्थात्- उषाकाल में मलमूत्र के त्याग से आयु की वृद्धि होती है। आँतों का गुड़गुड़ाना, पेट का फूलना और भारीपन आदि रोग दूर होते हैं।

सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिताः मलाः।

अर्थात् संसार के समस्त रोगों का कारण कुपित मल है। इसलिये स्वास्थ्य प्रेमी प्रत्येक विज्ञ पुरुष को चाहिये कि मल-त्याग में कभी आलस्य न करे।

शौच के समय बल लगाना, कींचना, खांसना आदि बहुत हानिकारक हैं। शौच के बाद मल द्वार को पर्याप्त जल से बायें हाथ की प्रथमा अँगुली द्वारा भली प्रकार साफ कर देना चाहिये। जो लोग थोड़े से जल से ही मल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वार को केवल बाहर से चुपड़ देते हैं वे महा अज्ञानी हैं। ऐसे ही लोग नासूर, भगन्दर, बवासीर आदि भयंकर रोगों के शिकार होते हैं।

महर्षि पतञ्जलि का कथन है–

मेध्यं पवित्रमायुष्यमलक्ष्मीकलिनाशनम्।
पादयोर्मलमार्गाणां शौचाधानमभीक्ष्णशः॥
(चरक सूत्रस्थानम् ५।९५)

अर्थात् पैरों और मल मार्गों को जल से बार–बार साफ़ करने से बुद्धि की वृद्धि, पवित्रता और आयु की प्राप्ति होती है। तथा दरिद्रता, पाप और रोगों का नाश होता है।

शौच शुद्धि के पश्चात् दोनों हाथों को मिट्टी तथा जल से अच्छी तरह साफ़ कर लेना चाहिए ताकि दुर्गन्ध समाप्त हो जाए। शौच के समय ही प्रतिदिन मूत्रेन्द्रिय की शुद्धि भी कर लेनी चाहिए। मल साफ करते समय मूत्रेन्द्रिय को कभी अधिक नहीं रगड़ना चाहिए। विचारों को पवित्र रखना चाहिए। शुद्धि करते समय कामुकता का मलिन विचार मन को स्पर्श न करने पावे। मन में ओम् ही ओम् का जाप करते जाईए। मल मार्गों की शुद्धि के लिए तथा चक्षुःस्नान के लिए भी सदा शीतल जल का ही प्रयोग करना चाहिए।

दातौन

शौचादि से निवृत्ति के बाद दांतों की सफाई प्रत्येक व्यक्ति का मुख्य कर्तव्य है। दांतों का स्वास्थ्य के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। स्वस्थ दांत ही सुन्दर स्वास्थ्य की रक्षा करते हैं। स्वस्थ और सुन्दर दांत सुदृढ़ स्वास्थ्य का लक्षण हैं। दांत के विना आंत भी अपना कार्य बन्द कर देती है। वृद्धावस्था में दांत रहित मुख कुरूप बन जाता है। तथा आंतों की पाचन क्रिया ठीक न होने से स्वास्थ्य गिर जाता है। अतः स्वास्थ्यप्रेमी व्यक्ति को अपने दांतों की सफाई की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए।

मुख, दांत तथा कण्ठ की शुद्धि के लिए दातौन का प्रयोग अत्यन्त श्रेष्ठ है। दातौन दांतों को शुद्ध तो करती ही है उन्हें मजबूत भी बनाती है। हिलते हुए दांतों को सुदृढ़ करती है और उन्हें रोगों से बचाती है। पाचक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंगों को शक्ति देती है। भूख बढ़ाती है। पाचक रसों का निर्माण कराती है। कण्ठ को शुद्ध करती है और तीनों दोषों का शमन करती है। दातौन कषैले, कटु तथा तिक्त रस वाले वृक्षों की लेनी चाहिए, जिसकी चबा कर कूची बन सके। उससे एक-एक दांत तथा मसूड़ों की अच्छी प्रकार सफाई करनी चाहिए। दातौन दोनों समय करनी चाहिए। इसके नित्य प्रयोग से पेट के भी अनेक रोग शान्त हो जाते हैं। दांतों की उपेक्षा करना अपने स्वास्थ्य की उपेक्षा करना है। दातौन के लिए नीम, बबूल, खदिर, तेजबल, मौलसरी, पीपल, बड़, अर्जुन, महुआ, करंज, आदि उत्तम हैं।

दातौन करते समय जल साथ में लेकर किसी एक स्थान पर बैठकर दातौन करनी चाहिए। बीच-बीच में दातौन को शुद्ध जल से धोते जाएं। दातौन से जिह्वा को भी साफ़ कर लेना चाहिए। अन्त में कुल्ली करके मुख को अच्छी प्रकार साफ कर लेना चाहिए। मुख में दातौन डालकर इधर-उधर घूमना तथा अन्यों से बातें करना अशिष्ट व्यवहार है। जहाँ प्रयास करने पर भी दातौन सुलभ न हो तो ब्रुश या मंजन का ही प्रयोग कर सकते हैं, किन्तु जो लाभ दातौन से हैं वे मंजन वा पेस्ट से नहीं हैं।

दांतों की रक्षा के लिए गर्म जल, गर्म दूध, चाय, काफी, गर्म भोजन, अधिक मीठा, बर्फ़ीला पानी, पान, तम्बाकू आदि का प्रयोग बहुत हानिकारक है। भोजन खूब चबा-चबाकर करना चाहिए और भोजन के बाद मुख और दांतों को भली प्रकार साफ कर लेना चाहिए। दांतों में तिनके डालते रहना दांत और मसूड़ों के लिए भयावह है।

---o---

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. व्यायाम

स्वास्थ्य के निर्माण तथा उसकी रक्षा के लिये व्यायाम एक अति महत्त्वपूर्ण साधन है। व्यायाम के विना स्वास्थ्यरक्षा नहीं हो सकती। महर्षि धन्वन्तरि का अमर सन्देश है–

आरोग्यं चापि परमं व्यायामादुपजायते।

अर्थात्– परम आरोग्य और आदर्श स्वास्थ्य की प्राप्ति व्यायाम से ही होती है।

व्यायाम से शरीर की वृद्धि होती है। शरीर के सब अङ्ग समुचित रूप से विकसित होकर सुडौल बनते हैं। शरीर की कान्ति और पाचन–शक्ति बढ़ती है। आलस्य दूर होता है। शरीर दृढ़ और हल्का होकर स्फूर्ति आती है। वात–पित्त और कफ तीनों दोषों का शोधन होकर उनका शमन होता है। शरीर की श्रम शक्ति बढ़ती है। थकान दूर होती है। सर्दी–गर्मी आदि के सहन करने की शक्ति उत्पन्न होती है। मोटापे को दूर करने के लिये व्यायाम से बढ़कर अन्य कोई उपाय नहीं है। व्यायामशील मनुष्य से रोग दूर भाग जाते हैं। द्वेष करनेवाला सदा व्यायामशील व्यक्ति से भयभीत रहता है। व्यायामी व्यक्ति के शरीर के हाड़, मांस आदि सब धातुएं स्थिर होती हैं। उसके ऊपर बुढ़ापा सहसा आक्रमण नहीं करता।

वयोरूपगुणैर्हीनमपि कुर्यात् सुदर्शनम्।

अर्थात् व्यायाम, जवानी, सुन्दरता और वीरता आदि गुणों से रहित व्यक्ति को भी सुन्दरता प्रदान करता है।

इतने अद्भुत लाभ व्यायाम के हैं। फिर भी व्यायाम की उपेक्षा करना अपने स्वास्थ्य और जीवन के प्रति घोर अन्याय है। व्याकरणशास्त्र के महान् विद्वान् श्री वामन अपने ग्रन्थ काशिका (का० ६।१।६३) में एक वचन उद्धृत करते हैं–

व्यायामक्षुण्णगात्रस्य पद्भ्यामुद्वर्तितस्य च।
व्याधयो नोपसर्पन्ति वैनतेयमिवोरगाः॥

(तुलना–सुश्रुत चि० २४।४२)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात्–व्यायाम से पुष्ट शरीर और पैरों से नित्य ही मालिश कराने वाले व्यक्ति के पास व्याधियाँ वैसे ही नहीं आतीं जैसे कि गरुड़ के पास भय से सर्प नहीं आते।

महर्षि धन्वन्तरि ने लिखा है–

व्यायामं कुर्वतो नित्यं विरुद्धमपि भोजनम्।
विदग्धमविदग्धं वा निर्दोषं परिपच्यते॥

अर्थात्– व्यायामशील व्यक्ति अपनी प्रकृति के विरुद्ध भोजन, गरिष्ठ तथा कच्चे भोजन को भी पचा लेता है। वह उसको कोई हानि नहीं करता। अपचन की शिकायत उसे नहीं होती। अजीर्ण, मन्दाग्नि, कब्ज आदि रोग उसे नहीं होते। ये रोग उन्हीं आलसी लोगों से मैत्री करते हैं जो व्यायाम नहीं करते। सब रोगों की महौषध व्यायाम ही है। जीवन में परम आरोग्य का आनन्द व्यायामशील व्यक्ति ही लूटता है।

व्यायाम के अनेक प्रकार हो सकते हैं। परन्तु आरोग्य की दृष्टि से योगासन और प्रातःकाल का भ्रमण सर्वोत्तम व्यायाम हैं। योगासनों में वह शक्ति है जिससे वे शरीर की नस नाड़ियों में पड़े हुए स्थूल व सूक्ष्म सभी प्रकार के मलों को निकाल बाहर करते हैं। योगासनों के अभ्यास से शरीर का प्रत्येक अङ्ग–प्रत्यङ्ग सशक्त होकर अपने कार्य को भली प्रकार करने के योग्य होता है। भोजन का परिपाक ठीक प्रकार से होकर मल समय पर विसर्जित हो जाते हैं। मल–मूत्रादि मलों के समय पर सही ढंग से विसर्जित होने से शरीर की धातुएँ निर्मल होकर शरीर कान्तियुक्त हो जाता है। शुद्ध रक्त शरीर और मस्तिष्क को प्राण देता है। बाल, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सभी को पूर्ण आरोग्यता देने के लिये योगासन का व्यायाम सर्वोत्तम है। किन्तु जो युवक–युवतियाँ शरीर को अधिकाधिक बलवान् बनाना चाहते हैं, उन्हें दौड़, दण्ड–बैठक, कुस्ती, डम्बल आदि व्यायामों का भी अभ्यास करना चाहिए। आधुनिक नये–नये यन्त्र जो शरीर के विभिन्न अङ्गों के विकास के लिए निर्मित हुए हैं, स्वास्थ्य के लिये बहुत उपयोगी नहीं हैं। उत्तम व्यायाम वही कहला सकता है जो शरीर को आरोग्य, सुडौल तथा बलवान् बनाता है। ये तीनों गुण केवल योगासनों में ही मिलते हैं। दण्ड बैठक आदि शरीर को बलवान् बनाते हैं। आधुनिक यन्त्र शरीर को सुडौल बनाते हैं किन्तु इनसे शरीर को आरोग्यता नहीं मिलती। अर्थ की दृष्टि से भी इनमें फिजूल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खर्च ही है। जिज्ञासुओं के लिये हम यहाँ योग के कुछ मुख्य आसनों का उल्लेख करना चाहते हैं।

१. वज्रासन

इस आसन में दोनों पैरों को मोड़कर इस प्रकार बैठ जाते हैं कि पैरों की एड़ियाँ नितम्बों के नीचे रहें। दोनों पैरों के अँगूठे मिले हों और एड़ियाँ फैली हों। नितम्ब तलवों के ऊपर टिकाकर बैठ जायें। सामने से घुटने मिलाकर दोनों हथेलियाँ उलटी करके घुटने पर टिका लें। श्वास अपनी स्वाभाविक गति से चलता रहे। यथेष्ट समयानुसार इसका अभ्यास किया जा सकता है।

लाभ–

(१) जठराग्नि तीव्र होकर पाचन क्रिया में सुधार होता है।

(२) साइटिका तथा पेप्टिक अल्सर की व्याधियों में लाभ करता है।

(३) वस्ति–प्रदेश तथा मूत्राशय को पुष्टि प्रदान करता है।

२. धनुरासन

पेट के बल लेटकर पैरों को घुटनों से मोड़ लेते हैं और दोनों हाथों को पीछे की ओर ले जाकर, टखनों को पकड़ लेते हैं। श्वास अन्दर भरकर सिर, छाती तथा जंघाओं को तानते हुए ऊपर को उठावें। दोनों हाथ तान कर रखें। शरीर का सारा भार पेट पर रहे। श्वास को छोड़ते हुए पुनः नीचे आ जायें। इसकी तीन–चार बार आवृत्ति करें। हर्निया, पेप्टिक अल्सर, आँतों की टी०बी० तथा थाइराइड ग्रन्थि के अति रुग्ण व्यक्ति इस आसन को न करें।

लाभ–

(१)सम्पूर्ण मेरुदण्ड तथा मेरुदण्ड से निकलने वाले स्नायु सबल होते हैं।

(२) पेट में वायु–विकार, पुरानी कोष्ठबद्धता, गर्भाशय तथा मासिक–धर्म के विकारों में लाभकारी है।

(३) पीठ और कमर दर्द तथा मेरुदण्ड को लचीला बनाता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) छाती, फेफड़े, कन्धे, गुर्दे आदि अङ्गों को आरोग्यता प्रदान करता है।

(५) कूल्हों तथा नितम्बों की चर्बी घटती है।

३. पश्चिमोत्तानासन

इस की विधि यह है कि पैरों को सामने फैलाकर बैठ जायें। एड़ियाँ मिली हों। दोनों हाथों से पैर के अँगूठों को पकड़ लें। श्वास को छोड़ते हुए गर्दन को नीचे ले जायें तथा मस्तक को घुटनों पर टिका देवें। जब श्वास लें तो ऊपर को सीधे बैठ जायें। इसका कई बार अभ्यास करें। नीचे जाते हुए कुहनियाँ जमीन तक ले जाएँ और नाक को घुटनों के बीच रखें।

लाभ–

(१) मेरुदण्ड लचीला होता है तथा स्नायुमण्डल शक्तिशाली बनता है।

(२) अपच, कब्ज, बहुमूत्र, पेट के वायु विकार, गुर्दे के रोग और पीठदर्द में आराम करता है।

(३) मधुमेह के लिए तथा पेट की चर्बी कम करने के लिए विशेष लाभकारी है।

४. हलासन

जमीन पर लेटकर हाथों और पैरों को सीधे फैलाएँ, फिर श्वास लेते हुए दोनों पैरों को एक साथ धीरे–धीरे ऊपर उठाते जाएँ। घुटने बिल्कुल सीधे रखें। कमर तक का हिस्सा उठ जाने पर हथेलियों से कमर को दोनों ओर से पकड़ लें फिर श्वास छोड़ते हुए पीठ को भी उठाकर पैरों को सिर के पीछे जमीन पर टिकाएं। ठुड्डी छाती से सट जाए। श्वास सहज स्थिति में चलने दें। जब शरीर का संतुलन हो जाए तो हाथों को जमीन पर फैलाकर रखें। वापिस लौटने के लिए कमर को पुनः पकड़ लें और उसी क्रम से नीचे आ जाएं।

लाभ–

(१)सम्पूर्ण गर्दन, कमर, पीठ, टांगें तथा नितम्बों में रक्तसंचार तीव्र होता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) उदर के अवयवों में तनाव आने से पाचन-क्रिया में सुधार होता है तथा कब्ज दूर होता है।

(३) थाइराइड, पेन्क्रियाज तथा एड्रिनल ग्रन्थियाँ पुष्ट होती हैं।

(४) मधुमेह, पेट की चर्बी कम करने तथा मन को शान्त करने में उपयोगी है।

(५) लीवर तथा तिल्ली के रोगों में हितकारी है।

(६) युवावस्था में प्रवेश करने वाली बालिकाओं के लिए अत्युत्तम है।

(७) शीर्षासन, सर्वाङ्गासन, पश्चिमोत्तानासन के पश्चात् क्रम में यह चौथा श्रेष्ठ आसन है।

५. सर्वाङ्गासन

इस आसन के लिये भी पहले जमीन पर पीठ के बल लेट जायें। पैरों को सामने तान कर रखें। दोनों पैरों को एक साथ ऊपर उठाते जायें। घुटनों को सीधा रखें। कमर तक का पिछला भाग उठ जाने पर हथेलियों से कमर पकड़ लें और पीठ को और ऊपर उठाएँ। अन्त में पीठ को जमीन के समकोण की स्थिति में ले आएँ। ठुड्डी छाती से मिल जायेगी। श्वास को सहज में आने दें। एक से पाँच मिनट तक इसका अभ्यास करें। वापिस लौटते समय धीरे-धीरे पीठ, कमर तथा पैरों को क्रमशः जमीन पर टिकाएँ।

लाभ-

(१) इस आसन से थाइराइड ग्रन्थि में खून के संचार होने से शरीर का विकास होता है। वृद्धावस्था के लक्षण दूर होते हैं।

(२) बवासीर, मधुमेह, अण्डकोष वृद्धि, हर्निया, कब्ज तथा दमे के रोगों में लाभकारी है।

(३) यौन रोग, स्वप्नदोष, नपुंसकता को दूर करता है।

(४) महिलाओं के विशेषरोग, मासिकधर्म की अनियमितता, गर्भाशय के स्थान च्युत होने पर लाभकारी है।

(५) स्मरणशक्ति का विकास करता है। मनोविकारों को दूर करता है। ब्रह्मचर्य की साधना में अत्यन्त सहायक है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. शीर्षासन

कपड़े की एक गद्दी बनाकर सिर के नीचे रखें। हाथों की अङ्गुलियों को मिलाकर जमीन में इस प्रकार रखें कि हथेलियों और कुहनियों के बीच समकोण बन जावे। सिर को हथेलियों का सहारा देते हुए गद्दी पर टिकावें। फिर पैरों को धीरे-धीरे ऊपर उठाकर पूरे शरीर को एक सीधी रेखा में ले जायें। श्वास को सहज रखें। वापिस लौटते समय कमर को मोड़ते हुए पैरों को जमीन पर लावें और फिर हाथों का सहारा लेकर सीधे खड़े हो जायें। पन्द्रह सेकिण्ड से आरम्भ करके छः मास में इसका अभ्यास पाँच मिनट तक बढ़ा सकते हैं। शीर्षासन सब आसनों में श्रेष्ठ आसन है।

लाभ–

(१) शरीर की सबसे प्रमुख ग्रन्थि पिट्यूटरी ग्रन्थि पर नियन्त्रण करता है। अतः शरीर की सभी अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर प्रभाव डालता है।

(२) मस्तिष्क की शक्ति, प्रतिभा और धारणाशक्ति का विकास करता है।

(३) स्नायु-संस्थान, पाचन-संस्थान, प्रजनन-अंग, मल-विसर्जन और श्वसन-संस्थान आदि सभी को आरोग्यता प्रदान करता है।

(४) हर्निया, धातु दोष, गुप्तरोग, अनिद्रा, अपचन, जिगर की कमजोरी, दमा, स्वप्नदोप तथा कब्ज़ को दूर करता है।

(५) उर्ध्वरेता होने का अपूर्व आसन है। व्यक्तित्व का विकास करता और कार्यकुशलता प्रदान करता है।

आँख, नाक, कान, कण्ठ तथा हृदय के जीर्णरोगी इसका एकदम से अभ्यास न करें। पहले सर्वाङ्गासन आदि आसनों का छः मास तक अभ्यास करके फिर इसका अभ्यास आरम्भ करें।

७. शवासन

पीठ के बल कम्बल या दरी पर लेट जायें। हथेलियों को जांघों के दोनों ओर फैलाकर रखें। हाथों और पैरों को पूरा फैलाकर पूर्णतया शिथिल कर दें। आँखें बन्द रखें। पूरे शरीर को एकदम तनावरहित शान्त कर दें। श्वास सहज गति में रहे। मस्तिष्क को विचारों से सर्वथा खाली कर दें। शरीर को शव के समान शिथिल करके अपने आत्मस्वरूप में जाने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

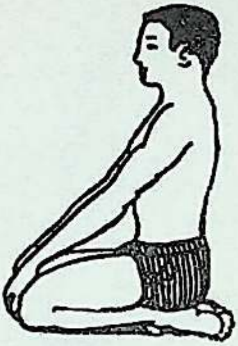

वज्रासन

धनुरासन

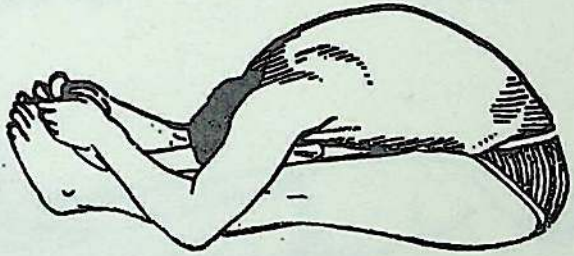

पश्चिमोत्तानासन

हलासन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

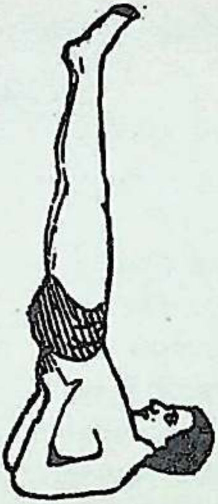

सर्वा गासन

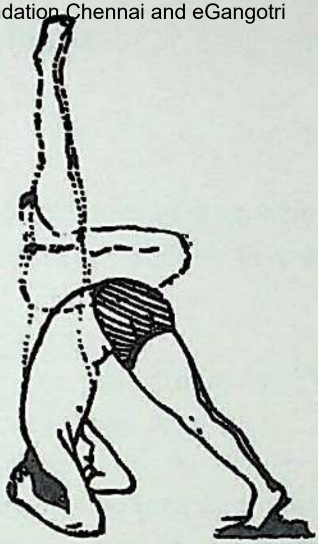

शीर्षासन

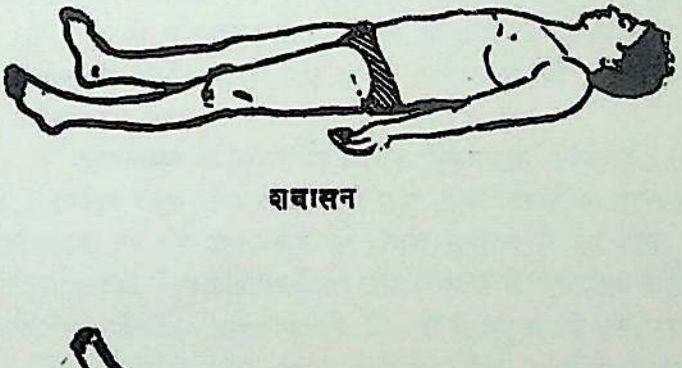

शवासन

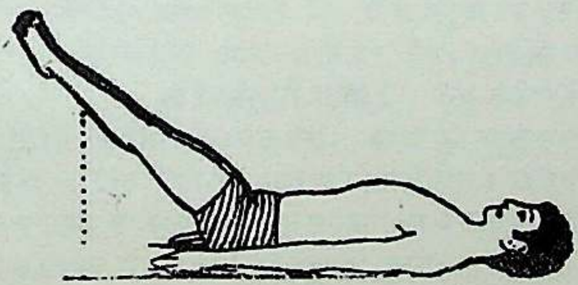

उत्तानपदासन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का प्रयत्न करना चाहिए।

लाभ–

(१) शरीर के तनाव तथा थकान को अल्प समय में दूर करता है।

(२) समस्त स्नायुमण्डल को शिथिल कर नवजीवन प्रदान करता है।

(३) शरीर के रक्त-संचार में सुधार करता है।

(४) अनिद्रा, उच्चरक्तचाप तथा हृदय-विकारों में लाभकारी है।

(५) मन को शान्त तथा नव उत्साह से युक्त करता है।

आसनों के पश्चात् भ्रमण एक उत्तम व्यायाम है। नंगे पैर हरी घास पर सूर्योदय से पूर्व टहलना आरोग्यता के लिए सबसे सरल प्राकृतिक और अत्यधिक प्रभावकारी साधन है। समझदार माता-पिता को चाहिए कि वह अपने छोटे बच्चों को जूते और मौजों की सजा न देकर नंगे पैर जमीन पर अधिक से अधिक समय तक खेलने दें। आधुनिक शिक्षित वर्ग को भी बहुत मंहगे और अनेक डिज़ाईनों के जूतों की प्रतिस्पर्धा समाप्त कर देनी चाहिए। पैरों को अधिक से अधिक खुली हवा, हरी घास तथा मिट्टी का स्पर्श होने दें। दोनों समय भोजन और भजन से पूर्व पैरों को शीतल जल से धोएं। इससे उन्हें बहुत ही हल्कापन, प्रसन्नता और स्वास्थ्य के आनन्द की अनुभूति होगी। शरीर दृढ़ होकर आरोग्यता की प्राप्ति होगी तथा दीर्घजीवन मिलेगा।

प्रातःकाल के भ्रमण से अधिक सुकुमारता, निर्बलता, रक्ताल्पता नाड़ी-दौर्बल्य तथा अन्य अनेक दोष नष्ट होकर नवजीवन प्राप्त होता है। यह स्मरण रहे कि प्रातःकाल का भ्रमण सूर्योदय से पूर्व होना चाहिए। क्योंकि सूर्योदय से पूर्व की वायु उस जीवनी शक्ति से युक्त होती है जो निर्बल शरीर को नवजीवन प्रदान करती है। रोगी मनुष्य को आरोग्यता और आरोग्य को अधिक पुष्टि प्रदान करती है। जिन माताओं के ऊपर छोटे शिशुओं की रक्षा की जिम्मेदारी रहती है। उन्हें चाहिए कि बच्चों की अधिक से अधिक पुष्टि का ध्यान रखें। बच्चों को ताजी हवा में रहने का अभ्यास कराएं उनके बदन पर बहुत कपड़े नहीं लादने चाहिएं। ताजे जल से स्नान कराकर बच्चों के नंगे बदन पर सूर्य की धूप तापनी चाहिए। उससे वे अधिक स्वस्थ और स्फूर्ति का अनुभव करेंगे।

---o---

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. प्राणायाम

मानव शरीर के लिए ही नहीं अपितु प्रत्येक प्राणधारी के लिए हवा, पानी और भोजन ये तीन अनिवार्य आधार स्तम्भ हैं। जिनके ऊपर शरीर का ढांचा खड़ा होता है। इनके अभाव में शरीर जीवनरहित, निष्प्राण हो जाता है। इन तीनों में भी हवा का सर्वप्रथम स्थान है। क्योंकि भोजन के बिना दो-तीन मास तक जीवित रह सकता है। तथा पानी के बिना भी दो-तीन दिन निकाल सकता है। किन्तु हवा के बिना शरीर दो मिनट भी नहीं चल सकता। शरीर के लिए इतने महत्त्वपूर्ण और अनिवार्य उपादेय की उपेक्षा करना जीवन के लिए खतरे का कारण बन जाता है। हमारे प्राचीन ऋषियों ने प्राणवायु की उपयोगिता को बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से समझा था। रोग के निदान का प्राणायाम एक सर्वोत्कृष्ट साधन है। प्राचीन काल में तथा आज भी प्राणायाम के साधक शरीर के रोगों की चिकित्सा प्राणायाम द्वारा ही करते हैं। प्राण की उपयोगिता के विषय में अथर्ववेद में इस प्रकार कहा है-

आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद्रपः।
त्वं हि विश्वभेषज देवानां दूत ईयसे॥
अथर्व० ४।१३।३॥

अर्थात्- हे वायो! तू सूक्ष्म तत्त्वों के साथ रोगनाशक औषध को हमारे शरीर में पहुंचा और जो शरीर में दोष हैं उनको दूरकर। हे विश्व भेषज प्राणवायो! तू देवों के दूत की भांति हमें प्राप्त हुआ है।

द्वाविमौ वातौ वात आ सिन्धोरा परावतः।
दक्षं ते अन्य आवातु व्यन्यो वातु यद्रपः॥
अथर्व० ४।१३।२॥

अर्थात्- शरीर में दो प्रकार के वायु हैं जिन्हें प्राण और अपान कहते हैं। इनमें से एक फेफड़ों द्वारा रक्त को शुद्ध करता है और दूसरा मलों को शरीर से बाहर निकालता है। एक शरीर को बल प्रदान करता है। दूसरा विकारों को शरीर से बाहर करता है। इनमें प्राण का स्थान मस्तिष्क और अपान का शरीर का निचला प्रदेश है। प्राणवायु बुद्धि, चित्त, हृदय और इन्द्रियों को उनके अर्थों में प्रेरित करता है और अपानवायु रज, वीर्य,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मल, मूत्र आदि को बाहर की ओर प्रेरित करता है।

महर्षि पतञ्जलि प्राणायाम की सिद्धि का फल बतलाते हुए योगदर्शन में लिखते हैं–

योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः।

अर्थात्– जब मनुष्य प्राणायामादि योगाङ्गों का अनुष्ठान करता है तब प्रतिक्षण उत्तरोत्तर काल में अशुद्धि का क्षय होकर ज्ञान का प्रकाश विवेक ख्याति की प्राप्ति तक होता जाता है। जब तक मुक्ति न हो तब तक आत्मा का ज्ञान बराबर बढ़ता जाता है। "ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्"– प्राणायाम से प्रकाश का आवरणक्षीण हो जाता है। मनुस्मृति में लिखा हैः–

दह्यन्ते ध्मायमानानां धातूनां च यथा मलाः।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात्॥

अर्थात्– जैसे अग्नि में तपाने से सुवर्ण आदि धातुओं का मल नष्ट होकर वे शुद्ध हो जाते हैं वैसे ही प्राणायाम करने से मन आदि सभी इन्द्रियों के दोष क्षीण होकर वे निर्मल हो जाती हैं। शरीर की रक्त आदि धातुओं तथा मन आदि इन्द्रियों के दोष ही शरीर में रोगोत्पत्ति के मूल कारण बनते हैं।

प्राणायाम क्या है ? इसे ठीक से समझ लेना चाहिए। प्राण तो सभी जीवधारी लेते और छोड़ते हैं। इस प्राण को ही विधिपूर्वक लेने छोड़ने तथा उसके विराम को प्राणायाम कहते हैं। यूं तो प्रकृति द्वारा कार्यरत श्वास प्रश्वास प्राणी का अहोरात्र हित साधन करते रहते हैं। किन्तु अधिक श्रम वा कुपोषण के कारण प्राण जब निर्बल पड़ जाते हैं तो वे अपने कार्य को भली प्रकार से नहीं कर पाते। प्राण को सशक्त बनाकर नवजीवन प्रदान करने के लिए प्राणायाम आवश्यक है।

प्रत्येक आरोग्याभिलाषी को चाहिए कि वह प्राण और अपान के वेदोक्त स्वाभाविक कार्यों में उनकी मदद करे। प्राण और अपान के वेग– छींक, डकार, जम्भाई, अपानवायु के विसर्जन को बुद्धिमान् लोग कभी न रोकें। प्राण रक्त को शुद्ध करता है और शुद्ध रक्त ही जीवन है। अशुद्ध रक्त सभी रोगों को निमन्त्रण देता है। कैन्सर, ट्यूमर, अर्बुद आदि रोग अशुद्ध रक्त के ही परिणाम हैं। प्राण रक्त को तभी शुद्ध करता है जब वह स्वयं में शुद्ध हो। इसका अर्थ यह हुआ कि जिस वायुमण्डल में हम श्वास

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेते हैं उसका शुद्ध होना अत्यावश्यक है।

शुद्ध वायुमण्डल का आक्सीजन फेफड़ों में जाकर रक्त को शुद्ध करता है। इसके विपरीत यदि हम नगर की गंदी बस्तियों में रहते हैं और दूषित हवा में श्वास लेते हैं तथा उससे भी आगे बढ़कर अपने फेफड़ों को बीड़ी, सिगरेट तथा तम्बाकू के धुएँ से दिन-रात भरते रहते हैं; तब क्या हम अच्छे स्वास्थ्य की कल्पना कर सकते हैं ? वस्तुतः ऐसा विषयव्यसनी व्यक्ति स्वस्थ रहने के अपने मौलिक अधिकार को भी हाथ से खो बैठता है। उसका रक्त निरन्तर अशुद्ध होते-होते एक दिन रक्त को शुद्ध करने वाले फेफड़े भी स्वयं अशुद्ध रक्त से आक्रान्त हो जाते हैं। यही क्षय का लक्षण है। सर्दी, बुखार, विशूचिका, गठिया, चर्मरोग और फोड़ा आदि अनेक रोगों को शुद्ध हवा दूर करने में सबसे अधिक सहायक है।

उधर अपान-वायु जो मल-मूत्र का विसर्जन कराता है, यदि हम अपने अज्ञान वा व्यसन के कारण उसकी सहायता नहीं करते तो मलबन्ध रहने लगता है और कभी-कभी मूत्रावरोध भी होता है। अपान-वायु के कार्य की सहायता हम प्राकृतिक भोजन लेकर तथा आसन प्राणायाम से कर सकते हैं। चोकर आँतों को शीघ्र साफ करता है। मैंदे की रोटी या अन्य मिठाईयाँ आँतों में जमकर बैठ जाती हैं, जिन्हें बाहर करने के लिये अपान वायु को अपने अतिरिक्त बल का प्रयोग करना पड़ता है। यदि भोजन व्यसनी शरीर की इस स्थिति पर ध्यान नहीं देता, तब रोग बढ़ता चला जाता है और एक दिन अपान-वायु निरन्तर इस लड़ाई में लड़ते-लड़ते थककर हार जाता है। तब आँत तथा पेट के अनेक प्रकार के रोग पैदा हो जाते हैं जैसे- बवासीर, भगन्दर, गैस्ट्रिक, अग्निमान्द्य, अफारा, अरुचि, खट्टी डकार, अम्लपित्त, अलसर, उदरशूल, सिरदर्द, उन्माद, स्मृति-भ्रंश, रक्तदोष, दूषित रक्त से उत्पन्न नाना प्रकार के चर्मरोग आदि आदि कब्ज की ही देन हैं। वह व्यक्ति बड़ा ही नासमझ है, जो कब्ज को साधारण रोग समझकर उसकी उपेक्षा करता है।

प्रत्येक व्यक्ति जो भी स्वस्थ रहना चाहता है उसे प्राणायाम या श्वास प्रश्वास की प्रक्रिया सीख लेनी चाहिए। हमें गहरे और लम्बे श्वास लेने का अभ्यास करना चाहिए। धूम्रपान के दुर्व्यसन को सर्वथा छोड़ देना चाहिए। फेफड़ों में शुद्ध ताजी हवा जाए उसके लिए खुले मैदानों या बाग-बगीचों में सवेरे शाम घूमने के लिए निकल जाएं। फेफड़ों में अधिक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से अधिक वायु को भरें। लम्बे श्वास लेने का अभ्यास प्राणायाम की पूर्वावस्था है। यह अभ्यास आप चलते-फिरते, उठते-बैठते कभी भी कर सकते हैं। इसमें नासिका को हाथ लगाने की आवश्यकता नहीं और न ही इसमें किसी प्रकार की हानि की सम्भावना है। इस बात का अवश्य ध्यान रखें कि यह अभ्यास शुद्ध वायु में ही किया जाए।

शीतकाल के ठण्डे वायु से नहीं डरना चाहिए। घर की खिड़कियों को खुला करके सदा शुद्ध वायु का प्रवेश होने दें। शुद्ध और ताजी वायु में सांस लेने पर बन्द और गन्दे कमरे में सांस लेने की अपेक्षा शरीर में अधिक ऊष्मा पैदा होती है। रात को सोते समय मुँह को खुला रखें। प्राणायाम के विशेष अभ्यासी दो बातों का ध्यान रखें कि प्राणायाम का अभ्यास प्रातः उषाकाल तथा सायंकाल गोधूलि के समय ही करें। रात्रि में और दिन के समय मध्याह्न में प्राणायाम न करें। रात्रि में प्राणायाम करने से रक्त अशुद्ध होता है। क्योंकि रात्रि में पेड़-पौधे वनस्पति सब नाइट्रोजन छोड़ते हैं। इस हेतु वायु में नाइट्रोजन की अधिकता हो जाती है। यही कारण है कि रात्रि में पेड़ पौधों के नीचे शयन करना वर्जित है। दिन के समय प्राणायाम का अभ्यास करने से शरीर में शुष्कता बढ़ जाती है। जो रसादि धातुओं को सुखा देती है। अतः सन्धिवेला में ही प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

भोजन के तुरन्त बाद प्राणायाम न करना चाहिए। कम से कम तीन घण्टे का अन्तराल अवश्य रहे।

प्राणायाम करते समय सुखपूर्वक पद्मासन, सिद्धासन, अथवा सुखासन पर स्थिर होकर बैठ जायें और सिर, गर्दन तथा पीठ को एक सीधी रेखा में रखें। तनावरहित हो शान्त भाव से बैठकर प्राणायाम करें।

किसी भी प्राणायाम में रेचक अर्थात् श्वास छोड़ने का समय, पूरक अर्थात् श्वास लेने के समय के बराबर अथवा अधिक रखें। इसी प्रकार अन्तःकुम्भक तथा बाह्यकुम्भक के अभ्यास को भी अपने फेफड़ों की शक्ति के अनुसार ही करें। आवश्यकतानुसार बीच-बीच में फेफड़ों को विश्राम भी देवें।

जिस प्रकार के कृत्रिम तथा तनावपूर्ण जीवन में आज का मानव जी रहा है, उससे शरीर के लिये आवश्यक प्राणवायु फेफड़े ग्रहण नहीं कर सकते तथा विषैली अशुद्ध वायु को शरीर से पूरी मात्रा में बाहर भी नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फेंक सकते। उसके परिणाम में लोग अनेक शारीरिक तथा मानसिक व्याधियों के शिकार हो जाते हैं। शरीर में आवश्यक शक्ति तथा स्फूर्ति का भी अभाव नित्य जीवन में अनुभव होता है। प्राणायाम शरीर तथा मन में शक्ति संतुलन, स्फूर्ति क्रियाशीलता भरने के लिए एक महत्त्वपूर्ण विज्ञान-सम्मत साधन है। एक स्वास्थ्य प्रेमी जन को प्रतिदिन दस मिनट से आधे घन्टे तक का समय प्राणायाम के लिये अवश्य देना चाहिए।

प्राणायाम के लिए हम वायु की शुद्धि पर बार-बार जोर दे रहे हैं। वायु जितना अधिक शुद्ध होगा परिणाम उतना ही अधिक अच्छा होगा। आज समस्त विश्व के सामने वायु-प्रदूषण की एक विकट समस्या बनी हुई है। दूषित हवा में श्वास लेकर स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन की कामना स्वप्नवत् ही है। इस विश्वव्यापी समस्या का समाधान बड़े पैमाने पर खोजा जाना चाहिए। जिस घर वा चारदीवारी के अन्दर हम रहते हैं, प्रत्येक व्यक्ति का अनिवार्य कर्त्तव्य है कि उसकी वायुशुद्धि के लिए प्रयत्न करे और उस वायु शुद्धि का एकमात्र उपाय है-यज्ञ। प्रतिदिन प्रातःकाल शुद्ध घी और सामग्री से सारा परिवार बैठकर पन्द्रह मिनट यज्ञ करे और दिनभर के लिए जीवनी शक्ति का उपार्जन करें। प्रतिदिन दैनिक यज्ञ करने से परिवार के अनेक भयंकर रोग देखते ही देखते हवा में उड़ जायेंगे और वे फिर कभी लौटकर नहीं आयेंगे। क्योंकि दुर्गन्धयुक्त वायु और जल से रोग उत्पन्न होते हैं। रोग से प्राणियों को कष्ट होता है और सुगन्धित वायु तथा जल से आरोग्यता की वृद्धि होकर जीवन में सुख प्राप्त होता है।

नैतिक दृष्टि से वे लोग पापमय जीवन व्यतीत करते हैं जो स्व-आरोग्यता के लिए यज्ञ नहीं करते। या यूँ कहिये कि आरोग्यता के निमित्त यज्ञ का महत्त्व समझने पर या न समझकर स्वयं को अन्धकार में रखना भी पाप है। क्योंकि मनुष्य के शरीर से मल, मूत्र, स्वेद, श्वास, प्रश्वास द्वारा वायुमण्डल में जितना दुर्गन्ध और जल दूषित होकर रोगोत्पत्ति का निमित्त होने से प्राणियों को दुःख प्राप्त कराता है, उतना ही पाप उस मनुष्य को होता है। इसलिए उस पाप के निवारणार्थ उतना वा उससे अधिक सुगन्ध, वायु और जल में फैलाना चाहिए। जितना घृत वा सुगन्धित पदार्थ एक मनुष्य खाता है, उतने द्रव्य के अग्नि में होम करने से लाखों मनुष्यों का उपकार होता है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि मनुष्य घृत आदि उत्तम पदार्थ न खावें, क्योंकि जो मनुष्य घृतादि उत्तम पदार्थ न

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खावेंगे तो उनके शरीर और आत्मा के बल की उन्नति न हो सकेगी। इसलिए घृतादि उत्तम पदार्थों को खाना-पीना भी चाहिए, परन्तु होम का फल अधिक होने से होम का करना भी अति आवश्यक है।

जो लोग होम में घृतादि पदार्थों को अग्नि में डालकर उनको मात्र नष्ट करना समझते हैं वे पदार्थ विद्या से अनभिज्ञ हैं। स्वास्थ्य के सार को भी वे नहीं जानते। अग्नि में डाला गया पदार्थ सूक्ष्म तत्त्वों में विभाजित होकर वायु के साथ दूर-दूर तक फैल जाता है और जहाँ-जहाँ वह जाता है वहाँ-वहाँ की दुर्गन्ध को निवृत्त करता जाता है। होम की सुगन्धित वायु का दूर देश में स्थित व्यक्ति भी स्वयं अपनी नासिका द्वारा ग्रहण करता है। इससे स्पष्ट है कि घृतादि पदार्थ अग्नि में डाला जाने पर नष्ट नहीं होता, अपितु सूक्ष्म होकर पर्यावरण के जल और वायु को सुगन्धित करता है।

केशर, कस्तूरी और सुगन्धित पुष्प आदि की भी अपनी गन्ध होती है। किन्तु उस गन्ध में वह सामर्थ्य नहीं होती जो कि घर की दुर्गन्धित वायु को बाहर निकालकर वहाँ शुद्ध वायु का प्रवेश करा सके। इसका कारण यह है कि उस गन्ध में भेदक शक्ति का अभाव होता है। यज्ञाग्नि से उत्पन्न सुगन्ध भेदक शक्ति से युक्त होती है। वह दुर्गन्धयुक्त वायु और पदार्थों को छिन्न-भिन्न तथा हल्का करके घर से बाहर निकाल पवित्र वायु का प्रवेश करा देती है।

प्राचीन काल में ऋषि महर्षि, राजे महाराजे बहुत मात्रा में होम करते कराते थे। जब तक इस आर्यावर्त्त देश में यज्ञ करने का प्रचार रहा तब तक यह देश रोगों से रहित और सब सुखों से परिपूर्ण था। अब भी अगर इस देश के वासी इस पुण्यमय क्रिया का आरम्भ करें तो पुनः आरोग्य और दीर्घ आयुष्य होकर सभी लोग सब सुखों को प्राप्त हों।

यज्ञ से वायु और जल सुगन्धित होकर शरीर, मन, मस्तिष्क आदि सबकी पुष्टि का कारण होते हैं। यज्ञ से पारिवारिक शान्ति का रास्ता भी प्रशस्त होता है। घर में धार्मिक वातावरण उत्पन्न होता है। यज्ञ करना प्राण-अपान की महती सहायता है। सुविज्ञ भिषक् यज्ञ के द्वारा ही क्षय रोग की सफल चिकित्सा करता है। श्वास के द्वारा जो प्राणवायु हम लेते हैं, उसमें एकमात्र आक्सीजन ही नहीं होता, अपितु कई वायुमण्डलीय गैसों का मिश्रण होता है। फेफड़ों के अन्दर जाकर ये गैसें अनेक रासायनिक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रियाएं करती हैं जैसे कारबनीकरण, हाईड्रेशन, नाईट्रिशन, आक्सीडेशन आदि-आदि। इन रासायनिक क्रियाओं की जीवन निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इनके अभाव में जीवन अर्थहीन हो जाएगा। इस सन्दर्भ में हम पाश्चात्त्य जगत् के ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिक Gordon Rattray Taylor के विचार यहाँ प्रस्तुत करते हैं। वे लिखते हैं-

Quite recently chemists have been changing their opinions about the nature of the primitive atmosphere. They are no longer convinced that it was formed of ammonia and methane but rather that it comprised Corbon-dioxide, Nitrogen and Water vapours. Lightining and Ultra Violet Light might have synthesised biologically interesting molecules in the premitive ocean. There is the question of what followed the bacteria and the blue green algae. That these were the first life forms is little disputed. but what they evolved into a matter on which there is no agreement at all.

लेखक ने सृष्टि के आदि में कार्बन-डाई-आक्साईड, नाइट्रोजन, पानी के वाष्प, अमोनिया और मीथेन गैस की उपस्थिति में सूक्ष्म बैंगनी रंग की किरणों के द्वारा पृथ्वी पर जीवन के प्रथम अवतरण की जो कल्पना की है, वह वर्तमान का ही पूर्वानुमान है। आज भी उषाकाल में हम इस परम सत्य के दर्शन करते हैं। उषाकाल में सूर्य की सूक्ष्म प्रकाश की किरणें वायुमण्डल के अमोनिया, मीथेन, नाइट्रोजन, कार्बन-डाई-आक्साईड तथा जलीय वाष्पबहुल वातावरण से गुजरती हुई सूक्ष्म जीवन तत्त्वों का निर्माण करती हैं। रात्रि के मध्य में आक्सीजन की उपस्थिति न के बराबर होती है। सूर्य के Ultra Violet प्रकाश के वायुमण्डलीय क्षेत्र में प्रवेश से रासायनिक क्रियाओं के फलस्वरूप आक्सीजन का उदय होता है। आक्सीजन जीवन की प्रथम भौतिक आवश्यकता है। आक्सीजन के अभाव में जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती। तत्त्ववेत्ता इस सत्य को जानकर उषाकाल में जाग उठते हैं। जिससे कि वे प्राकृतिक जगत् में हो रहे रासायनिक परिवर्तनों के फलस्वरूप होने वाले जीवनी तत्त्वों को अपने शरीर में बटोर सकें। उषाकाल में ये परिवर्तन खुले आकाश तथा प्रकाश में बहुत विशाल स्तर पर होते हैं। बन्द खिड़कियों और दरवाज़ों के मकानों के अन्दर सोने वाले जन इन जीवनी तत्त्वों से वञ्चित रह जाते हैं। उषाकाल में किया गया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक–एक प्राणायाम शरीर में नवजीवन का संचार करता है। वे लोग बड़े अभागे हैं जो प्रतिदिन आने वाले इस स्वर्णिम अवसर को बिस्तर पर पड़े–पड़े यूँ ही गवाँ देते हैं। ऊपर उठने का प्रकृति बार–बार अवसर देती है किन्तु भाग्यहीन मूढ़ किसी भी अवसर का लाभ नहीं लेता। उस ओर से सदैव के लिये आँखें मूँद लेता है। बालक स्वभावतः अगर उस काल में जागता है, तो भी दुष्ट संस्कारी माता–पिता उसे फिर सुला देते हैं। वे नहीं जानते कि हम अपने अज्ञान से स्व सन्तान को विप पिला रहे हैं और उन्हें उषाकाल में सोने का अभ्यास कराकर उनके भाग्य को सदैव के लिये नष्ट कर रहे हैं।

प्राणवायु हमारे फेफड़ों में जाकर सामान्यतया रक्तशोधन का ही कार्य नहीं करता अपितु वह एक विद्युद्धारा को भी उत्पन्न करता है जो शरीर के समस्त स्नायुमण्डल में गति करती है और शरीर के किसी भी भाग में पड़े हुए विजातीय द्रव्य को, जो रोगों का कारण बना हुआ था अपनी विकर्षण शक्ति से उसे उस स्थान से हटाकर, फेफड़े की ओर ले जाती है। या स्वेद आदि के रूप में त्वचा की बाहरी सतह की ओर ढकेलकर शरीर से बाहर करती है। फेफड़ों तक विजातीय द्रव्य द्रव–रूप में रक्तवाहिनी नाड़ियों द्वारा बहकर आता है। वहाँ रासायनिक क्रियाओं द्वारा उसे गैस रूप में परिवर्तित करके फेफड़े प्राण वायु के साथ शरीर से बाहर भेज देते हैं। इस प्रकार फेफड़ों द्वारा परिशुद्ध रक्त पुनः हृदय में भेज दिया जाता है। फेफड़ों से रक्त नवजीवन लेकर लौटता है। हमारे शरीर में प्रवेश करने वाले प्राण वायु में आक्सीजन का प्रतिशत जितना अधिक होगा उतने ही सुन्दर परिणाम हमें हस्तगत होंगे। शुद्ध प्राणवायु हमें सर्वाधिक पुष्टि प्रदान करता है। रूप लावण्य को निखारने तथा बल, स्फूर्ति को प्राप्त करने के लिए प्राणवायु सर्वोत्तम साधन है।

यहाँ हम स्वास्थ्य प्रेमी जनों के लिये प्राणायाम की दो विधियों का उल्लेख करते हैं–

प्रथम विधि–प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व नित्य क्रियाओं से निवृत्त हो, शुद्ध एकान्त देश में जा, स्थिर आसन पर बैठ जाएं। पीठ, कमर तथा गर्दन को एक सीधी रेखा में रखें। हाथों को घुटनों पर टिका कर रखें। मन को शान्त कर, सर्वथा भय रहित हो दृष्टि को सामने एक स्थिर बिन्दु पर टिकाएँ। फिर पाँच–सात बार फेफड़ों में लम्बे श्वास–प्रश्वास द्वारा अधिकाधिक वायु को भरें और निकालें। श्वास लेने और छोड़ने में जल्दी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न करें। उसके बाद प्राणवायु को एक साथ बाहर निकालकर बाहर ही रोक दें। पेट तथा मूलेन्द्रिय को ऊपर की ओर खींचकर रखें। ठुड्डी को छाती पर टिका दें। श्वास को यथाशक्ति बाहर रोककर रखें। मन में ओ३म् का जाप करते जाएँ। श्वास के बाहर रोकने में हठ न करें। जब असुविधा होने लगे तब ठुड्डी को ऊपर उठाकर श्वास अन्दर भर लें। श्वास धीरे-धीरे ही अन्दर लें, एक साथ झटके से नहीं। श्वास को देर तक अन्दर न रखकर पुनः बाहर ही फेंक दें और बाहर ही रोकें। इस प्रकार यह आवृत्ति तीन बार दोहरायें। धीरे-धीरे जैसे-जैसे शरीर और फेफड़ों में शक्ति आती जाए, इस अभ्यास को बढ़ाते जाएँ। एक बार में इक्कीस आवृत्तियों से अधिक न करें। इस प्रकार करने से शरीर में बल, पुष्टि, आरोग्यता तथा मन और आत्मा में पवित्रता एवं स्थिरता होती है। प्राणायाम के अभ्यास से प्राण अपने वश में होकर मन और इन्द्रियाँ भी अपने आधीन होते हैं। बल-पुरुषार्थ बढ़कर बुद्धि तीव्र तथा सूक्ष्म रूप हो जाती है, जो कि बहुत कठिन और सूक्ष्म विषय को भी शीघ्र ग्रहण कर लेती है। इससे मनुष्य-शरीर में वीर्य-वृद्धि को प्राप्त होकर स्थिर बल, पराक्रम, जितेन्द्रियता आती है तथा बुद्धि में विज्ञान का उदय होकर सब शास्त्रों को थोड़े काल में समझकर ग्रहण करने की सामर्थ्य उत्पन्न होती है। स्त्री-पुरुष सभी के लिये यह अभ्यास उपयोगी है।

द्वितीय विधि– प्राणायाम की द्वितीय विधि में प्राणवायु को फेफड़ों में भरकर अन्दर ही जितना रोका जा सके, उतना रोकें। जब घबराहट होने लगे तो धीरे-धीरे बाहर निकाल दें। कुछ देर बाहर निकाल कर रोकें। फिर अन्दर भरकर अन्दर ही अधिक रोकें। उसकी आवृत्ति भी तीन बार करें। धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ावें। आवृत्तियों की संख्या तथा समय का परिमाण धीरे-धीरे शक्ति के अनुसार ही बढ़ायें। शीघ्रता और हठ के परिणाम घातक होते हैं। आशा के बदले निराशा हाथ लगती है। इसलिये उतावलापन ठीक नहीं।

प्राणायाम की दोनों विधियों का अभ्यास एक साथ न करके पहले प्रथम विधि का ही अभ्यास करें। उसका अभ्यास परिपक्व होने पर द्वितीय विधि का अभ्यास करें।

यह निश्चित बात है कि विधिपूर्वक किये गये यज्ञ और प्राणायाम सब जीवों के लिये महोपकारक होकर सब सुखों की वर्षा कराने वाले होते हैं। यज्ञ और प्राणायाम स्वास्थ्य के मुख्य आधार स्तम्भ हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. जल के उपयोग

पिछले अध्याय में हमने स्वास्थ्य के तीन मुख्य आधारों का उल्लेख करते हुए वायु के पश्चात् जल का दूसरा स्थान बतलाया था। जल को ऋषियों ने जीवन कहा है। निरुक्तकार महर्षि यास्क ने जल के सौ नाम गिनाये हैं। जो उसके एक-एक गुण के प्रकाशक हैं। अथर्ववेद में जल को अमृत और औषध नाम से स्मरण किया है।

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजम्। (अथर्व० १।४।४)

अर्थात्- जल में अमृत और भेषज का गुण है।

वेदों में ऐसे बहुत से मन्त्र हैं, जहाँ जल को भेषज, माता के समान रक्षक, कल्याणकारी और पवित्र कहा है। हमारे शरीर की रस, रक्त आदि धातुएँ जल से ही अनुप्राणित हैं। जल ही रस-रूप होकर भोजन के साथ हमारे शरीर में प्रवेश करता है। रक्त-रूप में हमारे शरीर की वृद्धि, रक्षा और पोषण करता है। तथा मूत्र और स्वेद रूप में नाना प्रकार के दोषों को शरीर से बाहर निकालता है। जन्म से मृत्युपर्यन्त जल हमारा अनन्यतम मित्र है। उसकी महत्ता और उपयोगिता में स्वास्थ्य का सार छिपा हुआ है। जल के यथोचित सेवन से हम शरीर के बाहरी तथा आभ्यन्तरिक सभी प्रकार के मलों से शुद्ध होते हैं। जल का बाह्य उपयोग स्नान आदि रूप में तथा आन्तरिक उपयोग पान-रूप में किया जाता है। स्नान की महिमा बतलाते हुए चरक शास्त्र में लिखा है-

पवित्रं वृष्यमायुष्यं श्रमस्वेदमलापहम्।
शरीरबलसन्धानं स्नानमोजस्करं परम्॥ चरक ५।९१

थोड़े से शब्दों में ऋषि ने स्नान के महान् लाभों पर प्रकाश डाला है। स्नान से शरीर पवित्र होता है। वीर्य और आयु की वृद्धि होती है। थकान, पसीना और मल दूर होते हैं। शरीर का बल बढ़ता है और शरीर में ओज की अत्यधिक वृद्धि होती है।

इसी प्रकार महर्षि धन्वन्तरि सुश्रुत में लिखते हैं-

निद्रादाहश्रमहरं स्वेदकण्डूतृषापहम् ।
हृद्यं मलहरं श्रेष्ठं सर्वेन्द्रियविशोधनम् ॥
तन्द्रापापोपशमनं तुष्टिदं पुंस्त्ववर्द्धनम् ।
रक्तप्रसादनञ्चापि स्नानम् अग्नेश्च दीपनम्॥ (सुश्रुत २४।५८)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात्– स्नान निद्रा, जलन, थकान, पसीना, खुजली, प्यास को दूर करता है। हृदय के लिये हितकारी, मल को दूर करने का श्रेष्ठ साधन है। सभी इन्द्रियों (आँख, कान, नासिका, रसना, हाथ, पैर, मल-द्वार) का शोधक, तन्द्रा तथा पाप का नाशक है। स्नान से चित्त प्रसन्न होता है। पुंस्त्वशक्ति बढ़ती है। रक्त शुद्ध होता है तथा जठराग्नि प्रदीप्त होती है। वे लोग कितने अभागे हैं जो कि स्नान के इतने अद्भुत लाभ होते हुए और जिसमें व्यय कुछ भी नहीं फिर भी स्नान करने में कष्ट मानते हैं या उसमें आलस्य करते हैं। प्रतिदिन स्नान का अभ्यासी व्यक्ति अपने शरीर को अनेक रोगों से सुरक्षित बनाये रखता है और स्वस्थ जीवन का आनन्द लेता है।

पाश्चात्त्य देशों में स्नान का इतना महत्त्व नहीं समझा जाता जैसा की भारतीय आर्य पुरुषों में। स्नान की महत्ता के कारण यहाँ स्नान को धर्म का एक अनिवार्य अङ्ग मान लिया गया है। सहस्रों नर-नारी दूर-दूर से गंगा आदि नदियों के तीर्थों पर स्नान के लिये जाते हैं और सभी ऋतुओं में श्रद्धा भक्ति से स्नान करते हैं। शीतकाल में भी बर्फीले पानी में भक्त लोग गोते लगाते हैं। पाश्चात्त्य लोगों में कईयों ने जलस्नान तथा जल के उपयोग पर अच्छा चिन्तन किया है और इस विषय की पुस्तकें भी लिखी हैं। जो रोगी दीर्घकाल की रुग्णता के कारण इतने अशक्त हो गये हैं कि वे शीतल जल का स्नान नहीं ले सकते उनके लिये उन पुस्तकों में सुझाये गये उपचार अत्युपयोगी सिद्ध हो सकते हैं किन्तु स्वस्थ लोगों और सशक्त रुग्ण लोगों को भारतीय ढंग का स्नान ही अपनाना चाहियें। वह समूचे शरीर के लिये उपयोगी है।

पाश्चात्त्य लेखक एडोल्फ़ जस्ट अपनी पुस्तक **Return to Nature** में प्राकृतिक स्नान के विषय में लिखते हैं कि "अधिकांश लोग कमरों में ही स्नान करते हैं और सबको सब समय बाहर खुली जगह में स्नान की सुविधा भी नहीं होती। अतः लोगों को पानी रखने के लिए किसी पात्र की आवश्यकता होती है। प्राकृतिक स्नान के लिए एक टब जो इतना बड़ा हो कि उसमें पैर सिकोड़ कर घुटने ऊँचे किए हुए आसानी से बैठा जा सके, लेना चाहिए। टब में स्वाभाविक रूप से ठंडा पानी तीन-चार इंच गहरा भरकर इस प्रकार बैठना चाहिए कि जल उसके पैरों, नितम्बों और जननेन्द्रिय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के ऊपर तक आ जाए। नितम्ब और पैरों के तलवे टब के पैंदे से लगे रहें और घुटने हमेशा ऊपर उठे रहें।"

इस प्रकार टब में बैठने के बाद सटे हुए घुटने फैला दिए जाते हैं और पानी को हथेली से पेडू पर जोर से मारा जाता है। इस प्रकार पेडू पर पानी मार लेने के बाद तुरन्त पेडू के बीच के भाग को, दोनों किनारों को और सारे पेडू को एक या दोनों हाथों से तेजी से मला जाता है। पानी मारना और पेडू रगड़ना थोड़ी ही देर चलता है। यदि स्त्री यह स्नान ले रही है तो उसे उरुसन्धि (दोनों जांघों के बीच का भाग) और जननेन्द्रिय के ऊपरी भाग को खुले हाथ से जल के अन्दर रगड़ना चाहिए। पुरुष भी उरुसन्धि के चारों ओर, मलद्वार, अण्डकोष और जननेन्द्रिय के बीच की सीवन के चारों ओर पानी के अन्दर ही खुले हाथ से रगड़े। इसके बाद हाथों से पानी लेकर सारे शरीर को धो डालना चाहिए। शरीर धोने में देर न लगे। इसके लिए किसी दूसरे आदमी की सहायता भी ली जा सकती है। इसके बाद सारे शरीर को हाथों से रगड़-रगड़ कर सुखा लेना चाहिए। शरीर को सुखाने के लिए तौलिए या अंगोछे का व्यवहार बिल्कुल न करना चाहिए।

स्नान के बाद कमरे में या सुविधा हो तो खुली जगह में थोड़ी देर नंगे बदन टहलना अच्छा है परन्तु स्नान के बाद शरीर में गर्मी आ जाए इसका सदा ध्यान रखना चाहिए। तेजी से टहलने, कसरत करने या किसी श्रमसाध्य कार्य से गर्मी जल्दी आ जाती है। यदि ऐसा न किया जा सके तो कम्बल आदि कुछ गर्म कपड़ा ओढ़ कर लेट जाना चाहिए। गर्मी के लिए सूरज की धूप का प्रयोग भी अति उत्तम है।

प्राकृतिक स्नान कितनी देर तक किया जाए ? इसका उत्तर शरीर की स्थिति और गर्मी पर निर्भर करता है। इस विषय में प्रत्येक व्यक्ति को अपने शरीर की स्थिति समझने और अन्दर की आवाज सुनने की कोशिश करनी चाहिए। कितनी बार यह स्नान किया जाए इसका उत्तर भी प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं देना चाहिए। ग्रीष्म ऋतु में यह स्नान नित्य किया जा सकता है और जाड़े के दिनों में दो-तीन दिन में एक बार करना भी काफी हो सकता है।

ज्वर से ज़लते हुए रोगी और पुष्ट शरीर वाले व्यक्ति, ठंडी देह वाले कमज़ोर, रक्ताल्पता के रोगी की अपेक्षा अधिक बार स्नान करेंगे।

प्राकृतिक स्नान के लिए गर्म पानी कभी न लिया जाए। यदि यह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्नान कमरे में किया जाए तो उसकी खिड़कियाँ खुली रहनी चाहिएं ताकि कमरा ठंडा रहे। सवेरे उठते ही स्नान का प्रयोग स्वास्थ्यप्रद है।

प्राकृतिक स्नान में, प्राकृतिक चिकित्सकों द्वारा रोग निवारणार्थ प्रयोग में लाई जाने वाली सभी विधियों का जैसे–नंगे पांव टहलना, पानी में खड़े रहना, मल द्वार को गर्म होने से बचाना, एनिमा का प्रयोग, वायु और प्रकाश स्नान, पेडू की ठंडी पट्टी, पेडू स्नान, जल स्नान, जननेन्द्रिय को ठंडक पहुँचाना, तरेरा, पेडू और शरीर की मालिश आदि का समावेश हो जाता है। अतः प्राकृतिक स्नान सब विधियों से अधिक प्रभावशाली और मनुष्य जाति के लिए लाभदायक है।

इन प्राकृतिक उपादानों का व्यवहार करने पर शरीर में एक जोरदार प्रतिक्रिया होती है जिसके फलस्वरूप शरीर का विजातीय द्रव्य स्थानच्युत होकर निकलने लगता है और निश्चयात्मक रूप से रोगनिवारक उभार होता है, जो कष्टकर पीड़ा के रूप में प्रकट होता है। परन्तु इन उभारों से डरने की जरूरत नहीं है। ये सर्वदा स्वागत करने योग्य हैं। ये उभार अक्सर चिकित्सा के आरम्भ में ही होते हैं। इनसे डरकर स्नान आदि प्राकृतिक उपचार बन्द नहीं करने चाहिएं।

रोग नाश के लिए सबसे पहले हमें शरीर की भीतरी गर्मी को शान्त करना चाहिए और जीवनी शक्ति को उद्दीप्त करना चाहिए। जीवनी शक्ति के सहारे ही शरीर भोजन से पोषण ग्रहण करता है और विजातीय द्रव्य को पसीने, पेशाब, पाखाने द्वारा निकालता है। जीवनी शक्ति पर ही मनुष्य का शरीर निर्भर है। प्राकृतिक स्नान इन दोनों उद्देश्यों की पूर्ति करता है।

स्त्रियों को मासिक–धर्म के समय यह स्नान बन्द कर देना चाहिए पर नंगे पांव टहलना, वायु और प्रकाश स्नान करना, मिट्टी की पट्टी लेना आदि बन्द करने की जरूरत नहीं। इस समय इन्हें करते रहने से विशेष लाभ होता है।

स्वास्थ्य में किसी प्रकार की गड़बड़ी आने पर या स्वास्थ्य के बिल्कुल खराब होने की दशा में, जब नाना प्रकार की ओषधियाँ भी कोई सुधार न कर पायी हों– हमें प्राकृतिक स्नान का पूरे विश्वास के साथ प्रयोग करना चाहिये। जल प्रकृति की विशेष ओषधि है, जिसके द्वारा वह अपने बच्चों को बड़े–बड़े लाभ देना चाहती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज जिधर देखिये–कोई बहरा मिलेगा, किसी को दूर की वस्तु दिखाई नहीं देती, किसी के पैर सूजे हैं, किसी का कूबड़ निकला है, किसी का यकृत नाकाम है, किसी के मूत्राशय में गड़बड़ी है, कोई मिरगी के दौरे से परेशान है, कोई पागलपन का शिकार है, कोई दिमागी कमजोरी से पीड़ित है। कितने ही यक्ष्मा से पीड़ित हो कर मृत्यु की ओर बढ़ते दिखायी देते हैं; कितने ही उपदंश से ग्रस्त हैं। प्राकृतिक स्नान सभी रोगों का नाशक है।

मनुष्य जब पूरी तरह प्राकृतिक जीवन अपना लेगा तो वह अपने शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य के आदर्श के कितना निकट पहुँच जायेगा यह उसके वशांनुगत प्रभाव, उम्र, जीवनी शक्ति पर निर्भर करता है।

सभी रोग और विशेषतः जीर्ण रोग प्रकृति के नियमों के उल्लंघन का फल होते हैं। अपनी रसना के आस्वादवश व्यक्ति जो अप्राकृतिक भोजन करता है, वह पचता ही नहीं और यदि पचता भी है तो बड़ी कठिनाई से। ऐसे भोजनों के कारण तथा अन्य अनेक दुराचरणों के कारण शरीर की जीवनी शक्ति वा नाड़ी बल क्षीण हो जाता है। यहीं से जीर्ण रोग का आरम्भ होता है। विजातीय द्रव्य पेट से वायव्य, तरल या घन रूप में उठकर सारे शरीर में फैल जाता है। प्राकृतिक शक्तियों–ठण्डी हवा, शीतल जल, मिट्टी, आकाश–प्रकाश से उद्दीपन पाकर शरीर जब विजातीय द्रव्यों को निकालने की कोशिश करता है, तो इसे ही तीव्र रोग कहते हैं। तीव्र रोगों को, जिनसे लोग व्यर्थ ही डरते हैं, शरीर का शोधक एवं लाभकारी उभार समझना चाहिए और उनके आने पर सहर्ष उनका स्वागत करना चाहिए।

तीव्र रोग होने पर, चाहे वह साधारण जुकाम हो या हाफाडाफा, मियादी बुखार, हैज़ा आदि असाधारण रोग, प्राकृतिक स्नान करना चाहिए और फिर धूप लेकर या ऊनी कपड़े ओढ़कर पसीना लाने की कोशिश करनी चाहिए। इन रोगों में वायु और प्रकाश–स्नान खास तौर से लाभकारी हैं। भोजन भी पूर्णतया प्राकृतिक रखा जाये। यदि इन नियमों का पालन किया जाये तो परिणाम हमेशा उत्तम होगा और रोग जाने के बाद स्वास्थ्य इतना अच्छा हो जायेगा कि आप यह कह उठेंगे कि दयालु प्रकृति हमारे लाभ के लिये हमारे शरीर में रोग उत्पन्न करती है। तीव्र रोग होने पर जितना शीघ्र इन विधियों से उपचार आरम्भ कर दिया जायेगा उतना ही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चयात्मक रूप से और स्थायी लाभ मिलेगा।

औषधियाँ शरीर को पंगु बना देती हैं और उसके स्वाभाविक कार्यों को रोक देती हैं। जिसके फलस्वरूप शरीर में नाना प्रकार के नवीन और जीर्ण रोगों का जन्म होता है। जीर्ण रोगों की बढ़ी हुई दशा में जीवनी शक्ति अत्यन्त क्षीण हो जाती है। शरीर में विजातीय द्रव्यों को बाहर निकालने की शक्ति नहीं रह जाती या वह बहुत घट जाती है। प्राकृतिक जीवन शरीर को नया जीवन देता है। प्राकृतिक स्नान, भोजन और शुद्ध वायु के सेवन से शरीर में तीव्र रोग उत्पन्न हो जाते हैं। शरीर बहुत तेजी से मलों का शोधन आरम्भ कर देता है। ऐसे मौकों पर रोगी को तनिक भी डरने या घबराने की बात नहीं है। भयङ्कर और असाध्य रोग भी प्राकृतिक जीवन से कुछ ही सप्ताह या कुछ महीनों में सर्वथा निर्मूल हो जाते हैं। वर्षों पुराने जीर्ण रोग में भी व्यक्ति को धैर्य और लगन बनाये रखना चाहिये। रुग्णावस्था में व्यक्ति को चाहिये की शरीर और मस्तिष्क को पर्याप्त विश्राम दें। क्योंकि उस अवस्था में शरीर की सारी शक्ति निवारण में व्यय हो जाती है।

स्नान के सम्बन्ध में कुछ अन्य आवश्यक ध्यातव्य बातें–

(१) न स्नानमाचेरद् भुक्त्वा नातुरो न महानिशि।
न वासोभिः सहाजस्रं नाऽविज्ञाते जलाशये॥ मनु० ४।१२९॥

अर्थात् भोजन करके, रोग में, मध्यरात्रि में, कपड़े पहने हुए और अज्ञात गहरे जल में स्नान नहीं करना चाहिए।

(२) सदैव शीतल और शुद्ध जल से ही स्नान करना चाहिये। वर्षाकालीन नदी अथवा तड़ाग आदि का जल रोगोत्पादक होता है।

(३) उष्णेन शिरसः स्नानमहितं चक्षुषः सदा। (सुश्रुत)

अर्थात्–उष्ण जल सिर पर डालने से नेत्रों के लिये सदैव हानिकारक होता है। अतः उष्णजल से स्नान नहीं करना चाहिए।

(४) विना सिर भिगोये स्नान का लाभ नहीं होता। कहा भी है–

न च स्नायात् विना शिरः।

(५) पर्याप्त जल से खूब घर्षण करके स्नान करना चाहिए। सिर और पेडू पर पर्याप्त जल डालें।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(६) कौटिलीय अर्थशास्त्र में मुनिवर चाणक्य लिखते हैं–

न नग्नो जलं प्रविशेत्।

अर्थात्–नंगा होकर जल में स्नान न करना चाहिए। लंगोट पहनकर नहाना आर्य पुरुषों की मर्यादा है।

(७) स्नान से पूर्व शरीर पर तिल के तेल की मालिश करने से शरीर सुन्दर तथा त्वचा स्निग्ध होकर रक्त और त्वचा के अनेक रोगों से आरोग्य प्राप्त होता है। मालिश से शरीर की थकान दूर होती है। स्नायुमण्डल लचीला हो जाता है। शरीर में स्फूर्ति और उत्साह प्राप्त होता है। मालिश जीर्ण और थके हुए स्नायुमण्डल में नवजीवन का संचार करती है। शरीर को नई शक्ति मिलती है। तभी तो आयुर्वेद में कहा है–

घृतेन शतगुणं तैलं मर्दनेन न तु भक्षणेन।

अर्थात्– तेल की मालिश करना घृत के खाने से भी सौ गुणा अधिक लाभदायक है। रुग्ण घृत नहीं पचा सकते किन्तु तेल मालिश द्वारा घृत से शतगुणा अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। अतः स्नान से पूर्व यथासंभव मालिश अवश्य करनी चाहिए।

(८) स्नान में साबुन का प्रयोग त्वचा के लिए हानिकारक है। मल छुड़ाने के लिये आँवले या त्रिफले का प्रयोग उत्तम है।

(९) स्नान के बाद शरीर को सूखे और साफ तौलिये से अच्छी प्रकार रगड़कर पोंछ देना चाहिए सिर के बालों को भी भली प्रकार सुखा लेना चाहिये। गन्दे तौलिये का प्रयोग नहीं करना चाहिए। कभी भी किसी दूसरे व्यक्ति के तौलिये तथा कंघे व ब्रुश का प्रयोग भूलकर भी नहीं करना चाहिए। दूसरे के तौलिये, कंघे व ब्रुश के प्रयोग से अनेक रोगों के लग जाने की आशंका होती है। यहाँ तक की दूसरे के बिस्तर में सोना भी हानिकारक है। मलिन वस्त्र रोगों का घर होते हैं। स्नान के साथ ही प्रतिदिन के वस्त्र भी जल में निकाल देने चाहियें। शरीर की सफाई के साथ–साथ वस्त्र और आवास की सफाई भी स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है। जो लोग चेहरा तो चिकना चुपड़ा बना लेते हैं किन्तु सफ़ाई पर ध्यान नहीं देते वे रोगों से नहीं बच सकते।

(१०) शीतल स्नान के बाद शरीर को कुछ गर्मा लेना चाहिए। स्वस्थ व्यक्ति व्यायाम के द्वारा तथा रुग्ण और कमजोर व्यक्ति कम्बल ओढ़ कर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर को गर्म करें। शीतकाल में इसका विशेष ध्यान रखें। शीतल जल के किसी भी प्रयोग के बाद शरीर को गर्माना आवश्यक है। यदि इस नियम का सावधानी से पालन किया गया तो कमजोर व्यक्ति को भी किसी खतरे की आशंका न रहेगी।

जल–पान

यहाँ जल–पान के विषय में कुछ कहना आवश्यक है।

प्रश्न– पानी कब पीयें ?

उत्तर– जब भी प्यास लगे, पीजिये।

प्रश्न– कितना पानी पीयें ?

उत्तर– आवश्यकतानुसार। न कम, न अधिक।

कुछ बातों का विशेष ध्यान रखा जाए। प्रातःकाल सोकर उठें तो जल अवश्य पीयें। भोजन के पूर्व आचमन करें तथा पश्चात् एक घण्टे तक जल–पान न करें। भोजनोपरान्त दान्त साफ कर लें। यदि भोजन शुष्क है तो भोजन के बीच में आवश्यकता होने पर जल ले लें। व्यायाम या किसी कठोर परिश्रम में स्वेद के रूप में जल की काफी मात्रा शरीर से बाहर निकल जाती है। अतः व्यायामी व्यक्ति को अधिक पानी की आवश्यकता होगी। किन्तु व्यायाम के तुरन्त पश्चात् गर्म शरीर में जल पीना हानिकारक है। जब रक्त गति स्वाभाविक स्थिति में आ जाये तभी जल लेना चाहिए। पीने का पानी सदैव शुद्ध और शीतल होना चाहिए। पीने के लिए उष्ण जल की अपेक्षा शीतल जल सदैव अधिक गुणकारी है। एक साथ अधिक जल पीने की अपेक्षा थोड़ा–थोड़ा कई बार में पीना अधिक हितकारी है।

जल के कुछ अन्य प्रयोग

नेति, धोती, कुञ्जल, एनिमा आदि जल के कुछ अन्य उपयोग भी हैं। जो शरीर की विभिन्न अवस्थाओं में अत्युपयोगी हैं। इनका स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त महत्त्व है और ये क्रियाएँ रोग की अवस्था में सद्यः लाभकारी होती हैं। किन्तु ये यौगिक क्रियाएँ किसी योग्य चिकित्सक वा योगाभ्यासी व्यक्ति की देखरेख में ही सीखनी चाहिए। बिना जाने मन माने ढंग से, या किसी पुस्तक में पढ़ लेने मात्र से अल्पज्ञान के आधार पर चलने में अर्थ का अनर्थ भी हो जाता है। हमने ऐसे ही कई नौसिखियों को अपने अज्ञान का फल भोगते देखा है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. हमारा भोजन कैसा हो ?

पिछले अध्याय में जल के प्रकरण में भोजन को शरीर रक्षा का एक अनिवार्य उपादान बतलाया था। जैसे हवा और पानी के बिना शरीर नहीं चल सकता वैसे ही भोजन के अभाव में भी जीवन नहीं रह सकता। शास्त्र में कहा है—अन्नं वै प्राणाः। अर्थात्— अन्न को प्राणरूप है।

भाव प्रकाश में लिखा है—

आहारः प्रीणतः सद्योबलकृद् देहधारणः।
स्मृत्यायुःशक्तिवर्णोजःसत्त्वशोभाविवर्धनः॥ (४-१)॥

अर्थात्—भोजन से तत्काल ही शरीर का धारण और पोषण होता है। बल, आयु, स्मृति, शक्ति, वर्ण, ओज, सत्त्व और शोभा बढ़ती है।

चरक शास्त्र में भी इसी प्रकार अन्न का गुण कीर्त्तन करते हुए महर्षि जी लिखते हैं—

बलमारोग्यमायुश्च प्राणाश्चाग्नौ प्रतिष्ठिताः।
अन्नपानेन्धनैश्चाग्निर्दीप्यते शाम्यतेऽन्यथा॥

अर्थात्— बल, आरोग्य, आयु और प्राण शरीर की अग्नि के आश्रित रहते हैं। तथा अन्नपान रूपी इन्धन से अग्नि की स्थिति, उसका दीपन और शमन होता है।

मानव शरीर इस जगत् में परमात्मा की सर्वोत्तम कृति है। इसमें करोड़ों स्वतन्त्र इकाईयाँ काम कर रही हैं। जिन्हें हम कोष कहते हैं। शरीर का प्रत्येक कोष एक सजीव कोष्ठक के रूप में कार्य कर रहा है। ये कोष्ठक शरीर के ऊर्जा—उत्पादन केन्द्र हैं। हमारे द्वारा खाये हुए भोजन से जो रक्त निर्माण होता है, उसी से ये कोष्ठक पैदा होते, बढ़ते और जीवित रहते हैं। स्वास्थ्य को स्थिर बनाये रखने के लिए उसी रक्त से ये इन्धन प्राप्त करते हैं। रक्त के द्वारा ही इन कोषों को आक्सीजन भी प्राप्त होती है। इसीलिये विद्वानों ने रक्त को प्राण कहा है। भोजन जहाँ बल, आयु और आरोग्य का हेतु है, वहाँ आयुर्वेद के ग्रन्थों के अनुसार प्रकृति से विपरीत भोजन इनका नाश भी कर देता है। जैसा कि कहा भी है—

आहारवैषम्यादस्वास्थ्यम्।

अब प्रश्न यह है कि मनुष्य क्या खाये ? जिससे वह बलवान्,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुष्मान् तथा स्वस्थ जीवन जी सके। इसका एक और केवल एक ही उत्तर है। वह है– शुद्ध प्राकृतिक भोजन।

कितने बड़े आश्चर्य की बात है कि संसार में लाखों डाक्टरों तथा अनेक नोबेल पुरस्कार विजेताओं के होते हुए भी आज की मनुष्य जाति अगणित बीमारियों का शिकार बनी हुई है। कैंसर, मधुमेह, हृदयाघात जैसी बीमारियाँ इस रफ्तार से बढ़ रही हैं कि दिल कांपता है और लगता है कि पृथ्वीतल से कहीं किसी दिन सारी मानव जाति का ही विनाश न हो जाये।

प्रकृति देवी ने अरबों वर्ष पूर्व अपनी अद्भुत शक्ति से मानव शरीर की उत्कृष्टतम रचना की थी और उसी के निर्माण के साथ ही उस माँ ने सब प्रकार के उपादानों का भी निर्माण किया था जो कि इस शरीर के जीवन रक्षण तथा परिवर्धन के लिये आवश्यक हैं। प्रकृति ने प्रत्येक खाद्य द्रव्य को अपने में पूर्ण बनाया है। यदि प्रकृति के नियमानुसार शरीर को पोषण मिलता रहे तो यह मानव शरीर अपनी अधिकतम आयु जीवित रहकर जीवन के सुखों का उपभोग कर सकता है। मानव शरीर की हज़ारों संश्लिष्ट तथा सूक्ष्म प्रक्रियाओं को ठीक–ठीक चलाने के लिये प्रकृति ने जिस रूप में खाद्य सामग्रियों की रचना की है उनमें यदि किञ्चिन्मात्र भी परिवर्तन कर दिया जाता है, तो उससे प्रकृति के कार्यों में अनेक अव्यवस्थाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। जो शरीर में अनेक रोगों के रूप में प्रकट होती हैं। मनुष्य जाने–अनजाने अनेक प्रकार से प्राकृतिक खाद्य द्रव्यों को विकृत करके दैनिक भोजन में ग्रहण करता है। उन विकृत द्रव्यों से शरीर को पूर्ण पोषण नहीं मिल पाता। जिसके परिणामस्वरूप शरीर में प्रोटीन व चर्बी आवश्यकता से अधिक बढ़ जाते हैं तथा उच्च स्तर के पोषक तत्त्वों की कमी हो जाती है। जिनके अभाव में नाना प्रकार के रोगों की उत्पत्ति होती है। आरम्भ में रोग उन लक्षणों के रूप में प्रकट होते हैं जिन्हें मनुष्य अनुभव तो करता है किन्तु स्पष्ट शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। पोषण के निरन्तर अभाव से मानव शरीर के कोष्ठक इतने दुर्बल हो जाते हैं कि प्रकृति के तनिक से व्याघात को भी वे सहन नहीं कर सकते। ऐसे शरीर पर ही छूत की अनेक बीमारियों का आक्रमण होता है। शरीर की प्रतिरोधक शक्ति सर्वथा समाप्त हो जाती है। शरीर की प्रतिरोधक शक्ति पुनः प्राप्त करने के लिए जब हम दवाईयों का प्रयोग करते हैं तो यह हम अपने शरीर के प्रति भारी अपराध करते हैं। पोषण के सिद्धान्त को ठीक से समझे बिना दवाईयों के बल पर शक्ति की कामना करना बहुत बड़ी भूल है। यौगिक एवं प्राकृतिक विधियों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के द्वारा शरीर से अनावश्यक विकारों को पृथक् करके शुद्ध प्राकृतिक आहार के द्वारा ही शरीर को पुनः सशक्त बनाया जा सकता है।

मानव शरीर के लिए शुद्ध प्राकृतिक भोजन ही पुष्टि का एक मात्र साधन है। अग्नि में भोजन पकाने की प्रक्रिया कितनी प्राचीन है यह हम नहीं कह सकते। किन्तु यह स्पष्ट है कि इस प्रक्रिया के द्वारा हमारे भोजन के हज़ारों जीवित कोष्ठक जल कर नष्ट हो जाते हैं। तथा अवशिष्ट भोजन में प्रोटीन, वसा तथा कार्बोहाइड्रेट्स शेष रह जाते हैं। और इनकी अधिकता से शरीर के कोष्ठक निरुद्देश्य रूप से बढ़ने लगते हैं। कैंसर आदि के कोष्ठक उन निरुद्देश्य रूप से बढ़े हुए कोष्ठकों के नमूने हैं।

शराब, मांस, चाय, कोको, काफी, तम्बाकू, अफीम आदि का व्यसन मानव शरीर में अनेक विषों को जन्म देता है। धीरे-धीरे ये विष शरीर के विभिन्न भागों में जमा होते जाते हैं। पका हुआ भोजन भी शरीर में अनेक विषों को पैदा करता है। बढ़े हुए ये विष शरीर में उत्तेजना पैदा करते हैं। जिससे मनुष्य बार-बार उन्हीं विषयुक्त भोजनों की ओर दौड़ता है। उन भोजनों को पचाने में भी शरीर की तीन-चार गुणा अधिक शक्ति व्यय हो जाती है। जिससें वह व्यक्ति हर समय शरीर में एक थकान सी अनुभव करता रहता है।

शरीर का पोषण जीवित कोष्ठकों से होना चाहिए। पूर्णतया संतुलित खाद्य-द्रव्य जीवित कोष्ठकों से युक्त होते हैं। शाक, सब्जियाँ, भूमि से उखाड़ने के बाद भी देर तक जीवित रहती हैं। अनाज वर्षों तक अपने में अंकुरण की शक्ति को संजोये रखते हैं। परन्तु मारे गये प्राणियों के रक्त वा मांस के कोष्ठक तथा प्राणियों के शरीर से बाहर निकाले गये दूध के कोष्ठक तत्काल मर जाते हैं। और उनका विकृत होना आरम्भ हो जाता है। तथा वे विष में परिवर्तित हो जाते हैं। पकाने पर तो वे ऐसे रूप में परिणत हो जाते हैं जो कि बहुत भयंकर होता है।

हमारे रसोईघरों में पकाने के नाम पर भोजन के जो पोषक तत्त्व नष्ट कर दिए जाते हैं उनका स्थान संसार की कोई औषधि नहीं ले सकती। औषधि केवल रोग के लक्षणों को छिपा देती है। ये औषधियाँ दुर्बल शरीर को और अधिक दुर्बल तथा विकृत कर देती हैं।

जो मनुष्य अपने स्वास्थ्य को बरकरार रखना चाहता है अथवा जो बीमारियों के भयंकर शिकंजे से मुक्त होना चाहता है उसे औषधियों पर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वास नहीं करना चाहिए। अप्राकृतिक भोजन तथा औषधियों का प्रयोग सर्वथा त्यागकर प्राकृतिक भोजन करें– यही स्वास्थ्य का रहस्य है। यह ही सच्चा, सुरक्षित और वैज्ञानिक रास्ता है। जबकि औषधोपचार धोखाधड़ी और अपने प्रति छल है। संसार में ऐसी कोई औषधि नहीं, जिसका शरीर पर हानिकारक प्रभाव न होता हो। अपक्व भोजन से तत्काल ही सब प्रकार की औषधियों के प्रयोग की समाप्ति हो जाएगी। क्योंकि रोगों के अभाव में स्वभावतः ही औषधियों की आवश्यकता नहीं रहेगी।

प्रकृति में सामान्य तथा विशेष दोनों प्रकार की वनस्पतियाँ उपलब्ध हैं। सबसे पूर्ण तथा अत्यधिक पोषक वनस्पतियाँ हैं– ऊँची किस्म के फल, हरी सब्ज़ियाँ, अनाज तथा कन्दमूल। जहाँ तक़ सम्भव हो मनुष्य को इन्हीं अत्यन्त पोषक अमूल्य तत्त्वों का आहार करना चाहिए। मांस, अण्डे, चावल, बिस्कुट आदि स्वास्थ्य तथा शक्ति प्रदान नहीं करते। जबकि स्वास्थ्य एवं शक्ति पाने का एकमात्र उपादान हैं– अंकुरित अनाज, गाजर, टमाटर, मेवे तथा अंगूर आदि दूसरे फल। उचित तो यही है कि गर्मियों में ताजे फल, गाजर, ककड़ी, खीरे तथा टमाटर के टुकड़े और सर्दियों में मेवों के बक्स खोलकर परिवार के बच्चों के सामने रख दिए जायें। हमारे भोजन में पचास प्रतिशत स्थान ताजे सलाद को दिया जाना चाहिए। सभी फलों और सब्जियों के गुणों में लगभग समानता होती है। उनमें से प्रत्येक में पोषण के सभी तत्त्व विद्यमान होते हैं। मनुष्य को कोई भी बीमारी हो वे शरीर की मांगों को पूरा करते हैं। शरीर के कार्यों को वे व्यवस्थित करते हैं तथा खोये हुए स्वास्थ्य को वापिस ले आते हैं। इन तथ्यों की जानकारी लोगों को निःशुल्क दी जानी चाहिए। हमें मैदे की बनी रोटी तथा चावल के स्थान पर अंकुरित गेहूँ, चीनी के स्थान पर शहद, दुग्ध-चूर्ण के स्थान पर ताजी गाजर, संतरे, अंगूर तथा सेवों के रस, मुरब्बों के स्थान पर ताजे फल, मांस तथा वसाओं के स्थान पर अखरोट, बादाम, अंकुरित चने तथा टमाटर लेने चाहिएँ।

प्रायः लोगों का यह ख्याल रहता है कि अनाज, दाल, आलू, बैंगन आदि द्रव्यों का प्राकृतिक रूप में सेवन अशक्य है किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। आप अंकुरित गेहूँ, दाल आदि को कूटकर महीन कर सकते हैं तथा आलू, गाजर को कद्दूकस कर सकते हैं। ककड़ी, खीरा, टमाटर, मूली आदि को चाकू से काटकर टुकड़े कर लें, अन्य हरी सब्जियाँ भी उसमें मिला लें। निम्बू काटकर उसका रस इनके ऊपर निचोड़ दें। यदि आप चाहें तो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसमें खजूर, किशमिश, अखरोट आदि भी मिला सकते हैं। सलाद में जितनी भी हरी सब्जियाँ उपलब्ध हों, उनका उपयोग कर सकते हैं। परन्तु सलाद के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटक हैं–अनाज, दाल और आलू। सलाद की इस एक प्लेट के साथ कुछ मौसम के अनुसार फल ले लिए जाएँ तो मनुष्य की दैनिक भोजन की आवश्यकता पूर्ण हो जाती है। इसके साथ ही वह प्रत्येक प्रकार की बीमारी के आक्रमण से भी बच जाता है।

जो लोग यह समझते हैं कि अपक्व भोजन मंहगा पड़ता है यह भी उनकी भूल ही है। प्रथम तो यह चिन्तन ही गलत है क्योंकि वे अपनी आय का बहुत बड़ा भाग पक्व भोजन लेते हुए दवाईयों पर भी तो खर्च करते ही हैं। दूसरे कोई भी समझदार व्यक्ति अनुभव से यह जान सकता है कि जितने आटे की रोटी वह एक समय में खाता है उसकी अत्यल्प मात्रा में ही अंकुरित गेहूँ के साथ थोड़ा फल लेकर ही वह तृप्त हो जाता है। गेहूँ, दाल और आलू का मूल्य भी वर्षभर प्रायः समान ही रहता है तथा मौसम के फल भी सस्ते पड़ते हैं।

सूखे मेवों को रातभर ठण्डे पानी में भिगोकर रख देने से उनका मुरब्बा तैयार हो जाता है। इस मुरब्बे में नारियल, पिस्ता, अंकुरित गेहूँ, इलाइची, शहद आदि भी मिला सकते हैं।

बादाम, पिस्ता, अखरोट, नारियल आदि सूखे मेवों को अन्य फलों के साथ मिलाकर भी खाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इनका चूर्ण बनाकर कच्ची सब्ज़ियों या अन्य मुरब्बों के साथ भी मिलाकर लिया जा सकता है।

अपक्व भोजन लेने वालों के लिये अखरोट, बादाम, तथा पिस्ते का हलवा बहुत ही स्वादिष्ट भोजन है। इन्हें पीसकर इनका चूर्ण शहद के साथ गूँद लेते हैं तथा स्वाद के अनुसार इलाइची या केसर मिलाकर चौकोर टुकड़े काट लेते हैं। यह मिठाई हरी सब्ज़ियों के साथ खाने में बड़ा ही आनन्द आता है। पुष्टिकारक तत्त्वों में अपक्वभोजी के लिये शहद का विशेष महत्त्व है। शहद को नीम्बू पानी के साथ पेय रूप में लिया जा सकता है।

यदि हम इस सच्चाई को हृदयङ्गम कर लें कि जिस शक्ति ने मानव शरीर का निर्माण किया है, उसी ने इस शरीर के लिए उपयुक्त सामग्री का भी निर्माण किया है और उस सामग्री में अपनी बुद्धि से, बिना कोई रद्दो बदल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किए उसकी प्राकृतिक अवस्था में ही हम उसे ग्रहण करें तो मानव शरीर कभी भी बीमार न पड़ेगा और मानव अपनी दीर्घायु का उपयोग कर सकेगा।

स्तनपायी पशुओं तथा मनुष्यों में मादा के स्तनों में बालक के जन्म होने से पूर्व ही दूध की व्यवस्था प्रकृति की कितनी विस्मयकारी घटना है। प्रकृति को अपने शिशु से कितना वात्सल्य है इसका अनुमान हम नहीं लगा सकते। माँ का दूध मनुष्य का सर्वप्रथम और सर्वश्रेष्ठ आहार है। इस आहार का अन्य कोई विकल्प नहीं हो सकता। यह पूर्णतया प्राकृतिक है। दूध माँ के शरीर में उसके खाये हुए भोजन से ही बना हुआ रस है और वह रस प्रकृति माता ने गर्भवती और प्रसूता स्त्री को उस बालक के पोषण के लिये दिया है। उस दूध के सेवन से बालक का शरीर बढ़ता और पुष्ट होता है। वह दूध बालक लगभग एक वर्ष तक पीता रहता है। जब उसका शरीर बढ़ जाता है, तो मुँह में भी दांत उग आते हैं क्योंकि दयालु प्रकृति माँ और बेटे दोनों ही पर समान उपकार करती है। माँ अधिक देर तक बच्चे को दूध पिलाती रहेगी तो उसके शरीर का पोषण रुक जायेगा और बच्चे के शरीर की वृद्धि होने से अब माँ के दूध से उस की तृप्ति भी न होगी। अतः बच्चे को प्रकृति ने भोजन को कतरकर खाने के लिए दांत दे दिये। माँ और बच्चे के शरीर में यह सब प्राकृतिक विकास है।

दूध के पश्चात् बालक के शरीर-पोषण के लिये दूसरे खाद्य-द्रव्यो का चुनाव उस बालक की माता की बुद्धि पर निर्भर करता है। और माता-पिता द्वारा किया गया खाद्य-द्रव्यों का यह चुनाव बालक के शरीर-पोषण, बल, आयु, आरोग्य, स्मृति, शक्ति, कान्ति, ओज, तेज, वीर्य आदि का निर्माण करता है। इसी चुनाव पर बालक के जीवन रूपी भवन की नींव रखी जाती है। इसी कारण इस क्रिया की महत्ता को ध्यान में रखते हुए हमारे महर्षियों ने इसे अन्नप्राशन-संस्कार की संज्ञा दी थी। अपने इस महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व के प्रति किन्हीं भी माता-पिता को उपेक्षा नहीं बरतनी चाहिए। और गम्भीर विचारपूर्वक सावधानी से उन्हीं खाद्यों का चयन करना चाहिए. जो उनकी प्रिय सन्तानों में उपर्युक्त गुणों का सर्जन और वृद्धि कर सकें। अन्यथा अपनी असावधानी का खामियाजा अपनी सन्तान सहित उन्हें स्वयं भी उठाना होगा।

माँ के दूध के पश्चात् बालक का आहार क्या हो जो गुणों में माता के दूध से समता रखता हो ? गाय का दूध और फल उसकी पूर्ति कर देते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। गाय का दूध पथ्य, रसायन, बलकारक, हृदय के लिये हितकारी, मेध्य, आयुष्कर, वीर्यवर्धक, वातनाशक और रक्तपित्त के विकारों को नष्ट करने वाला है। भैंस के दूध में ये गुण नहीं होते। वह दूध भारी, निद्रा और आलस्य को पैदा करने वाला, जठराग्नि को मन्द करने वाला, कामोद्दीपक, क्रोध और तमोगुण को बढ़ाने वाला होता है। गाय के दूध में ये सब दोष नहीं होते। गाय का दूध शीतल, मधुर बुद्धिवर्धक, नेत्रों के लिए हितकारी, सभी रोगों और बुढ़ापे को दूर करने वाला होता है।

दूध के विषय में हमें यहाँ दो विशेष बातें कहनी हैं। १. दूध स्त्री के शरीर का हो या गाय के शरीर का वह एक रस है। इसके पान का प्राकृतिक प्रकार वही है जैसे कि मानव का शिशु अपनी माँ अथवा गाय का बच्चा गाय के स्तनों से पीता है। फिर भी गाय के पास जाकर यदि हम धारोष्ण दूध नहीं ले सकते तो भी निकालने के बाद जितना शीघ्र सम्भव हो तो ले लेना चाहिये क्योंकि कोई भी रस हो उसमें एक घण्टे के बाद विकार आने लगता है। उसकी स्वाभाविकता नष्ट हो जाती है। इसलिये उसे निकालते ही तुरन्त ले लेना चाहिये और बिना मीठा मिलाये ही उसे बच्चे की तरह धीरे–धीरे पीना चाहिए।

२. दूध को कभी भी गर्म नहीं करना चाहिए। गर्म करने से दूध के अपने गुण नष्ट हो जाते हैं। गर्म दूध करके पीना और पिलाना अप्राकृतिक है। दूध को गर्म करके पीना अथवा देर से दुहकर रखा हुआ पीना दोनों ही अवस्थाओं में प्रकृति का विरोध है। आप सदैव धारोष्ण दूध का ही सेवन करें। यदि छोटे बच्चे को भूख लगे और धारोष्ण दूध सम्भव न हो तो फल का रस दें। ऐसा करने पर बालक का बहुत सहज विकास होगा।

जो लोग कीटाणुओं के भय से दूध को गर्म करने का तर्क देते हैं वह ठीक नहीं। क्योंकि प्रथम तो गर्म दूध में दूध के स्वाभाविक गुण ही नष्ट हो जाते हैं। दूसरे यदि दूध में कीटाणु थे तो गर्म करके हमने उन्हें शव रूप में परिवर्तित कर दिया। तो उस अवस्था में जीवित कीटाणु हमारे शरीर में जाकर जो हानि करता है क्या मृत कीटाणु का शव शरीर में जाकर औषधि का काम करेगा ? दिनभर चाय के व्यसनी लोग दूध को देर तक रखने के लिये कीटाणुओं का बहाना खोज लेते हैं।

कीटाणुओं के विषय में हमें यह जान लेना चाहिए कि किसी वस्तु में जब कोई विकार उत्पन्न होता है तो उसमें एक विशेष प्रकार का कीटाणु

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैदा हो जाता है। जैसे पानी के विकृत होने पर जो कीटाणु पानी में पैदा होता है दूध के कीटाणु से सर्वथा भिन्न होता है। दूध में विकार आने पर एक विशेष प्रकार का कीटाणु उत्पन्न होता है जो दूध को दही में परिवर्तित कर देता है। जिसे हम 'एन्ज़ाइम' कहते हैं। सोचने की बात है कि दही में 'एन्ज़ाइम' कीटाणु के रहते हुए आप उसे बिना किसी हिचकिचाहट के खा लेते हैं। फिर यदि वह कीटाणु थोड़ी मात्रा में दूध में उत्पन्न हो ही गया तो उसमें खतरे की कौन सी बात है। वह तो अन्दर पेट में जाकर आप के पाचन में मदद ही करेगा। ऐसी हालत में यदि आप दूध को गर्म करते हैं तो वह एन्ज़ाइम भी गर्मी पाकर मर जाता है और उसके शव के विष के कारण दूध फट जाता है। अब वह न दूध रहा न दही। अतः दूध को कीटाणुओं के भय से गर्म करने की कोई आवश्यकता नहीं है। हाँ, इतना ध्यान अवश्य ही रखना चाहिए कि जो आप दूध लेते हैं, वह बीमार पशु का न हो। गाय के भोजन का भी उसके दूध पर प्रभाव पड़ता है। गाय का भोजन यदि पौष्टिक होगा तो उसका दूध भी पौष्टिक होगा।

भोजन में दूध के पश्चात् फलों का स्थान है। फलों में बल, वीर्य, कान्ति और ओज प्रदायिनी शक्ति कूट-कूटकर भरी हुई है। फलाहार से सत्त्व की वृद्धि, आरोग्यता की प्राप्ति, सुख और प्रीति की उपलब्धि होती है। तथा मन शान्त होकर मेधाबुद्धि की वृद्धि होती है। फल बहुत ही घनीभूत और अत्यन्त पोषक खाद्य द्रव्य होते हैं। फलों में सभी प्रकार के विटामिन और खाद्योज भरे हुए हैं। फल पचने में सुपच और खाने में अत्यन्त स्वादिष्ट होते हैं। रोग निवारण की इनमें अद्भुत क्षमता होती है। भयंकर से भयंकर असाध्य रोग भी केवल फलों के प्रयोग से समूल नष्ट हो जाते हैं। सूखे गिरीदार फलों में तो पोषक-शक्तियाँ और भी घनीभूत हो जाती हैं। उन्हें भिगोकर प्रयोग कर सकते हैं।

अनांज और दालों को प्राकृतिक रूप में प्रयोग करने के लिए उन्हें अंकुरित कर लेना चाहिये। अंकुरित कर लेने पर उनके गुणों में और भी अधिक वृद्धि हो जाती है। जैसे सौ ग्राम गेहूँ को अंकुरित करके उसकी सामान्य गेहूँ से तुलना की जाए तो अंकुरित गेहूँ गुणों में कई गुणा आगे बढ़ जाता है। जो निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट है –

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौ ग्राम मात्रा में तुलनात्मक तालिका

	गेहूँ	अंकुरित गेहूँ
प्रोटिन	११.८	२९.२
चिकनाई	१.५	७.४
खनिज लवण	१.५	३.५
रेशा	१.२	१.४
कार्बोहाइड्रेट्स	५३.३	६०.९
कैल्शियम	४०.०	२०.२
लोहा	६.०	१०.२
फासफोरस	३१.२	८४.६
नमी	५.२	१२.८
कैरोटीन	–	१८९
थाईसिन	१.४०	०.३०
विटामिन सी	०.०	३
विटामिन बी–२	०.५४	०.१५
विटामिन बी–एच	२.९	२.९
ऊर्जा	३९७	३६०

आप देखेंगे कि अङ्कुरित गेहूँ में प्रोटीन लगभग तीन गुणा, चिकनाई पाँच गुणा, खनिज लवण दो गुणा कैल्शियम पाँच गुणा बढ़ जाता है और कई नये विटामिन जैसे विटामिन सी, विटामिन इ पैदा हो जाते हैं।

हरी ताजी सब्जियों को तो अपने प्राकृतिक रूप में लेने में कोई आपत्ति ही नहीं होनी चाहिए। उनका हम सलाद के रूप में यथेष्ट प्रयोग कर सकते हैं।

प्राकृतिक भोजन के सजीव कोष्ठकों द्वारा शरीर को पोषण देना स्वास्थ्य का मूल सिद्धान्त है। प्राकृतिक भोजन मानव के शरीर के सर्वथा अनुकूल तो है ही। यह शरीर को पोषण देने तथा रोगों को निर्मूल करने की पूर्ण क्षमता से भी युक्त है। अपने शरीर की प्रकृति के अनुसार पदार्थों का चयन आप स्वेच्छापूर्वक कर सकते हैं। जो पदार्थ आप के अनुकूल नहीं उसे आप न लें। हाँ, जो पदार्थ अनुकूल हैं उनके सेवन में दो बातों का ध्यान रखना चाहिए–१. सदा भूख लगने पर ही खायें। २. पेट को ठूस–ठूसकर न भरें अर्थात् पेट को कुछ खाली रखते हुए ही खायें। बस, खाया हुआ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन फिर आपकी औषधि बन जाएगी।

प्रकृति ने मनुष्य को स्वभावतः शाकाहारी पैदा किया है। यदि अपने स्वभाव के विपरीत, वह मद्य मांस, अण्डा, मछली आदि का सेवन करता है तो उसके शरीर न केवल ही बल्कि मन और मस्तिष्क का भी रोगी होना निश्चित है। मनीषियों ने कहा है–

अमन्ति रोगिणो भवन्ति येन भक्षितेन तदामिषम्।

अर्थात्– जिन पदार्थों के सेवन से शरीर रोगी हो जाता है वे आमिष कहलाते हैं। मांसाहार से मनुष्य का शारीरिक और मानसिक पतन होता है। शरीर में रोग और मन में क्रूरता का जन्म होता है। बौद्धिक सन्तुलन को खोकर व्यक्ति न पचने वाले मांस को शराब पीकर पचाना चाहता है। इस प्रकार एक मांसाहार का दोष मद्यरूपी शैतान के लिए भी दरवाजा खोल देता है और मद्य सेवन से सत्याचरण का सर्वथा लोप हो कर वेश्यागमन, बलात्कार, व्यभिचार, द्यूत आदि पापाचार का उदय होता है। जिस समाज वा जाति में इन दोषों ने जन्म लिया हो वे जातियाँ इतिहास में बहुत दिनों तक जिन्दा नहीं रह सकतीं क्योंकि धन, बल और बुद्धि के आश्रय पर ही देश, जाति वा राष्ट्र खड़े होते हैं और ये मद्य मांस आदि पाप मनुष्य के बल, बुद्धि, चरित्र और धन आदि सभी को ले डूबते हैं। शराब पीकर व्यक्ति पत्नी और पुत्री का विवेक ही खो देता है। आज के युग में मद्यपान मानव समाज में फैशन और प्रतिष्ठा का विषय बन गया है। इस भयंकर पाप ने शहरों की सड़कों से अब गाँव की पगडंडियों की ओर भी अपना कदम बढ़ाया है। मानव जाति का भविष्य खतरे में है।

मांसाहार का समर्थन करने वाले जीवशास्त्रियों, वा चिकित्सकों को यह विचार करना चाहिए कि जैसे मनुष्यजाति में रक्त के पृथक्–पृथक् वर्ग होते हैं और एक वर्ग का रक्त दूसरे वर्ग के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता इसी प्रकार रक्त के कोष्ठकों से निर्मित हुए माँस के भी पृथक्–पृथक् ही वर्ग होंगे। जैसे मनुष्य की एक श्रेणी का रक्त दूसरी श्रेणी के रक्त से गुण–धर्म में सर्वथा पृथक् होता है, वैसे ही मनुष्य का रक्त गुण–धर्म में गाय, सूअर, भेड़, बकरी आदि के रक्त से भी मेल नहीं खाता। यदि ऐसा न होता तो रक्त की अल्पता में मनुष्य को इन्हीं पशुओं का रक्त दे दिया जाता किन्तु ऐसा तो हम सोच भी नहीं सकते। रक्त के कोष्ठकों से ही मांस के कोष्ठक तैयार होते हैं। जो घनीभूत होकर रासायनिक क्रियाओं के कारण और अधिक संश्लिष्ट

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाते हैं। मूल में किसी एक जाति के पशु के मांस के भौतिक तथा रासायनिक गुण उसके रक्त के गुणों के समान ही रहते हैं। जैसे भेड़ का रक्त ऊँट के रक्त से गुणों में भिन्न है, उसी प्रकार भेड़ का मांस भी ऊँट के मांस से सभी गुणों में भिन्न है। और यही बात भेड़, बकरी, सूअर या गाय के मांस तथा मनुष्य के मांस के साथ भी है। उनके मांस का वर्ग तथा सभी गुण मनुष्य के मांस से मेल नहीं रखते। अतः जीवविज्ञान व शरीरविज्ञान की दृष्टि से किसी भी पशु के रक्त व मांस का वर्ग मनुष्य के रक्त और मांस से मिलान किये बिना उसका प्रयोग अत्यन्त भयावह है। साक्षात् रोगों को निमन्त्रण है।

क्या कोई योग्य चिकित्सक किसी मनुष्य का मांस फट जाने पर उसके स्थान पर सर्जरी से अपनी प्रयोगशाला में किसी पशु का मांस लगाने को तैयार होगा ? यदि नहीं, तो उसके खाने की राय किस आधार पर दे दी जाती है ? अगर, आप कहें कि वह पाचन-प्रणाली से होकर शरीर के अनुकूल हो जाता है, तब तो कुत्ते, बिल्ली, भेड़िये, भालू, बन्दर और शेर आदि पशुओं के मांस भी अनुकूल हो जाने चाहिए। वस्तुतः मांस भक्षण के पीछे मानवीय स्वभाव में छिपी हुई दैत्य-प्रवृत्ति ही काम कर रही है। जो स्वपक्ष को सत्य सिद्ध करने के लिए नाना प्रकार के बहाने खोजती है। दुर्जनतोष न्याय से रक्त और मांस आदि मानव का भोजन मान लिया जाए तो भी जीव विज्ञान की दृष्टि से केवल वह अपने वर्ग के रक्त और मांस का ही सेवन कर सकता है और वह वर्ग उसके अपने कुल, परिवार, पुत्र, कलत्र में ही मिलेगा। परन्तु क्या मनुष्य अपनी आसुरी प्रवृत्ति की तृप्ति के लिए कभी ऐसा सोच सकेगा ? प्रकृति के प्रांगण में केवल मांस खाने वाले प्राणी हत्या करते हैं। किन्तु मनुष्य ने भी भ्रातृ-हत्या या जीव-हत्या करके अपने पतन का सूत्रपात किया। अगर मनुष्य मांसाहार न करता तो यहाँ हत्या का कोई अर्थ नहीं था।

नीचे हम दुनिया के कुछ प्रसिद्ध डाक्टरों की मांस और अण्डे पर सम्मतियाँ दिखलाते हैं कि वे मानव स्वास्थ्य के लिए कितने हानिकारक हैं–

(१) लन्दन के प्रसिद्ध डा. एलेक्जैण्डर हेग अपनी पुस्तक यूरिक एसिड इज ए फैक्टर इन दा कौंजेशन ऑफ डिसीजिज़ में लिखते हैं कि मांस से हमारे शरीर में यूरिक एसिड बहुत ज्यादा बनता है, जिससे अनेक रोग पैदा होते हैं। उनकी खोज के अनुसार–

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक पौण्ड मछली में पाँच ग्रेन, एक पौण्ड भेड़ या बकरी के मांस में छः ग्रेन, एक पौण्ड सूअर के मांस में आठ ग्रेन, एक पौण्ड गाय के मांस में उन्नीस ग्रेन तथा एक पौण्ड मांस के शोरबे में पचास ग्रेन यूरिक एसिड नामक विष पाया जाता है। इस विष के कारण टी० बी०, हृदयरोग, जिगररोग, मांस के रोग, गठिया, हिस्टीरिया, सुस्ती तथा अन्य भांति-भांति के दर्द उत्पन्न होते हैं।

वे आत्महत्या का कारण भी मांस और शराब को बतलाते हैं। वे लिखते हैं-

There is more suicide in England,where most meat is eaten and bear is drunk, and less in Scotland, where less meat taken------ suicide is believed to be increasing in England and so is the meat eaten per head of population. {Uric Acid, p.295}

अर्थात्- इंगलैण्ड में मांस और शराब का अधिक प्रयोग है। अतः वहाँ आत्महत्या बहुत होती है। जबकि स्कॉटलैण्ड में कम है, जहां कि मांस कम......... इंगलैण्ड में मांस अधिक खाया जाता है और आत्महत्या भी बहुत होने लगी है।

(२) स्कॉटलैण्ड के डा० बैल का कहना है कि कैंसर रोग मांस खाने से बढ़ जाता है। वे अपने रोगियों का इलाज भी केवल मांसाहार के छुड़ाने से करते हैं। मांसाहार छोड़ने से रक्त शुद्ध हो जाता है। रक्त के परीक्षण के द्वारा यह उन्होंने सिद्ध किया है।

(३) डा० लुई कोने, डा० मेरी० एस० ब्राऊन अपनी पुस्तक **Reasons for a vegetarian diet** में डा० पीक, डा० हेनरी पुर्डो, डा० शेम्पटेनियर तथा डा० शिमोर के मतों का उल्लेख करते हुए लिखते हैं कि मांस खाने से जिगर, एसिडिटी, टाईफाइड, कैंसर, एपेंडिक्स, मोटापा, कब्ज, बवासीर तथा ब्लड-प्रेशर के रोग अधिक होते हैं।

(४) डा० रसैल एस० चिंटिडन अपनी प्रसिद्ध पुस्तक- **Physiological Economy in Nature** में लिखते हैं- '' मैं अपने पर तथा अन्य कई डाक्टरों पर प्रयोग करने के पश्चात् इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि मांस की जरूरत से ज्यादा प्रोटीन, ताकत देने के कारण हानि ही पहुँचाती है। हमें चौबीस घण्टे में पचपन ग्राम प्रोटीन चाहिए जो शाकाहारी भोजन से अच्छी प्रकार मिल जाती है। ''

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५) डॉ० रसैल अपनी पुस्तक **Strength and diet of all Nations** में लिखते हैं–

I. Nations using for food a large percent of flesh have a large percent of cancer.

II. In countries using little or no flesh there is a little cancer.

III. Increase of flesh eating has been followed by increase of cancer.

अथांत्–

(१) जिन जातियों में मांस अधिक मात्रा में खाया जाता है वे उतनी ही अधिक मात्रा में कैंसर की रोगी होती हैं।

(२) जिन देशों में मांस कम मात्रा में या बिल्कुल नहीं खाया जाता उनमें कैंसर की बीमारी बहुत कम होती है।

(३) मांस खाने की मात्रा में वृद्धि के साथ ही कैंसर में भी वृद्धि हो जाती है।

(६) डा० मेरी एस० ब्राऊन अपनी पुस्तक **Reasons for a vegetarian diet** में लिखते हैं– सम्भव है कि कुछ व्यक्ति बिना किसी क्षति के मांसाहार करते रहें। परन्तु यह निश्चित है कि इस प्रकार के अमानुषिक भोजन का परिणाम जल्दी या देर से अवश्य प्रकट होगा। लीवर और गुर्दे खराब होकर अपना काम करना बन्द कर देंगे और फलस्वरूप क्षय तथा गठिया आदि रोग पैदा होंगे।

डाक्टरों के परीक्षणों से साबित हुआ है कि अनेक लोग जिन्होंने मांस खाना छोड़कर शाकाहार भोजन लिया वे अधिक स्वस्थ हो गये तथा कब्ज, गठिया, कैंसर आदि अनेक रोग ठीक हो गये।

अण्डे के विषय में डाक्टरों के अनुभव–

(१) अण्डों में डी० डी० टी० विष होता है।

After eighteen monthes research it has been established that 30% of eggs contain D.D.T. poison.

Agricultural Dehtt. Florida,
America, Health Bulletin-oct-1967.

अर्थात्–अट्ठारह महीनों के परीक्षण के पश्चात् यह निश्चय किया गया कि अण्डे में तीस प्रतिशत डी०डी०टी० विष होता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) Dr. Catherine, Oceano, California (U.S.A.) लिखते हैं–

Even if we had the best of eggs, we would be better off without them, as they are too high in cholestrol, one important cause of arteries, heart, brain and kidney diseases and gelt stones. Fruits and vegetables and vegetable-oils have none or hardly only cholestrol.

अर्थात्– यदि हमें अच्छे किस्म के अण्डे उपलब्ध भी हों तो भी हम उनके बिना ही अधिक स्वस्थ रहेंगे। क्योंकि उन अण्डों में कोलेस्ट्रोल की मात्रा इतनी अधिक होती है कि जिसके कारण दिल की बीमारी, हाई ब्लड-प्रेशर, गुर्दे की बीमारी, जिगर की पथरी आदि रोग पैदा हो जाते हैं। फलों, सब्जियों और वनस्पति तेलों में कोलेस्ट्रोल बिल्कुल नहीं पाया जाता।

(३) Dr. J. Aman Wilkins (England) लिखते हैं–

Eggs are harmful. You may say that Eggs and I get along well, but a chemical analysis proves differently. The yoke of the egg contains cholestrol a waxy alcohal which deposits in the liver and blood vessels producing corrosion hardening of the arteries.

अण्डे हानिकारक हैं। तुम्हारा यह कहना कि अण्डों से मेरा स्वास्थ्य बनता है, गलत है। क्योंकि रासायनिक परीक्षण इस धारणा के विपरीत फैसला देते हैं। रासायनिक परीक्षा के अनुसार अण्डे की जर्दी में कोलेस्ट्रोल नामक चिकना अल्कोहल होता है। वह जिगर में जाकर जमा हो जाता है और धमनियों में जख्म और कड़ापन पैदा करता है।

(४) डा० गोविन्द राज लिखते हैं–

Eggs are acid forming and they have an excess of Nitrogen fat and phosphoric Acid and can not therefore form the natural diet of man.

अण्डों में नाइट्रोजन, फास्फोरिक अम्ल और चर्बी की बहुत अधिक मात्रा होती है। इस कारण ये शरीर में तेज़ाबी मादा पैदा करते हैं। इसलिये ये मानव की प्राकृतिक खुराक नहीं हो सकते।

(५) **Dr. Robert Gross and prof. Irving Dauidsom** (England) लिखते हैं–

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

An Egg contains about 4 grains of cholestrol. When eggs are eaten, the cholestrol content of the blood rises and the tendency towords the development of gall stones and perhaps other diseases increases.

एक अण्डे में लगभग ४ ग्रेन कोलेस्ट्रोल होता है। जब अण्डे खाये जाते हैं तो खून में कोलेस्ट्रोल की मात्रा बढ़ जाने से पित्ताशय में पथरी तथा दूसरी बीमारियाँ हो जाती हैं। वे आगे लिखते हैं–

Chicken diseases are very numerous. Eggs may carry tuberculosis from chickens. If an infected chick survires, it will mature and lay infectious egg chickens. lukaemia may be transmitted through the eggs. Hens, infected with white diarrhoea, will lay eggs containing the germs which usually consist in the collitic symptom compleseas in human beings.

मुर्गी के बच्चों में बहुत सी बीमारियाँ होती हैं। अण्डे उन बीमारियों को विशेषतः टी० बी०, पेचिश आदि के कीटाणुओं को अपने साथ लाते हैं। अण्डे खाने वालों में ये रोग फैल जाते हैं।

(६) Dr. Robert Gross (England) का कहना है–

The Egg white is more harmful portion of the egg. Animals fed on fresh egg-white develoved a severe skin inflamation and paralysis.

अण्डे की सफेदी अण्डे का सबसे खतरनाक भाग है। जिन जानवरों को अण्डे की सफेदी खिलाई गई उनका चमड़ा सूज गया और उन्हें लकवा मार गया।

(७) Prof. Okada (England) लिखते हैं–

Both the bile and pancreatic juice are indifferent to egg-white. Nearly 33% to 50% of the egg-white passes through the digestive tract undigested.

पित्त और pancreatic juice अण्डे की सफेदी के साथ नहीं मिलते। उसका ३० से ५० प्रतिशत भाग आँतों से बिना पचे ही निकल जाता है।

(८) Dr. E.V. Mc. callum के मतानुसार–

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Eggs are deficient in calcium and do not contain carbohydrates. So their tendency is to favour putrefactive decomposition in the intestines rather than to encourage fermantative organism to develop.

अण्डों में कार्बोहाड्रेट्स नहीं होते तथा कैल्शियम की कमी के कारण ये बड़ी आँतों में जाकर सड़ांध और बदबू पैदा करते हैं।

(९) Dr. J.E.R. Mc. Donagh F.R.C.S. Englad (The Nature and Disease journal vol. 11. P. 194) लिखते हैं–

Eggs are in many people a potent factor in rendering the mutation forms of bacillus coli communis pathogenie and this is daubtless due to intensive egg laying to which hens are being subjected. (How Healthy are eggs)

अनेक लोगों की आँतों में पाये जाने वाले कामन व कौलाई कीटाणुओं को अण्डे जहरीला बना देते हैं। जिसके कारण भयानक रोग उत्पन्न होते हैं। निश्चय से यह अधिक अण्डे–उत्पादन योजना का दुष्परिणाम है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि दुनियां के अनेक डाक्टरों और वैज्ञानिकों ने अपने परीक्षणों से यह सिद्ध कर दिया है कि अण्डे, मांस, मछली आदि मनुष्य का भोजन नहीं है।

अगले पृष्ठ पर भारत सरकार द्वारा पारित पौष्टिक तत्त्वों की हम तालिका दे रहे हैं जिससे विभिन्न पदार्थों के तत्त्वों का पता चलता है।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि अण्डे और मांस तात्त्विक दृष्टि से भी निरामिष भोजन का मुकाबला नहीं करते। सभी तत्त्व उनसे शाकाहार में अधिक हैं। अण्डे और मांस के साथ व्यक्ति मद्यपान के दुर्व्यसन से भी बुरी तरह ग्रसित है। मद्यपान का भी हमारे शरीर पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

मद्य (अल्कोहल) का प्रभाव –

मद्यपान का शरीर पर उत्तेजनात्मक प्रभाव होता है। उल्टियाँ होती हैं। उबकाइयाँ आती हैं। पेट का फोड़ा, जीर्ण प्रदाह एवं जीर्ण व्रण के लक्षण प्रकट होते हैं। पेट में भारीपन और जलन रहने लगती है। स्नायविक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Food Value Chart
Health Bulletin No23., Government of India.

पदार्थ का नाम	प्रोटीन %	चिकनाई %	कार्बोहाइ- ड्रेटस् %	खनिज- लवण %	कैल्शियम %	फास्फोरस %	लोहा %	कैलोरी ग्रामस्
मूंग	२४.०	१.३	५६.६	३.६	०.१४	०.२८	८.४	३३४
उड़द	२४.०	१.४	६०.३	३.४	०.२०	०.३७	९.७	३५०
अरहर	२२.३	१.७	५७.२	३.६	०.१४	०.२६	८.८	३५३
मसूर	२५.१	०.७	५९.७	२.१	०.१३	०.२५	२.०	३४६
मटर	२२.८	१.४	६३.५	२.३	०.०३	०.३६	५.०	३५८
चना	२२.५	५.२	५८.९	२.२	०.०७	०.४९	३.८	३७२
लोबिया	२४.६	०.७	५५.७	३.२	०.०७	०.४९	३.९	३२७
सोयाबीन	४३.२	१९.५	२२.९	४.६	०.२४	०.६९	११.५	४८२
बादाम	२०.८	५८.९	१०.५	२.९	०.२३	०.४९	३.५	६५५
काजू	२१.२	४६.९	२२.३	२.४	०.०५	०.४५	५.४	५९६
नारियल	४.५	४१.६	१३.०	१.०	०.०१	०.२४	१.७	४४४
तिल	१८.३	३.३	२५.२	५.२	१.४४	०.५७	१०.५	५६४
मूंगफली	३१.५	३९.८	१९.३	२.३	०.०५	०.३९	१.६	५४९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पदार्थ का नाम	प्रोटीन %	चिकनाई %	कार्बोहाइ-ड्रेट्स् %	खनिज-लवण %	कैल्शियम %	फास्फोरस %	लोहा %	कैलोरी ग्रामस्
पिस्ता	१९.८	५३.५	१६.२	२.८	०.१४	०.४३	१३.७	६२६
अखरोट	१५.६	६४.५	११.०	१.८	०.१०	०.३८	४.८	६८७
जीरा	१८.७	५.०	३६.६	५.८	१.०८	०.४९	३१.०	३५६
मेथी	२६.२	५.८	४४.१	३.०	०.१६	०.३७	१४.१	३३३
पनीर	२४.१	२५.१	६.३	४.२	०.६९	०.५२	२.१	३४८
घी	–	९८.०	–	–	–	–	–	९००
दूध पाउडर	३८.०	०.१	५१.०	६.८	१.३७	१.००	१.०४	३४७
अण्डा	३.३	१३.३	–	१.०	०.०६	०.२२	२.१	१७३
मछली	२२.६	०.६	–	०.८	०.०२	०.०२	०.९	९१
बकरे का मांस	१८.५	१३.३	–	०.१५	०.१५	०.१५	२.५	१९४
सुअर का मांस	१८.७	४.४	–	१.०	०.०३	०.२	२.३	११४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोथ, मस्तिष्क ज्वर, रक्तहीनता, यकृत दोष, सुस्ती, बुढ़ापे के लक्षण, बुद्धि भ्रंश, उच्च रक्तचाप, हृदय विकार पक्षाघात, गुर्दे के रोग, मधुमेह आदि नाना प्रकार के दोष एवं रोग पैदा होते हैं।

जिस व्यक्ति को अपने स्वास्थ्य से प्रेम है, उसे मद्य, मांस, मछली, अण्डा, अफीम, सुल्फा, चाय, तम्बाकू आदि असेव्य एवं मादक पदार्थों के सेवन से दूर रहना चाहिए और प्राकृतिक भोजन का ही सेवन करना चाहिए। प्राकृतिक विधि से जीवन जीकर हम केवल शारीरिक दुःखों का ही शमन नहीं करते अपितु इससे मानव जीवन के उच्चतर लक्ष्यों धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को भी प्राप्त करने में समर्थ होते हैं। प्राकृतिक भोजन मनुष्य को देव बना देता है और जीवन के सभी मनोरथों को पूरा करने की शक्ति और सामर्थ्य देता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. उपवास

यहाँ भोजन के प्रकरण में स्वास्थ्य सिद्धान्तों पर चर्चा करते हुए हम उपवास के विषय में भी कुछ लिखना आवश्यक समझते हैं।

जो व्यक्ति नित्य भोजन करता है, कभी-कभी उपवास भी उसके लिए आवश्यक हो जाता है। विशेषकर जब किसी पुराने जीर्ण रोग ने शरीर की स्थिति को जटिल बना दिया हो, तो उपवास स्वास्थ्य के लिए वरदान साबित होता है। स्वस्थ शरीर के लिये उपवास का इतना महत्त्व नहीं है जितना कि रुग्ण शरीर के लिए।

हममें से अधिकांश व्यक्ति यह सोचते हैं कि जब हम बीमार हों और भूख न लगी हो तब भी हमें पेट में कुछ न कुछ भोजन की मात्रा अवश्य डाल लेनी चाहिए। ताकि शरीर ज्यादा कमजोर न हो जाए। परन्तु यह धारणा अत्यन्त भ्रामक है।

जब भोजन के लिए शरीर की मांग नहीं है तब उसे पचाने की शक्ति भी उसमें नहीं होती। ऐसी दशा में बिना भूख के जो भोजन उसमें डाला जाता है, वह उसके लिए भाररूप ही होता है। बिना भूख के खाना सदैव गलत है और बीमारी की हालत में तो बहुत ही बुरा है। कभी-कभी तो खतरनाक भी हो जाता है। खाने का अधिक आग्रह तो तन्दुरुस्त आदमी से भी नहीं करना चाहिए और बीमार से तो कदापि न करना चाहिए। हर एक जानवर को देखते हैं कि बीमार होते ही वह खाना बन्द कर देता है।

रोग की अवस्था में मनुष्य को चाहिए कि वह उपवास करे या फिर अपना भोजन जितना घटा सकता हो अधिक से अधिक घटा दे। इतना तो उसे अवश्यं ही करना चाहिए कि जब पेट मांग करे अर्थात् तेज भूख लगे तब खाये।

यदि रुग्ण व्यंक्ति लम्बा उपवास न कर सके तो भी बीच-बीच में एक-दो समय का उपवास रखना स्वास्थ्य के लिए अति उपयोगी है। उपवास के समय शरीर की जीवनी शक्ति को, शरीर में पड़े हुए विजातीय द्रव्यों को बाहर निकालने का अवसर मिलता है। जठराग्नि प्रदिप्त होती है। मलों को पचाकर शीघ्र ही स्वेद आदि के रूप में शरीर से बाहर कर देती है।

उपवास रखना आत्मसंयम है। संयम से शरीर की जीवनी शक्ति जागृत होती है। उपवास के दिनों में यह देखा गया है कि छोटी आँतें जो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत पुराने मलों से सटासट भरी रहती हैं, उनकी सफाई में दस–दस दिन वा उससे भी अधिक लग जाते हैं। पूरी सफ़ाई होने में कितना समय लगता है यह इस बात पर निर्भर करता है कि आँतें मल त्यागने में कितनी सक्रिय हैं। यदि मल संग्रह थोड़े दिन का है और मात्रा में कम है, शरीर में शक्ति है तब तो शोधन शीघ्र हो जाता है। अन्यथा फिर देर लगती है। १५–१५ दिन से उपवास पर चल रहे व्यक्तियों को हमने प्रतिदिन दो–दो और तीन–तीन किलो मल का विसर्जन करते देखा है। आश्चर्य होता है, यह इतना मल कहाँ से आ गया। वर्षों से वह हमारी आँतों में जमाव करके बैठा होता है। उपवास के वज्रपात से वह अपना स्थान खाली करता है।

लकवे का रोगी जो कि खाते–पीते तो आदमी व लाठी के सहारे भी न चल पाता था, उपवास के छठे दिन स्वयं एकाकी लाठी उठाकर चल पड़ा। जिन लोगों के हाथ काँपते हैं, लिखते नहीं बनता, उन के विषय में प्रायः कहा जाता है कि बुढ़ापे का रोग है, वायु विकार है। परन्तु न वह बुढ़ापे का फल है और न ही वायु का रोग। वह तो अन्दर पड़े हुए सड़ रहे मलों का दोष है। उपवास करके शरीर के अङ्ग–प्रत्यङ्ग का शोधन कर उसका चमत्कार देख लीजिए।

उपवास का प्रभाव न केवल पेट पर अपितु सम्पूर्ण शरीर पर होता है। शरीर के किसी भी भाग में विजातीय द्रव्य हो, उसे निकाल बाहर करता है। उपवास से अनेक व्यक्तियों के सिर दर्द गये, चश्मे उतरे, वजन घटा, अजीर्ण, मन्दाग्नी, अफारा, कुष्ठ, गठिया, कामला पथरी, दमा, जुकाम, आदि अनेक नये पुराने रोग देखते ही देखते हवा हो जाते हैं।

नोबेल पुरस्कार विजेता, पौष्टिक आहार के विशेषज्ञ, प्रसिद्ध बायोकेमिस्ट, स्वीडन–निवासी डाक्टर रग्नार बर्ग का कथन है कि हमने सौ दिनों से भी अधिक समय तक उपवास करते हुए मनुष्यों को देखा है। अतः हमें यह भय नहीं करना चाहिए कि हम भूख से मर जाएंगे।

स्वस्थ शरीर में एकत्रित चर्बी, मज्जा, शक्कर, पेशियों के रस, दूध के गुणवाले तरल पदार्थ, खनिज पदार्थ और विटामिन के ऊपर हमारा शरीर बिना किसी बाहरी आहार के ही लगभग तीन महीनों तक बड़ी आसानी से चल सकता है। जब हम भोजन नहीं करते, तब हमारा शरीर इन्हीं तत्त्वों का उपयोग करता है। जब ये संचित पदार्थ समाप्त हो जाते हैं तब शरीर का वजन भी कम हो जाता है। जब तक ये तत्त्व हमारे शरीर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में जमा रहेंगे। तब तक बिना अन्न के उपवास करने में कुछ भी असुविधा नहीं है।

सुरक्षापूर्वक कितने दिनों तक उपवास चालू रख सकते हैं ? इसका निर्णायक स्वयं हमारा शरीर ही है। उपवास में अपने सहज विवेक को बनाए रखिये। लम्बा उपवास किसी अनुभवी चिकित्सक की देख–रेख में ही करना चाहिए। बिना भोजन का उपवास करना सरल है, किन्तु बिना पानी का उपवास घातक है। अतः पानी की इच्छा हो या न हो, फिर भी पानी अवश्य पीना चाहिए।

उपवास का शरीर–शोधन–प्रकार–

उपवास आरम्भ होने पर प्रायः दूसरे दिन सायंकाल तक भूख की अनुभूति होती है। उसके बाद आन्तरिक विकार पचने के लिए सामने आने लगते हैं। यकृत अपने भीतर के विषों को–विकृत हुए दूषित पित्त को आमाशय में धकेलने लगता है तब विकार की मात्रा के अनुसार न्यून–अधिक विकलता होती है, जी मिचलाता है, भूख समाप्त होकर, श्वास भी दुर्गन्धयुक्त हो जाता है। अब विशेष धैर्य की आवश्यकता होती है। रोगी घबराकर उपवास तोड़ देता है और सारी शोधन क्रिया समाप्त हो जाती है। रोगी को चाहिए कि धैर्य रखकर मनोबल बनाये रखे। जी–मिचलाने और विकलता पैदा करने वाले दूषित पित्त को शीतोष्ण जल पीकर कुञ्जल–क्रिया के द्वारा बाहर निकाल दे और जब–जब ऐसा महसूस हो तो कुञ्ज़ल करने में आलस्य न करे।

इसी समय आँतों में भी एक विचित्र क्रिया होती है। आँतें अपने भीतर जमे हुए मल को उखाड़ फैंकने में सक्रिय हो जाती हैं। कभी–कभी शरीर का तापक्रम भी बढ़ जाता है। जैसे–जैसे आँते साफ होती जाती हैं रक्त का दबाव घटता जाता है। हृदय की बढ़ी हुई चर्बी छट जाती है। हृदय अपनी स्वाभाविक अवस्था में काम करने लगता है। क्योंकि आँतों में रुका हुआ मल ही हृदय में अधिक रक्तदाब का कारण होता है।

अधिक भोजन में यकृत को स्वभाव से अधिक कार्य करना पड़ता है। अतः उसकी वृद्धि या अवरोध होता है। उपवास के समय यकृत के कोष उत्तेजना पाकर अधिक पित्त छोड़ते हैं। जिसके कारण पुराने अजीर्ण, मलबन्ध तथा अतिसार आदि रोग निर्मूल हो जाते हैं। आँतों की ऊपर से नीचे तक पूरी सफाई हो जाती है। यकृत भी सब गन्दी पित्त को बाहर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकाल अपने रोगों से मुक्ति प्राप्त करता है।

उपवास के दिनों में त्वचा के नीचे की अतिरिक्त चर्बी पिघल जाती है। उस चर्बी के कारण त्वचा के पसीना निकालने वाले छिद्र बन्द हो जाते हैं जिससे शरीर के यूरिया आदि विष बाहर नहीं निकल पाते। उपवास से त्वचा के रोमछिद्र खुल जाते हैं। त्वचा के नीचे स्थित श्रमबिन्दु ग्रन्थियाँ अपना काम करने लगती हैं और यूरिया आदि विष पसीने के द्वारा शरीर से अधिक मात्रा में बाहर निकलने लगते हैं। उपवास करने वाले व्यक्ति के पसीने में अधिक दुर्गन्ध होती है। शरीर की संचित हुई चर्बी इन्धन का कार्य करती है। त्वचा के द्वारा पसीना निकलने से रक्त तथा त्वचा के सभी दोष दूर हो जाते हैं। त्वचा चिकनी होकर रंग निखर आता है। रक्त में लालिमा लौट आती है।

रक्त के शुद्ध होने से समस्त नाड़ी–संस्थान नव–जीवन प्राप्त करता है। मन प्रसन्न, बुद्धि तीक्ष्ण और स्मरण शक्ति तेज हो जाती है। स्नायु संस्थान सम्बन्धी सभी रोग उपवास द्वारा ठीक हो जाते हैं। इस प्रकार उपवास के द्वारा सारे शरीर का कायाकल्प हो जाता है।

उपवास काल में पानी पीकर वमन द्वारा आमाशय का शोधन आवश्यक है तथा शौच न आने पर प्रतिदिन एनिमा भी अवश्य लेना चाहिए। पेट के मल फुलाने और उखाड़ने के लिए पेडू पर गीली मिट्टी की पट्टी तथा ठण्डे–गर्म सेक अति उपयोगी हैं।

उपवास के बाद नीम्बू का रस पानी में डालकर पीना चाहिए तथा उसके बाद भूख लगने पर थोड़ा–थोड़ा करके सन्तरे, मौसमी आदि के रस देने चाहिएं तत्पश्चात् गाजर आदि सब्जियों के रस का प्रयोग करें। लम्बे उपवास के तुरन्त बाद दूध लेना अहितकर है।

रसाहार के बाद फल और सब्ज़ियों का आहार लेना चाहिए। अब दूध तथा मट्ठे का प्रयोग भी उत्तम है। फल–सब्ज़ियों के सेवन के बाद शनैः–शनैः अन्न का ग्रहण करना चाहिए। प्राकृतिक भोजन का ही प्रयोग करें। बार–बार खाने की आदत न बनाएँ। समय पर खायें। थोड़ा खायें।

पाचक अंगों को सबल बनाने के लिए प्रतिदिन आसन, भ्रमण तथा प्राणायाम आदि नियमित रूप से करने चाहिए।

---o---

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. निद्रा

आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रन्थ चरक शास्त्र के सूत्र स्थान अध्याय ११ में शरीर के तीन उपस्तम्भ बतलाये हैं। तद्यथा–

अथ त्रयः खलु उपस्तम्भा आहारस्वप्नब्रह्मचर्यमिति।

अर्थात्– शरीर के तीन उपस्तम्भ हैं जिनके आश्रय पर वह स्वस्थ रहता है– आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य।

आहार के विषय में हमने पिछले अध्याय में चर्चा की थी। इस अध्याय में निद्रा विषय पर लिखेंगे।

निद्रा का विषय काफी विस्तृत और दार्शनिक विषय है, किन्तु प्रस्तुत सन्दर्भ में स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से ही हम विचार करेंगे।

निद्रा का महत्त्व

निद्रायत्तं सुखं दुःखं पुष्टिः कार्श्यं बलाबलम्।
वृषता क्लीबता ज्ञानमज्ञानं जीवितं न च॥

(चरक, सूत्र० २१।२२)

अर्थात्– सुख–दुःख, पुष्टि, कृशता, बल और निर्बलता, पुस्त्व और नपुंसकता, ज्ञान–अज्ञान, जीवन–मरण आदि निद्रा के अधीन हैं।

प्रगाढ निद्रा व्यक्ति को सुख, पुष्टि, बल, पुंस्त्व, बुद्धि और दीर्घायु प्रदान करती है। तथा अनिद्रा, दुःख, दौर्बल्य, नपुंसकता पैदा करती है और बुद्धि तथा स्मृति भ्रंश एवं आयु का हरण कर लेती है।

अनिद्रा की भांति अतिनिद्रा और अकालनिद्रा भी मनुष्य के सुख और आयु, आरोग्य तथा ज्ञान को कालरात्रि बनकर नष्ट कर देती है।

युक्तिपूर्वक, उचितकाल और उचित मात्रा में सेवन की गई निद्रा ही मनुष्य को सुख और स्वास्थ्य देकर दीर्घायु प्रदान करती है। स्वस्थ मनुष्य के लिये दिन में सोना निषिद्ध है–

दिवा मा स्वाप्सीः॥ (गोभिलीय गृह्यसूत्र)

पिता अपने पुत्र को उपदेश करता है कि तू दिन में कभी भी शयन मत कर।

दिन में सोने से क्या हानियाँ हैं ? महर्षि धन्वन्तरि जी महाराज अपने अमर ग्रन्थ सुश्रुत में दिवाशयन के दोष बतलाते हुए लिखते हैं–

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकृतिर्हि दिवास्वप्नो नाम, तत्र स्वपतामधर्मः सर्वदोष-प्रकोपश्च तत्प्रकोपाच्च कासश्वासप्रतिश्यायशिरोगौरवाङ्गमर्दा-रोचकज्वराग्निदौर्बल्यानि भवन्ति। (सुश्रुत शारि० ४।३८)

अर्थात्- दिन में सोना एक विकार है। दिन में सोने से अधर्म होता है। सब दोष कुपित हो जाते हैं। दोषों के कुपित होने से कास, श्वास, प्रतिश्याय, शिर में भारीपन, अङ्गों का टूटना, अरुचि, ज्वर और जठराग्नि की दुर्बलता आदि रोग उत्पन्न होते हैं।

जहाँ दिन में सोने से हानियाँ होती हैं वहाँ रात्रि जागरण से भी कम दोष नहीं हैं। रात्रि जागरण के दोष दर्शाते हुए महर्षि जी अपने ग्रन्थ में आगे लिखते हैं-

रात्रावपि जागरितवतां वातपित्तनिमित्तास्त एव उपद्रवा भवन्ति।
(सुश्रुत ४।३८)

अर्थात्- रात्रि में जागरण से वातपित्तजन्य वे ही कास, श्वास, प्रतिश्याय आदि उपर्युक्त रोग उत्पन्न होते हैं जो दिन में सोने से होते हैं।

इसलिये दिन में सोना तथा रात्रि में जागरण दोनों ही स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। परमपिता परमात्मा ने दिन कार्य करने के लिए और रात्रि शयन के लिए बनाई है। जो परमात्मा की आज्ञा की अवहेलना करके विपरीत आचरण करेंगे वे निश्चय ही आयु और आरोग्य से हाथ धोकर पश्चात्ताप करेंगे।

दिवाशयन के अपवाद विषय में धन्वन्तरि जी लिखते हैं कि छोटा बालक, वृद्ध, निर्बल, यक्ष्मा का रोगी, क्षीणकाय, मद्यप, यात्रा से थका हुआ, भूखा, मेद (चर्बी), स्वेद, कफ, रक्तादि-क्षीण हुए व्यक्ति, मुहूर्तभर अर्थात् ४८ मिनट सो सकते हैं। इससे अधिक सोयेंगे तो उन्हें भी हानि उठानी होगी।

निद्रा नाश के कारण

क्षीण कफ वाले को वातप्रधानता से, मानसिक और शारीरिक दुःख से, बलवान् के साथ विरोध से, साधनहीन दुर्बल व्यक्ति को, जुलाब लेने से, भय, चिन्ता, क्रोध, धुँआ, अधिक परिश्रम, रक्त-मोषण, दरिद्रता, पराधीनता, पर स्त्री और परधन में आसक्त तथा सत्त्वबहुल व्यक्ति को नींद नहीं आती।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निद्रा के उपाय

जिन व्यक्तियों को नींद नहीं आती वे निम्नलिखित उपाय करें–

प्रथम तो वे अपनी दिनचर्या में निद्रा नाश के कारणों का विचार करें और उन्हें त्याग देवें। इतने पर भी यदि निद्रा नहीं आती तो शरीर पर तैलादि का मर्दन, उबटन, स्नान, दही, दूध, घृतादि स्नेह, मन को सुख देने वाले कर्म, सुगन्धित द्रव्य, मधुर शब्दों का श्रवण, नेत्रों का संतर्पण, मस्तिष्क का लेप, शिर का जल से धोना, सुखदायक बिस्तर, पारिवारिक सुख आदि उपायों को करें। इन उपायों से अनिद्रा दोष का नाश होकर सुखद निद्रा आती है।

निद्रा का स्थान तथा समय

सोने के लिए बिस्तर तथा स्थान शुद्ध एवं पवित्र होना चाहिए। शयन के कक्ष में सदैव शुद्ध वायु का प्रवेश होता रहे ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये। ग्रीष्मकाल में आकाश की छत के नीचे सोना स्वास्थ्य के लिए रसायन है। शुद्ध वायु में जीवन को दीर्घायु और शरीर को आरोग्य देने वाला अमृत भण्डार भरा है। सोने के लिये लकड़ी का तख़्त अथवा भूमि का आसन सर्वोत्तम है। यह गर्दन, पीठ और कटिप्रदेश के अनेक रोगों से रक्षा करता है।

गृहस्थ यदि खाट का प्रयोग करें तो वह पूरी तरह से खिंची हुई होनी चाहिए। ढिली चारपाई शरीर को आलसी और रोगी बनाती है। शास्त्र की आज्ञा है कि व्यक्ति सदा अकेला सोवे –

एकः शयीत सर्वत्र।

किसी के साथ मिलकर सोने से स्वास्थ्य की अत्यन्त हानि होती है। गृहस्थ स्त्री–पुरुष भी एक शय्या पर शयन न करें। घर में जो माता–पिता सगे भाईयों और सगी बहिनों को एक साथ सुला देते हैं, वे बहुत अनुचित करते हैं।

किसी निर्जन घर, श्मशान में, वृक्ष के नीचे, चौराहे पर, मन्दिर में, पथरीली भूमि पर, गौ, ब्राह्मण, देवता और गुरुजनों के ऊपर शयन न करना चाहिए।

भग्न शय्या, अपवित्र आसन, दुर्गन्धित स्थान, गीले वस्त्र, नंगे शरीर, खुले सिर तथा एकदम खुले मैदान में शयन नहीं करना चाहिए। इन स्थानों में शयन करने से शरीर और स्वास्थ्य की हानि होती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसे स्थान पर सोने से जहाँ वायु और प्रकाश दोनों ही खुले रूप से आते हैं, बड़ा लाभ होता है।

देहात के किसान लोग अपने खेतों पर साधारण घास-फूंस की झोपड़ी बना लेते हैं। इस झोपड़ी में दीवारें नहीं होती। वर्षा से बचने के लिए ऊपर घास की छत होती है। जिसे ऐसा ढलवाँ बनाया जाता है कि वर्षा का पानी बहकर नीचे आ जाता है।

रात्रि में सोते समय हमारा शरीर पाचन कार्य में संलग्न रहता है। तब उसके लिए शुद्ध ताजी वायु का होना बहुत आवश्यक है। बाग-बगीचों में ऐसी झोंपड़ी बनवाई जा सकती है या मकान के बरामदे में सोकर भी यह लाभ लिया जा सकता है।

जहाँ एक ही मकान में ऊपर-नीचे बहुत से मनुष्य रहा करते हैं वहाँ का वायु दूषित हो जाता है। पत्थर की बनी हुई दीवारों में भी बहुत दिनों तक रुकी रहने के कारण वायु दुर्गन्धित हो जाती है अतः ऐसे स्थानों पर सोना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है किन्तु खुले बाग-बगीचे या मकान के बरामदे की वायु अत्यन्त शुद्ध होती है और वह शुद्ध वायु सर्दी, आन्तरिक ज्वर, विसूचिका, गठिया, रसौली, चर्मरोग, फोड़ा, फुन्सी आदि को दूर करने में परम सहायक होती है।

सुखों का मूल आधार स्वास्थ्य है। भौतिक सुखों का उपभोग मनुष्य स्वस्थ रहकर ही कर सकता है। स्वास्थ्य के महत्त्व को व्यक्ति जब अच्छी प्रकार समझ लेगा तभी उसे खुले में सोने का रहस्य समझ में आएगा। तब लोगों के लिए झोंपड़ी या खुले बरामदे में सोना आश्चर्य का विषय नहीं रह जाएगा। नगर के मार्बल के बने हुए सुन्दर-सुन्दर कमरे जो दुर्गन्धित वायु से विषाक्त और ऐसे शारीरिक रोगों के उत्पत्ति स्थान होते हैं जो न केवल शरीर को ही विकृत करते हैं बल्कि सभी प्रकार के मानसिक और आध्यात्मिक विकारों-जड़ता और उन्माद, तृष्णा और विनाश, पाप और अपराध, घृणा और द्वेष, कलह और संघर्ष, संक्षेप से संसार की सभी बुराईयों के कारण होते हैं। जब मनुष्य इनको त्यागकर झोंपड़ियों में विश्राम करने लगेगा तब उसे सच्चे स्वास्थ्य का आनन्द आएगा।

मनुष्यों को यह भय नहीं करना चाहिए कि ऐसी खुली झोंपड़ी में रहने वा सोने से जाड़े के दिनों में ठिठुरकर मर जाएंगे। अगर ऐसे स्थान पर व्यक्ति रज़ाई या कम्बल का उपयोग ले तो वह मैदान या जंगल में बनी हुई झोंपड़ी में आराम से रह सकता है। हमें सदैव यह स्मरण रखना चाहिए कि

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुद्ध और ताजा हवा में सांस लेने पर गन्दे कमरे में सांस लेने की अपेक्षा शरीर में अधिक गर्मी पैदा होती है।

अगर सुविधा हो, मौसम साफ़ रहे तो झोंपड़ी या बरामदे में सोने की अपेक्षा खुले आकाश की छत के नीचे सोना अधिक लाभदायक है। हम प्रकृति की ओर जितना अधिक बढ़ते हैं उतना ही अधिक वह हमें उसका पुरस्कार प्रदान करती है। खुले मैदान में आकाश की छत के नीचे सोने से हमारा आकाश के सभी तारों और नक्षत्रों के साथ सम्बन्ध होता है। मन्द समीर हमारे शरीर का आलिङ्गन करता है। वह हमारे शरीर और आत्मा की सभी कमजोरियों का हरण कर लेता है।

यदि कोई मनुष्य मकान से बाहर खुले आकाश के नीचे सोने का साहस करता है तो इसमें दिखावे या उपहास की कोई बात नहीं है। जंगल में रहने वाले खरगोश, हिरण, बारहसिंगे, सूअर तथा अन्य बहुत से जीव मैदान में रहते हुए ही अपनी साफ चमकीली आंखों, शरीर की स्फूर्ति और शक्ति, स्वास्थ्य तथा प्रकृति से प्राप्त अन्य उत्तम गुणों को बनाए रखते हैं।

स्वास्थ्य की दृष्टि से बड़े–बड़े मकानों की अपेक्षा छोटे मकान अधिक अच्छे होते हैं। बागों में या वृक्षों से परिवेष्टित छोटे–छोटे मकान अधिक बनाने चाहिए। नगरों में कतार में बने हुए, मोटी दीवार वाले मकान स्वास्थ्य की दृष्टि से हेय हैं। नगरों की सीमाओं से बाहर साफ़ सुथरे स्थानों पर बने हुए मकान अधिक बेहतर होते हैं। मकानों की बनावट ऐसी होनी चाहिए जिसमें हवा और रोशनी बिना किसी रुकावट के हमेशा आती रहे।

मुलायम गद्दी, तकिया लगे सोफे पर बैठने या लेटने पर शरीर के कुछ अंग बहुत अधिक गर्म हो जाते हैं जिससे शरीर के रक्त–संचालन में बाधा पड़ती है। थकान और सुस्ती आती है। कापुरुषता और हर तरह की कमजोरी का आगमन होता है।

मनुष्य की जिन्दगी का आधा भाग बिछावन पर ही कटता है इसलिए बिछावन पर बहुत ध्यान देने की जरूरत है ताकि उसे हम प्रकृति के अनुकूल बना सकें। बिछावन ऐसा होना चाहिए कि उसमें खुली हवा आसानी से आ जा सके। चादर के अन्दर की हवा शरीर के संसर्ग में आकर गन्दी हो जाती है। उसे बाहर की हवा से मिलने का पूरा मौका मिलना चाहिए। कम्बल से बिछावन का काम लिया जा सकता है। ओढ़ने के लिए भी कम्बल सर्वश्रेष्ठ है। ओढ़ने के नीचे नंगे बदन लंगोट पहनकर सोना उत्तम है। कम्बल के नीचे एक पतली चद्दर रखनी चाहिए जो शरीर से अच्छी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरह चिपक सके तथा कम्बल के ऊपर जो चादर डाली जाए वह हल्की और सूक्ष्म रन्ध्रयुक्त होनी चाहिए।

सोने का समय नौ और दस बजे के बीच उत्तम है। जल्दी सोना और जल्दी उठना मनुष्य को सौभाग्यशाली बनाता है एक स्वस्थ व्यक्ति के लिए छः घण्टे निद्रा पर्याप्त होती है। छः घण्टे से अधिक सोना हानिकारक है। नौ–दस बजे सोकर तीन–चार बजे उठ जाना चाहिए। आँखें खोलते ही बिस्तर त्याग दें। बिस्तर में पड़े रहना व्यक्ति को आलसी बनाता है। बिस्तर पर लेटकर विचारों का ताना–बाना नहीं बुनना चाहिए। शान्त होकर सो जाना चाहिए। सोने से पहले हाथ–पैर और मुँह धोकर सोने से नींद जल्दी आती है।

स्वप्नान्तं जागरितान्तं चोभौ येनानुपश्यति।
महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति॥ (उपनिषद्)

अर्थात्–जो व्यक्ति सोते और जागते समय श्रद्धापूर्वक उस महान् सर्वव्यापक परमात्मा का ध्यान करता है, वह सब प्रकार के शोक (दुःख) से पार हो जाता है। इसलिए सोते समय और उठते समय प्रत्येक व्यक्ति को उस ईश्वर का स्मरण अवश्य करना चाहिए तथा कुलीन परिवारों के छोटे बड़े सभी स्त्री–पुरुष सदा प्रातः सायं परस्पर नमस्ते किया करें।

सोने का प्रकार यह है कि बनियान तथा लंगोट पहने हुए बिस्तर पर जाएं और दाईं या बाईं करवट ही सोवें। सीधा सोना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। भोजन के बाद बाईं करवट सोने से भोजन ठीक पचता है। जिनका स्वास्थ्य ठीक हो और भोजन सोने से तीन घण्टे पहले कर लिया हो तो वे दाईं करवट सोवें भोजन करके तुरन्त सोना स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं होता।

स्वप्न और सुषुप्ति

स्वास्थ्य के लिए स्वप्नरहित प्रगाढ निद्रा उत्तम होती है। किन्तु हमारे मन की प्रकृति कुछ ऐसी है कि वह दिन में देखी हुई और सुनी हुई बातों की स्मृतियों का संग्रह करता जाता है जिन्हें वह स्वप्न में जाकर पुनः देखने लगता है। अतः निद्राकाल में यदि कोई स्वप्न आता है तो उसकी चिन्ता करने की बात नहीं है, हाँ सारी रात चारपाई पर पड़े स्वप्न ही देखते रहना निश्चित ही एक रोग है। उसका उपचार आवश्यक है। उसके लिए हमें निद्रा के उपायों का अवलम्बन करना चाहिए। यहाँ हम स्वप्न और सुषुप्ति के विषय में वैज्ञानिकों का दृष्टिकोण दिखलाते हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब हम नींद में जाते हैं तो एकदम गहरी नींद ही पूरे समय नहीं होती। उसमें हम स्वप्न भी देखते हैं। अमेरिका में निद्रा के सम्बन्ध में अनेक परीक्षण किए गए हैं। सोते समय मस्तिष्क से विद्युत तरंगें निकलती हैं, जो अत्यन्त सूक्ष्म होती हैं। उन तरंगों को वैज्ञानिकों ने इलैक्ट्रो इन्सेफेलोग्राफ नामक यन्त्र से पकड़कर ग्राफ पेपर पर बड़ा करके दिखलाया है। इन ग्राफ पेपरों के अध्ययन से निद्रा के विभिन्न स्तरों का पता चला है। पहले स्तर में स्वप्न अवस्था होती है और दूसरे स्तर में सुषुप्ति अवस्था होती है। स्वप्नावस्था में व्यक्ति को स्वप्न आते हैं जबकि सुषुप्ति अवस्था स्वप्नहीन निद्रा होती है। यह समझना कि स्वप्नहीन निद्रा ही यथार्थ निद्रा है, गलत है। स्वप्नहीन निद्रा निद्रा का एक हिस्सा है। व्यक्ति प्रगाढ निद्रा में ही नहीं बना रहता। स्वप्न तथा सुषुप्ति का चक्र चलता रहता है। निद्रा आरम्भ करते समय हम बीस मिनट तक सुषुप्ति में रहकर फिर स्वप्न के स्तर में आ जाते हैं और उसके बाद फिर प्रगाढ निद्रा में ७० से ९० मिनट तक रहकर फिर स्वप्न के स्तर पर आ जाते हैं।

स्वप्न से सुषुप्ति और सुषुप्ति से स्वप्न का चक्र बराबर चलता रहता है और यह प्रक्रिया सारी रात में तीन–चार बार दोहराई जाती है। प्रातःकाल के समय हम सुषुप्ति में नहीं होते, स्वप्न में होते हैं। इस समय स्वप्न का समय लम्बा होता है। इस सारे लम्बे समय में हम घण्टों तक स्वप्न ले रहे होते हैं। एक ही आयु के स्वस्थ व्यक्तियों की निद्रा का आरोह–अवरोह लगभग एकसा होता है। स्वास्थ्य के लिए स्वप्न तथा सुषुप्ति दोनों आवश्यक हैं। ये प्राकृतिक अवस्थाएँ हैं जो स्वभावतः प्रत्येक व्यक्ति को आती हैं। भले ही हम यह समझते हैं कि हमें प्रगाढ निद्रा ही आती है स्वप्न नहीं आते। स्वस्थ निद्रा में स्वप्न भी आते हैं। भले ही हम जागते ही उन्हें तत्काल भूल जाते हैं।

स्वप्नावस्था तथा सुषुप्ति–अवस्था का स्वास्थ्य के साथ क्या सम्बन्ध है इस पर वैज्ञानिकों के परीक्षणों से सिद्ध होता है कि निद्रा के दोनों स्तर स्वास्थ्य के लिए एक समान महत्त्वपूर्ण हैं। डा० डीमैन्ट (अमेरिका) के अनुसार स्वप्नरहित प्रगाढ निद्रा से व्यक्ति चिड़चिड़े तथा झगड़ालु स्वभाव का हो जाता है। डा० सिगमन्ड फ्रायड का कहना है कि स्वास्थ्य के लिए स्वप्न इसलिए आवश्यक हैं क्योंकि स्वप्नों के द्वारा मानव की अपूर्ण इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं। उनके पूर्ण न होने से वह चिड़चिड़ाता और झगड़ता है। इसके विपरीत फ्लोरीडा विश्वविद्यालय में विल्से० बी० वेब ने १९६० ई०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ऐसे प्रयोग किए जिनमें सोने वाले को सुषुप्तावस्था में पहुँचते ही जगा दिया जाता रहा वह केवल स्वप्न-अवस्था में ही रहा, ऐसे व्यक्ति हीनोत्साह तथा मायूस हो गए।

जिन व्यक्तियों को सिर्फ स्वप्नावस्था वाली निद्रा में रखा जाता है सुषुप्तावस्था में नहीं आने दिया जाता वे जब अपनी स्वाभाविक निद्रा लेने लगते हैं, तब पहले सुषुप्तावस्था की कमी को पूरा करते हैं। इसी प्रकार जिन व्यक्तियों को दवाई के जोर से सिर्फ़ सुषुप्तावस्था में ही रखा जाता है स्वप्नावस्था नहीं आने दी जाती वे जब अपनी स्वाभाविक निद्रा लेने लगते हैं तब पहले स्वप्नावस्था की कमी को पूरा करते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए स्वप्न तथा सुषुप्ति दोनों ही निद्रा आवश्यक हैं। स्वप्न तथा सुषुप्ति में व्यक्ति को जब निर्बाध रूप से जाने दिया जाता है तब प्रातः वह प्रसन्न तथा प्रफुल्ल होकर उठता है।

स्वाभाविक निद्रा से मानव की प्रसन्नता एवं प्रफुल्लता के पीछे क्या कारण है ? स्वाभाविक निद्रा के माध्यम से हमारी चेतना का इस शरीर तथा संसार से नाता टूट जाता है। वह अपने निज रूप में चली जाती है। विश्व-चेतना के सम्पर्क से नवजीवन लेकर जागृत-अवस्था में वह पुनः शरीर और संसार में लौट आती है। तभी प्रगाढ़ निद्रा से लौटकर मनुष्य उल्लास अनुभव करता है और कहता है- ऐसा आनन्द आया जैसा जागते में कभी नहीं आया। इस आनन्द तथा उल्लास को पाने के लिए शरीर तथा संसार से नाता तोड़ना पड़ता है। यह नाता तोड़कर ही शरीर तथा संसार का रस लिया जा सकता है। रस इन्द्रियों तथा संसार के विषयों में नहीं है अपितु उसमें है जहाँ से सुषुप्ति तथा तुरीय स्तर में जाकर चेतना रस को ग्रहण करती है और फिर शरीर तथा संसार के सम्पर्क में लौटकर आती है। स्वप्न तथा सुषुप्ति का द्वार जब खुला रहता है तभी चेतना इन मार्गों से होकर तुरीय तक पहुँचती है। जब चेतना अपने प्रयत्न से जागृत-अवस्था में शरीर तथा संसार से नाता तोड़कर तुरीय-अवस्था में पहुँचकर विश्व-चेतना से अपना सम्पर्क स्थापित करती है, उसी को ध्यान कहते हैं। सोने से सुषुप्ति प्राप्त होती है, और ध्यान से समाधि। दोनों अवस्थाओं में इन्द्रियों तथा संसार से चेतना का नाता टूट जाता है। दोनों अवस्थाएँ मानव को प्रसाद तथा प्रफुल्लता की प्राप्ति कराने वाली हैं।

---o---

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. ब्रह्मचर्य (जीवन रक्षा)

कोई भी जाति, देश अथवा राष्ट्र केवल गोला, बारूद, टैंक, बख्तरबन्द गाड़ियों, जैट–विमानों, तोप और विशाल पनडुब्बियों के बल पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता। विजय के साधन होते हैं–वहाँ के लोगों की शारीरिक दृढता, बौद्धिक कुशलता, चारित्रिक संगठन, नैतिक आदर्श आत्मविश्वास, दृढ़ इच्छाशक्ति, आदर्श देशभक्ति, त्याग और तपश्चर्या, वीरता, पराक्रम, धैर्य, अनुशासन और संगठन।

देश और जाति के शुभचिन्तक विचार करें कि क्या उपर्युक्त साधन विश्व के किसी कोने में किसी कारखाने में तैय्यार होते हैं ? क्या देश का करोड़ों रुपया व्यय करके विश्व के उन्नत देशों से हम इन्हें खरीद सकते हैं ? इन साधनों से सम्पन्न देश को विश्व की बड़ी से बड़ी शक्ति परास्त नहीं कर सकती और इनके अभाव में देश की बारूद स्वयं अपने को जलाने के काम आती है। देश का धन और धरती दूसरे के लिए होते हैं। किसी भी राष्ट्र का उत्थान और पतन इन साधनों के भावाभाव पर निर्भर करता है।

उपर्युक्त गुण मानव के हृदय में ही पल्लवित और पुष्पित होते हैं, किन्तु उसके लिए अनुकूल परिवेश की आवश्यकता होती है। जिन नियमों और दिनचर्या में रहकर मनुष्य इन गुणों का अपने हृदय में विकास करता है, उन्हें ही ब्रह्मचर्य कहते हैं। अपनी समग्र इन्द्रियों के संयम के बिना व्यक्ति इन दैवी शक्तियों का विकास नहीं कर सकता। इन्द्रियों के संयम से शरीर में अमोघ शक्ति का संचय हो जाता है। शरीर में वीर्यरूपी शक्ति नवजीवन का संचार करती है। बल, आयु तथा आरोग्य से शरीर को युक्त कर सुन्दरता, सुडौलता, दृढता और प्रदान करती है। शरीर में नवयौवन, हृदय में धीरता, वीरता, साहस, शौर्य, मनोमस्तिष्क में विद्या बुद्धि कुशाग्रता और विलक्षणता पैदा करती है। आत्मा में त्याग, तप, देशभक्ति, आत्मविश्वास और दृढ़ इच्छा–शक्ति उत्पन्न करती है। व्यक्ति को नैतिक, चारित्रिक, मानसिक और आत्मिक बलों का धनी बना देती है।

मानव हृदय में इन दैवी गुणों का बीजारोपण मातृगर्भ में वीर्याधान के साथ ही किया जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि स्त्री पुरुष का मिलन मात्र शारीरिक नहीं है। वे देश जाति तथा राष्ट्र के उत्थान के उच्च आदर्शों से युक्त मान मर्यादाओं की रक्षा के लिए अपने आपको कठोर व्रती बनाते हैं और फिर वे संयुक्त रूप से किसी विशिष्ट आत्मा का आह्वान करते हैं। जो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गृहस्थ ऐसे उच्च लक्ष्य से प्रेरित होकर इस पुनीत कर्म (पुत्रेष्टि यज्ञ) को करते हैं, उन्हें मनोवाञ्छित संतान प्राप्त होती है। जो उनके इस लोक के सम्पूर्ण मनोरथों को पूरा कर देती है। ऐसी ही श्रेष्ठ सन्तान को अभिलक्षित करके उपनिषद् के ऋषि कहते हैं–

अथ त्रयो वाव लोकाः – मनुष्यलोकः, पितृलोकः, देवलोक इति। सोऽयं मनुष्यलोकः पुत्रेणैव जय्यो भवति न अन्येन कर्मणा।

अर्थात् तीनों लोकों में यह मनुष्यलोक उत्तम सन्तान से ही जयी या पूर्ण होता है। सुसन्तान के अभाव में स्वर्ग के समान गृहस्थ नरक का कुण्ड वा विपदाओं का घर बन जाता है। गृहस्थ स्त्री–पुरुषों के मिलन की पवित्रता और गरिमा को हमारे ऋषियों ने भली प्रकार समझा था और इसीलिए उन्होंने इसे यज्ञ की संज्ञा दी तथा सोलह संस्कारों में इसे प्रथम और सर्वोच्च स्थान दिया। इस यज्ञ का कर्ता प्रजापति कहलाता है। यज्ञ के कर्ता के हृदय में यदि कहीं विषय–वासना जैसी छिछली भावना उत्पन्न हो गई तो यज्ञ का प्रतिफल सर्वथा विपरीत होगा। तब उत्पन्न होने वाली सृष्टि देव नहीं असुर होगी। प्रजापति ही देव और असुर दोनों प्रकार की सृष्टियों का जनक है। प्रजापति की भावना पर ही यह निर्भर करता है कि वह दोनों में से किस सृष्टि को जन्म देना चाहता है। वेद में पुत्र को पिता का अनुव्रती कहा है:– अनुव्रती पितुः पुत्रः। (अथर्व०) जिसका भाव यह है कि पिता जिन व्रतों का पालन करता है पुत्र उन्हीं व्रतों का विशाल रूप होता है।

अब आप समझ गए होंगे कि जिस व्यक्ति में आत्मसंयम नहीं है। जिसने कठोर तपश्चर्या, विद्याभ्यास और ब्रह्मचर्य से अपने शरीर, मन तथा आत्मा को पूर्णतया इस पवित्र यज्ञ का पात्र नहीं बनाया है वह दैवी गुणों से सम्पन्न सन्तान को जन्म नहीं दे सकता। अहा! कितना पवित्र और उच्च आदर्श है उन गृहस्थ स्त्री–पुरुषों का जो राष्ट्र और मानव जाति की रक्षा की भावना से प्रेरित होकर इस पवित्र वेदी पर जाते हैं। ऐसे गृहस्थ पूजनीय हैं, जो श्रेष्ठ सन्तान को जन्म देते हैं।

शास्त्रीय वचन है– **सुकृतं हविः होतव्यम्।** (शतपथ)

अर्थात् यज्ञ की अग्नि में हवि को सुकृत करके ही आहुति देनी चाहिए। गले–सड़े वा दूषित पदार्थों को अग्नि में डालने से यज्ञ का प्रयोजन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिद्ध नहीं होता। उससे दुर्गन्ध फैलती है। सृष्टि निर्माण के महान् यज्ञ में प्रजापति अर्थात् पुरुष पत्नी रूपी अग्नि में अपने स्वत्व (वीर्य) की आहुति देता है। वीर्य भोजन का सार भाग है। भोजन जितना पवित्र होगा उतना ही वीर्य गुणों में श्रेष्ठ होगा। वीर्य की श्रेष्ठता पर सन्तति की श्रेष्ठता निर्भर है। प्रस्तुत सन्दर्भ में महर्षि दयानन्द जी लिखते हैं–

"माता–पिता को अति उचित है कि गर्भाधान के पूर्व मध्य और पश्चात् मादक द्रव्य, मद्य, दुर्गन्ध, रुक्ष, बुद्धिनाशक पदार्थों को छोड़के जो शान्ति, आरोग्य, बल, बुद्धि, पराक्रम और सुशीलता से सभ्यता को प्राप्त करावें वैसे घृत, दुग्ध, मिष्ट अन्नपान आदि श्रेष्ठ पदार्थों का सेवन करें। जिससे रजवीर्य भी दाषों से रहित होकर अत्युत्तम गुणयुक्त हों। शास्त्रोक्त विधि के अनुसार जब ऋतुदान का समय हो, गर्भाधान संस्कार करें, पुनः जब तक ऋतुदान का समय पूर्वोक्त न आवे तब तक और गर्भस्थिति के पश्चात् एक वर्ष तक स्त्री–पुरुष संयुक्त न हो। जब दोनों के शरीर में आरोग्य, परस्पर प्रसन्नता और किसी प्रकार का शोक न हो, ऐसे शुभ समय में समागम करें। गर्भाधान के पश्चात् स्त्री को बहुत सावधानी से भोजन छादन करना चाहिए। बुद्धि बल रूप आरोग्य पराक्रम शान्ति आदि गुणकारक द्रव्यों का ही स्त्री सेवन करती रहे। जब तक सन्तान का जन्म न हो, एक वर्ष पर्यन्त स्त्री–पुरुष का सङ्ग न करें।

जो स्त्री–पुरुष इस प्रकार वर्तेंगे उनके उत्तम सन्तान, दीर्घायु, बल और पराक्रम की वृद्धि होती ही रहेगी और सब सन्तान भी उत्तम बल पराक्रमयुक्त, दीर्घायु और धार्मिक होंगे।"

इसलिए जो लोग अपने कुल की उन्नति चाहते हैं, उन्हें शुद्ध सात्त्विक भोजन और पवित्र दिनचर्या से अपने शरीर के सार रज वीर्य की रक्षा और उत्तमता करनी चाहिए। वे माताएँ धन्य हैं, जो विदुषी धार्मिक होकर अपने पवित्र आहार–विहार और उत्तम आचार का पालन करके श्रेष्ठ सन्तान को जन्म देती हैं। माता अपनी भावनाओं के अनुसार स्वसन्तान का निर्माण करती है। मानो बालक अपनी माता की भावनाओं की प्रतिकृति होकर ही मातृगर्भ से वाहर आता है।

गृहस्थ अपनी श्रद्धानुसार अनुष्ठेय याग का फल प्राप्त करते हैं। कुम्भकार द्वारा मिट्टी का कच्चा घड़ा जब तैयार कर दिया जाता है तो उसे पकाने के लिए भट्टी में रखा जाता है। ठीक इसी प्रकार जब माता–पिता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के द्वारा उत्तम रजवीर्य से बालक का जन्म हो जाता है तो पाँच वर्ष की आयु के पश्चात् उस बालक को पूर्ण विकसित मानव बनाने के लिए आचार्य रूपी अग्नि में अधिष्ठित किया जाता है। तपस्वी आचार्य उस बालक को अपनी विद्या से ज्ञाननेत्र प्रदान करता है। शास्त्र में कहा है –**"आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणम् इच्छति"** आचार्य ब्रह्मचारी को शरीर, मन तथा आत्मा सब प्रकार से पुष्ट करके एक महामानव बना समाज को अर्पित करता है। विद्या के द्वारा आचार्यगर्भ से मानव का यह दूसरा जन्म है। इसी से वह द्विज कहलाता है। मनु महाराज ने अपने अमरग्रन्थ मनुस्मृति में कहा है–

"जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते।"

अर्थात्– जन्म से मानव शूद्र पैदा होता है विद्यादि संस्कारों के द्वारा वह द्विज अर्थात् सच्चा मानव बनता है। सन्तान के निर्माण में जैसा योगदान माता–पिता का है आचार्य का भी उससे कम नहीं होता। इसीलिए महर्षि याज्ञवल्क्य लिखते हैं:–

मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद। (शतपथ)

अर्थात्– पुरुष, माता–पिता तथा आचार्य इन तीनों तपस्वियों की तपश्चर्या से निर्मित होता है। अगर इनमें से किसी के भी भाग की न्यूनता हुई तो पुरुष में न्यूनता निश्चित है। अतः स्पष्ट है कि किसी भी राष्ट्र का भविष्य वहाँ के गृहस्थ स्त्री–पुरुषों तथा आचार्य जनों के तप पर निर्भर है। ये तीनों मिलकर नई सृष्टि का सर्जन करते हैं। तीनों तपस्वियों की सृष्टि के मानव सुन्दर स्वस्थ दीर्घजीवी और सुसभ्य होते हैं।

वे सन्तान धन्य हैं जिन्हें गर्भाधान से ही उत्तम रजवीर्य के द्वारा ब्रह्मचर्य और संयम की सीख मिली है और आचार्य के सान्निध्य में पच्चीस, तीस या चालीस वर्ष तक रहकर जिन्होंने अपने ब्रह्मचर्य को पूर्ण तथा पुष्ट किया है। आदर्श ब्रह्मचारी के शरीर पर रोग आक्रमण नहीं कर सकते। उसकी कभी अकाल मृत्यु नहीं होती। ब्रह्मचर्य के तप से वह ज्ञान–विज्ञान की ऊंचाईयों को प्राप्त कर लेता है। मृत्यु उसके लिए भयावह या कोई रहस्यमय वस्तु नहीं रह जाती। इसीलिए वेद में कहा है–

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युम् अपाघ्नत। (अथर्व०)

अर्थात्– ब्रह्मचर्य रूप तप से विद्वान् लोग मृत्यु को भी परास्त कर लेते हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि माता–पिता हृदय से स्वसन्तान का कल्याण करना चाहते हैं, तो वे उन्हें बाल्यावस्था में ही ऐसी शिक्षा का उपदेश कर दें जिससे सन्तान किसी के भ्रमजाल में पड़कर दुःख न पावें। सन्तानों को वीर्य की रक्षा में आनन्द और नाश करने में दुःख प्राप्ति भी जना देनी चाहिए और उन्हें इस प्रकार उपदेश करना चाहिए कि "देखो जिस मनुष्य के शरीर में वीर्य सुरक्षित रहता है उसको आरोग्य, बल, बुद्धि और पराक्रम बढ़कर बहुत सुख की प्राप्ति होती है। वीर्य के रक्षण की रीति भी जना देनी चाहिए, जिसमें विषयों की कथा, विषयी लोगों का सङ्ग, विषयों का ध्यान, स्त्रीदर्शन, एकान्त सेवन, सम्भाषण और स्पर्श आदि कर्म से ब्रह्मचारी लोग पृथक् रहकर उत्तम शिक्षा और पूर्ण विद्या को प्राप्त करें। जिसके शरीर में वीर्य नहीं होता, वह नपुंसक महाकुलक्षणी और प्रमेह रोग ग्रस्त होकर बल, तेज, बुद्धि, उत्साह, साहस, धैर्य और पराक्रम आदि गुणों से रहित होकर नष्ट हो जाता है।

जो लोग सुशिक्षा और विद्या के ग्रहण और वीर्य रक्षा के करने में जीवन के प्रथम वयः में चूक जाते हैं, उन्हें फिर इस जन्म में यह अमूल्य अवसर दोबारा कभी नहीं प्राप्त होता। इसलिए जब तक माता–पिता गृहकार्यों के करने वाले जीवित हैं। तब तक सन्तान को विद्याग्रहण और शरीर का बल बढ़ाने में पूरी शक्ति लगानी चाहिए।

सुश्रुत का प्रमाण है–

चतस्रोऽवस्थाः शरीरस्य वृद्धिर्यौवनम् सम्पूर्णता किञ्चित् परिहाणिश्चेति। आषोडशाद् वृद्धिराचतुर्विंशतेर्यौवनमाचत्वारिंशतः सम्पूर्णता ततः किञ्चित् परिहाणिश्चेति।

अर्थात्– मनुष्य के शरीर में सोलवें वर्ष से आगे सब धातुओं की वृद्धि होती है। पच्चीसवें वर्ष से युवावस्था का आरम्भ चालीसवें वर्ष में युवावस्था की सम्पूर्णता और उससे आगे किञ्चित्–किञ्चित् धातुओं की हानि होती है।

अतः जो व्यक्ति अपने कुल की उत्तमता, उत्तम सन्तान और सन्तान को दीर्घायु, सुशील, बुद्धि, बल, पराक्रमयुक्त विद्वान् और श्रीमान् करना चाहें वे सोलहवें वर्ष से पूर्व कन्या और पच्चीसवें वर्ष से पूर्व पुत्र का विवाह कभी न करें। यही सब सुधारों का सुधार, सब सौभाग्यों का सौभाग्य और सब उन्नतियों की उन्नति कराने वाला कर्म है। इस आयु में ब्रह्मचर्य रखकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्व–सन्तानों को विद्या और सुशिक्षा का ग्रहण करावें जिससे सन्तान उत्तम होवें।

यहाँ यह लिखने की आवश्यकता नहीं है कि ऐसे तपस्वी गृहस्थ को कृत्रिम साधनों से सन्तति निरोध की आवश्यकता न होगी। यहां तो अनिच्छित सन्तान का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। जब गृहस्थ आत्मसंयम में इतना पतित हो जाए कि उसे संतति–नियमन के लिए कृत्रिम साधनों का अवलम्बन करना पड़े तो यह गृहस्थ के पतन की पराकाष्ठा है। अपनी धातु के मूल्य और स्वजीवन के पवित्र लक्ष्य को भूलकर ही गृहस्थ निज कर्तव्यपथ से भटकता है। गृहस्थाश्रम चारों वर्णों और चारों आश्रमों की धुरी है। उसके पतन से समाज में अन्य कुछ शेष रह ही नहीं सकता।

आज के युग में विषयों की आंधी आई हुई है। क्या गृहस्थ, क्या बालक सभी इस आंधी की चपेट में हैं। वर्तमान परिस्थितियों को देखकर दिल कांपता है कि यह ऋषि–मुनियों की सन्तान आज किस ओर जा रही है। कामुकता ने इन्सान को अन्धा बना दिया है। सोचने की शक्ति समाप्त हो गई है। शरीरों को खोखला कर दिया गया है। आए दिन अखबारों के बड़े–बड़े पृष्ठ अपहरण, बलात्कार, व्यभिचार, भ्रूणहत्याओं व गर्भपात जैसी शर्मनाक घटनाओं से रंगे हुए देखते हैं। देश के अखबारों का समूचा, सम्पादकवर्ग केवल तीन प्रकार की सूचनाओं के संग्रह में संलग्न है। वे सूचनाएं हैं–काम–आवेगकृत, लोभवश और क्रोधावेष्टित की गई क्रियाएं। ये सब नरकलोक की सूचनाएं हैं। आज का मानव नारकीय जीवन व्यतीत कर रहा है। गीता में काम, क्रोध तथा लोभ को नरक के द्वार बतलाया है। इन घटनाओं को पढ़ने के लिए प्रातःकाल से ही अखबारों पर लोगों की भीड़ उमड़ पड़ती है। यह देखने के लिए कि आज किसने किसको बेइज्जत किया, लूटा अथवा हत्या की। रोज के अखबार में घटनाएं वही होती हैं। केवल पात्रों के नाम बदल जाते हैं। अखबारों के खरीददार इन पात्रों के नाममात्र पढ़कर अपना दिल बहलाव करते हैं। कितने निम्न–स्तर की जानकारी से अपने को परितुष्ट महसूस करते हैं।

महात्मा गांधी, विनोबा भावे जैसे राष्ट्रनेता भी संततिनियमन के कृत्रिम साधनों की आलोचना करते हैं। किन्तु फोड़ा जब इतना पक गया हो कि जिसके लिए अन्य कोई औषधोपचार शेष न रह जाए तब उसका अन्तिम उपचार शल्य चिकित्सा ही है। मनुष्यों को तो आप उपदेश से सुमार्गगामी बना सकते हैं, किन्तु जब मनुष्य मनुष्यत्वहीन हो गया हो, मनुष्य की

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचारशक्ति समाप्तप्राय हो गई हो तब उसकी बढ़ती हुई जनसंख्या पर नियन्त्रण करने के लिए कृत्रिम साधन के अलावा अन्य भला क्या उपाय हो सकता है ? परन्तु अब मनुष्य ने भी पिशाच की भांति मांस भक्षण सीख लिया है। जनसंख्या पर नियन्त्रण करने के लिए अब दूसरा कदम यह नरपिशाच सर्पिणी की तरह अपने शिशु का आहार करने में उठाएगा। क्योंकि जो हजारों बार अपनी आत्महत्या कर सकता है, भ्रूणहत्या कर सकता है, उसके लिए शिशुहत्या करना कौन सा कठिन काम है। आप्रेशन इसे कोई तोहफा नहीं दिया गया अपितु इसके दुष्कृत्य का शासन द्वारा इसे दण्ड है और इस दुष्कृत्य का अन्तिम परिणाम होगा कि इन साधनों का अवलम्बन करने वाली जाति एक सदी में सर्वथा निस्तेज और निर्वीर्य होकर विश्व के इतिहास में सदा के लिए लुप्त हो जाएगी। तीव्रता से अपनी मौत की ओर बढ़ रही यह हिन्दू जाति दया की पात्र है। इसे कोई चेताने वाला नहीं। विश्व को संयम का उपदेश देने वाली यह जाति स्वयं ही संयम से हीन होकर, दयनीय अवस्था को प्राप्त हो रही है।

हम ऐसा नहीं कह सकते कि पिच्यानवे करोड़ की आबादी वाले देश में कोई भी संयमी व्यक्ति नहीं है। निश्चय ही आज भी यत्र तत्र ऐसे सद्गृहस्थ हैं जो आत्मसंयम से जीवन व्यतीत कर रहे हैं । जो लोग उस पथ पर चलना चाहते हैं उनके लिए सदैव द्वार खुले हुए हैं। अपने जीवन के विकास का प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण अधिकार है। यह ठीक है कि परिस्थितियाँ व्यक्ति को एक प्रकार का जीवन व्यतीत करने के लिए बाधित करती हैं, किन्तु फिर भी व्यक्ति परिस्थितियों का दास नहीं है। उन परिस्थितियों को वैसा बनाए रखने में व्यक्ति का अपना भी योगदान रहता है। यदि वह चाहे तो परिस्थितियों का विरोध कर सकता है और परिस्थितियों में परिवर्तन ला सकता है।

जो व्यक्ति ब्रह्मचर्य और संयम का जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, वे सबसे पूर्व अपने में आत्मविश्वास पैदा करें। दृढ़ इच्छाशक्ति से काम लें। अपने भोजन को परिवर्तित कर दें। प्राकृतिक जीवन जीयें। प्रातःकाल सवेरे उठें। ईश्वर से मदद मांगें। दिनभर कार्यों में व्यस्त रहें। गन्दी पुस्तकों और गन्दे साथियों का परित्याग कर दें। दुर्व्यसनों से दूर रहें। आपको अवश्य और निश्चित रूप से सफलता मिलेगी। संकल्पशक्ति जीवन का कायाकल्प कर देती है।

स्वास्थ्य-अभिलाषियों को यह सदैव याद रखना चाहिए कि वीर्यरक्षा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में जीवन और वीर्यनाश में मृत्यु निहित है। यही स्वास्थ्य का मूलभूत सिद्धान्त है। वीर्य मानव शरीर का बीज है। जिस बीज से हम सब की उत्पत्ति हुई है उसे व्यर्थ नष्ट करना स्वयं को नष्ट करना है, मानव समाज को और उसकी मान–मर्यादाओं को नष्ट करना है। वीर्य का विनाश करना प्रकृति के विरुद्ध लड़ाई है और इस लड़ाई में अपनी पराजय निश्चित है। मानव की इस पराजय में क्रमशः व्याधि, जरा और मौत का आगमन होता है। और फिर मानव की सन्तति का बौद्धिक, शारीरिक और चारित्रिक पतन होता है। पशु भी वह दुष्कृत्य नहीं करते जिन पर आज का मानव उतारू है।

सभी पशु–पक्षी ऋतुगामी हैं, किन्तु मानव ने सब मर्यादाओं को ताक पर रख दिया है। विषयों के मद ने मानव की बुद्धि को ग्रस लिया है। हे मानव! तुझे क्या हो गया है ? देशप्रेम और विश्व–कल्याण की बातें करने वाला आज अपनी जाति और कुल के उत्थान की भी बात भुला बैठा है। विश्व को शान्ति का सन्देश देने वाले भारत के मनीषियों के पास ऐसी कौन सी वस्तु थी जिससे यह विश्वगुरु कहलाया। ब्रह्मचर्य व्रत ही ऋषियों का वह व्रत था जिसके बल पर वे विश्व को अमरता का सन्देश देते थे। आज भी हम उस अमृतपान का रसास्वाद ले सकते हैं।

ब्रह्मचर्य एक दिव्य रसायन है। चरकसंहिता में जिस साधन से स्वस्थ व्यक्ति को बुद्धि, श्रद्धा, उत्साह, मेधा, धृति, स्मृति, ओज, आरोग्यता आदि पवित्र भावों की प्राप्ति हो और वात, पित्त, कफ तीनों दोष समता में बने रहें और रस, रक्त, मांसादि धातुओं का उचित अपचय हो उस साधन को रसायन कहा है। ब्रह्मचर्य का रसायन मन में पड़ी हुई उन समस्त वासनाओं का उन्मूलन कर देता है जो जन्म–जन्मान्तर से मनुष्य का छाया के समान पीछा कर रही हैं। ब्रह्मचर्य मानव के स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों पर समान रूप से दिव्य प्रभाव डालने वाली उत्कृष्टतम महौषध है। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश इन पंच क्लेशों को निर्मूल करने के लिए यदि तीनों लोकों में कोई श्रेष्ठतम रसायन है तो वह ब्रह्मचर्य ही है।

हमारे शरीर में दो प्रकार की गति होती है। एक उर्ध्वगति और दूसरी अधोगति। उर्ध्वगति में शरीरगतवायु और वीर्यधातु शरीर में उर्ध्वगमन करते हैं। इस स्थिति में ईश्वर–चिन्तन, ज्ञान–विज्ञान, धारणा, ध्यान और समाधि की प्राप्ति होती है। अधोगति में वीर्य, वायु के साथ नीचे को बहकर पतन को प्राप्त होता है और उसी के साथ काम, क्रोध, लोभ,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईर्ष्या आदि कुत्सित मनोभावों का उदय होता है। ब्रह्मचर्य रसायन के सेवन से इह और परत्र दोनों लोकों में कल्याण होता है। जिस ऊर्जा शक्ति के होने पर शारीरिक स्वास्थ्य स्फूर्ति, बौद्धिक बल, सामाजिक एवं राष्ट्रीय प्रगति आदि प्रशस्त भावों की उपलब्धि होती है और प्रकाशपथ का उदय होता है, उस ऊर्जा शक्ति के लिए ब्रह्मचर्य रसायन का सेवन करना नितान्त आवश्यक है।

पाश्चात्त्य विचारकों के मतानुसार वीर्य-संरक्षण को अस्वाभाविक और विषय-उपभोग को शारीरिक धर्म माना गया है। उनके मतानुसार वीर्यसुरक्षा होनी कदापि संभव नहीं है। किन्तु यह पक्ष अनुभव और शास्त्रप्रमाण के विरुद्ध है। आज भी अनेक योगाभ्यासी वीर्य की उर्ध्वगति प्राप्ति करते हैं अत एव उनका पक्ष कदापि मान्य नहीं हो सकता। वीर्यपतन के साथ शरीर का वायु कुपित हो जाता है और कुपित वायु प्रथमतः कब्ज करता है फिर नाड़ी-दौर्बल्य, शिरोवेदना, स्मृतिभ्रंश, धातुक्षीणता, प्रमेह, नपुंसकता, शीघ्रपतन, हृदयरोग, पक्षाघात, अपस्मार, पागलपन, श्वास, कांश, क्षय, यक्ष्मा, अग्निमान्द्य, अरुचि आदि अनेक भयङ्कर रोगों का जन्म होता है। वीर्य शरीर का राजा है। उसके पतन होते ही शरीर की सारी आभा गायब हो जाती है। शरीर का सारा ढांचा ढीला होकर निष्प्राण हो जाता है। विषयों के अति सेवन से गृहस्थ गृहस्थ के काम का भी नहीं रहता। जो जीवन में सच्चे सुख स्वास्थ्य की कामना करते हैं तथा मानव जीवन में बहुमुखी विकास की अभिलाषा रखते हैं। उन्हें प्रयत्नपूर्वक ब्रह्मचर्य के पीयूष का पान करना चाहिए। ब्रह्मचर्य की महिमा लिखने में लेखनी असमर्थ है। इसका अनुभव व्यक्ति स्वयं संयम का जीवन अपनाकर ही कर सकता है। जो जितनी श्रद्धा और लग्न से इस पीयूष का सेवन के पान करेगा वह उसी अनुपात में आनन्द को प्राप्त होगा-

ब्रह्मचर्यम् आयुष्याणां श्रेष्ठम्। (चरकसूत्र)

अर्थात्- आयुर्वर्धक समस्त साधनों में ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ साधन है। यह मानव जीवन की उन्नति का मूल मन्त्र है।

मृत्युतम में रवि का उदय है ब्रह्मचर्य।
ब्रह्म मग में, एक पग है ब्रह्मचर्य॥

---०---

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०.भूमि, आकाश और प्रकाश का हमारे जीवन के लिए महत्त्व और उनके उपयोग

वनस्पति जगत् में यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि एक छोटे से छोटे पौधे के बीज के अङ्कुरण के लिए भूमि, पानी, आकाश और प्रकाश की आवश्यकता है। इनके अभाव में न बीज उग सकता है और न बढ़ सकता है। यह आवश्यकता वनस्पति जगत् की ही नहीं अपितु प्राणिमात्र की है। वेद में भूमि को माता और द्यौ को पिता की उपमा दी है। जिसका भाव यह है कि जैसे बालक की उत्पत्ति में माता-पिता हेतु हैं उसी प्रकार प्राणिमात्र की उत्पत्ति में भूमि और सूर्य का प्रकाश कारण है। सूर्य अपनी किरणों से जलों का आकर्षण करके मेघ रूप में आकाश में धारण करता है। और फिर वायु और बिजली के योग से वृष्टि करता है जिससे अन्नादि पैदा होकर प्राणिजगत् की उत्पत्ति होती है। तथा ये ही भूमि, आकाश और प्रकाश तथा जल प्राणिमात्र के जीवन का धारण और पोषण करते हैं। भूमि का एक छोटा सा टुकड़ा करोड़ों जीवनों का आधार है। हमारे जीवन के सारे क्रियाकलाप जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त इस भूमि के ऊपर ही होते हैं। भूमि, सूर्य, हवा और पानी इन तत्त्वों में सृष्टि के आदि से परमेश्वर ने दिव्य शक्तियों का अक्षय कोष स्थापित किया है। जो अरबों वर्षों तक प्राणिजगत् का पोषण करते रहेंगे।

सूर्य और पृथिवी में रोग निवारण की अद्भुत शक्ति है। जीवनी तत्त्व समग्र रूप से इनमें ओतप्रोत हो रहा है। हवा, प्रकाश और मिट्टी आदि के सीधे सम्पर्क में रहने वाले पशु-पक्षी कभी बीमार नहीं होते। जगत् का सर्वाधिक सभ्य प्राणी मानव अपने को भूमि, सूर्य, आकाश तथा वायु के सीधे सम्पर्क से बचाता है। जिसके फलस्वरूप वह रोगी होता है। प्रकृति के सीधे सम्पर्क में रहना ही आरोग्य की कुञ्जी है। अपने दैनिक जीवन में हम भूमि, वायु और प्रकाश आदि का किस प्रकार उपयोग कर सकते हैं और उसका हमारे लिए क्या महत्त्व है। यह हम नीचे की पंक्तियों में दर्शाते हैं-

भूमि

मिट्टी के गुण -

(१) गन्धवती पृथिवी। (वैशेषिक दर्शन) अर्थात्- मिट्टी का गुण धर्म

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गन्ध है। इसी गुण के कारण गन्दी और सड़ी हुई चीजों के ऊपर मिट्टी डालने से उनकी दुर्गन्ध चली जाती है। अपवित्र हाथों को मिट्टी से धोने से हाथों की दुर्गन्ध दूर हो जाती है। मिट्टी के इसी गुण के कारण कीटाणुओं से भरे हुए दांतों तथा घावों में मिट्टी की पट्टी बांधने से दुर्गन्ध नष्ट हो जाती है। मुर्दे सड़कर दुर्गन्ध न फैलाएं इसलिए उनको मिट्टी में गाढ़ने की प्रथा ईसाई तथा मुस्लिम संप्रदायों में प्रचलित है।

(२) **विषशोधक गुण**– मिट्टी अपने इस विषशोधक गुण के कारण सभी प्रकार के विषों को शरीर से शीघ्र बाहर निकाल देती है। सांप, बिच्छु तथा अन्य विषैले जन्तु के काटे स्थान पर मिट्टी की पट्टी का बार–बार प्रयोग विष को चूस लेता है।

(३) **दर्दनाशक गुण**– शरीर के किसी भी भाग में दर्द हो अथवा चोट हो, मिट्टी की पट्टी उसे दूर करने में चमत्कारी प्रभाव दिखाती है।

(४) **विद्रावक गुण**– बड़े से बड़े भयानक फोड़े में मिट्टी की पट्टी बदल–बदलकर रखते रहने से कुछ दिनों में उसे पकाकर विजातीय द्रव्य को बहा देने की मिट्टी में विचित्र शक्ति है।

(५) **घाव भरने का गुण**– बड़े से बड़े जख़्म मिट्टी की पट्टी रखने से बहुत जल्दी भर जाते हैं तथा जख़्म का कालान्तर में निशान भी नहीं रहता।

(६) **दोषशामक गुण**– आयुर्वेद के वात, पित्त और कफ तीनों दोषों का पेडू पर मिट्टी की पट्टी रखने से शमन होता है। पेट के वायु सम्बन्धी समस्त विकार बहुत शीघ्र दूर होते हैं।

(७) **रक्तशोधक गुण**– मिट्टी का लेप शरीर से गन्दगियों को चूसकर बाहर निकाल देता है। जिससे रक्त शुद्ध होकर त्वचा सम्बन्धी अनेक रोग दूर हो जाते हैं।

(८) **बन्धक गुण**– अपने बन्धक गुण के कारण मिट्टी की पट्टी दस्तों में पेडू पर रखने से ढीले दस्त बन्धकर आने लगते हैं तथा दस्तों का वेग शान्त होकर सामान्य स्थिति प्राप्त हो जाती है।

(९) **चुम्बकीय गुण**– मिट्टी का एक–एक कण अपने में चुम्बकीय गुण संजोए हुए है और अपने इस गुण के क़ारण वह विद्युत् शक्ति का भण्डार है। इस कारण वह शरीर से रोगों को बाहर खींचने की शक्ति रखता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१०) निर्जीवता को सजीवता में बदलने का गुण– पृथ्वी के सम्पर्क में आकर निर्जीव पदार्थ भी कालान्तर में सजीव हो जाते हैं। गेहूं का बीज सजीव अवस्था में पानी में भीगने पर मिट्टी के सम्पर्क में एक पौधे का रूप धारणकर लेता है। वह पौधा पृथ्वी में निर्जीव अवस्था में पड़े हुए लोहा, कैल्शियम, फासफोरस आदि खनिज लवणों को ग्रहण करके सजीव रूप में बदल देता है और यही कारण है कि गेहूं आदि बीज के अन्दर पाए जाने वाले लोहादि लवण सजीव होने से लोहे की भस्म तथा इस प्रकार के अन्य खनिज लवणों से अधिक उपयोगी हैं। जो लवण हमें कन्द–मूल, फल–फूल या शाक–सब्जी के द्वारा प्राप्त होते हैं उनके सजीव होने के कारण हमारा शरीर उन्हें तत्काल आत्मसात् कर लेता है।

मिट्टी के प्रयोग

मिट्टी का हम तीन प्रकार से प्रयोग कर सकते हैं–

(१) मिट्टी पट्टी

आप अपने घर में एक घड़िया में जंगल की शुद्ध मिट्टी लाकर रखें। जिसमें किसी प्रकार की गन्दगी कंकड़ पत्थर न हों, अधिक बालू न हो, चिकनी दोमट मिट्टी उत्तम होती है। मुल्तानी मिट्टी का आप खुशी से प्रयोग कर सकते हैं। मिट्टी को कूट–छानकर घड़े में डाल दो और उसमें आवश्यकतानुसार इतना पानी मिलावें कि मिट्टी की पट्टी बनाई जा सके। यह मिट्टी का घड़ा आपके घर का फायरब्रिगेड है।

आवश्यकता पड़ने पर तुरन्त घड़े से मिट्टी निकालिए और पट्टी बनाकर शरीर के रुग्ण भाग पर कपड़े से लपेटकर बांध दीजिए। शरीर का कोई भी रोग क्यों न हो, किसी भी तरह का दर्द हो सभी में मिट्टी की पट्टी जादू का काम करती है। शरीर का रोग बाहर हो या भीतर बहुत शीघ्र मिट्टी की पट्टी उसे शान्त करती है। शरीर के विजातीय द्रव्य को मिट्टी घुलाकर अपने आकर्षण बल से उसे बाहर खींच लेती है।

शरीर पर चोट, घाव, सूजन, जला–कटा, फोड़ा–फुन्सी, दाद, खाज, खुजली, सिर की रूसी, कोढ़, टूटी हड्डी, जन्तुओं के विष तथा औषधियों के विष, गले, कंठ, आंख, नाक, कान आदि के रोग, गठिया, वात रोग, कब्ज तथा पेट के अन्य रोग, यकृत, मूत्राशय तथा जननेन्द्रिय के रोग, स्नायुमण्डल की शिथिलता तथा दर्द आदि अनेकानेक रोग जो आए दिन हमारे घरों में होते रहते हैं, मिट्टी की पट्टी इन सभी में जादू का प्रभाव

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिखाती है। अपने चुम्बकीय गुण के कारण मिट्टी पट्टी विजातीय द्रव्य को बाहर खींच कर अपने में समेट लेती है।

सभी रोग पेट की खराबी से पैदा होते हैं अतः पेडू पर मिट्टी की पट्टी रखना सभी रोगों में लाभदायक है। नाड़ी दौर्बल्य आदि रोग सम्पूर्ण शरीर को प्रभावित करते हैं। ऐसे रोगों में शरीर का कोई स्थान विशेष ग्रस्त नहीं होता। इन रोगों में पेडू पर मिट्टी की पट्टी बहुत लाभ करती है। पेडू पर मिट्टी पट्टी रखते ही ज्वर का वेग तुरन्त घट जाता है। मिट्टी पट्टी शरीर के किसी भी भाग पर घण्टों रख सकते हैं। दिन में दो–तीन बार इसे ले सकते हैं। रोग यदि कठोर हो तो पट्टी शुरु में जल्दी–जल्दी बदलनी चाहिए। सोते समय इस पट्टी का प्रयोग कर सकते है। ४०–४५ मिनट के बाद जब पट्टी गर्म हो जाए तो उसे बदल देना चाहिए। शरीर की गर्मी को चूसकर लगभग पौने घण्टे में मिट्टी पट्टी गर्म हो जाती है। मिट्टी की पट्टी सदा ठण्डे रूप में ही प्रयोग करनी चाहिए। सर्दी के मौसम में यदि बहुत अधिक ठण्ड हो तो मिट्टी को हल्का उष्ण कर सकते हैं।

मिट्टी का हम समूचे शरीर पर भी लेप कर सकते हैं। मिट्टी का लेप करके धूप में लेट जाना चाहिए। यह लेप शरीर की त्वचा को फोड़े–फुन्सी, खाज–खुजली, कुष्ठ और एग्ज़ीमा आदि रोगों से मुक्त कर देता है तथा रक्त को शुद्ध करता है और सारे स्नायुमण्डल को नवजीवन प्रदान करता है।

मिट्टी पट्टी बनाने का प्रकार–

मिट्टी को आवश्यकतानुसार ठण्डे या गर्म पानी से गूंध लेना चाहिए। गुंधी हुई मिट्टी न बहुत सख्त और न बहुत ढीली हो। मिट्टी की पट्टी आधी से एक इंच तक मोटी तथा जिस अंग पर रखनी हो उसी के अनुसार लम्बी चौड़ी बनानी चाहिए। परन्तु इतना ध्यान रखें कि पट्टी रोग वाले स्थान को चारों ओर से ढक सके तथा साथ ही चारों ओर कुछ बाहर रहे। इसके ऊपर कोई टाट पट्टी आदि बांध देना चाहिए ताकि गिरने का भय न रहे। प्रयोग की हुई मिट्टी आधा पौने घण्टे बाद फेंक देनी चाहिए। उसका दोबारा प्रयोग नहीं करना चाहिए। दूसरी बार के लिए नई मिट्टी का प्रयोग करें।

पेडू पर मिट्टी पट्टी भोजन के कम से कम आधा घण्टा पहले तथा तीन घण्टे बाद रखना चाहिये। जब पट्टी खुश्क हो जाये, या शरीर की

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्मी से गर्म हो जाए तो उसे हटा देना चाहिए। बुखार, दस्त आदि में कुछ समय का अन्तर देकर कई बार भी पट्टी रखी जा सकती है। आमतौर पर सभी रोगों में ठण्डे पानी से बनी मिट्टी पट्टी का ही प्रयोग करना चाहिए किन्तु किसी अंग में सूजन, अकड़न या तनाव हो तो गर्म मिट्टी की पट्टी रखें। मिट्टी को किसी लकड़ी या चम्मच आदि की सहायता से गूंधना चाहिए। उसमें हाथ नहीं डालना चाहिए।

(२) नंगे पैर टहलना

मिट्टी का दूसरा उपयोग है जमीन पर हम नंगे पैर रहना। प्रकृति नहीं चाहती कि उसके प्यारे बच्चे दिन-रात मौजे और भारी-भारी जूते पहनकर पैरों में हवा प्रकाश न लगने दें। मौजों के अन्दर पसीने की गर्मी से बदबू पैदा हो जाती है। मिट्टी का सम्पर्क दुर्गन्ध को दूर करता है। नंगे पैर टहलने से आँखों की ज्योति बढ़ती है। पैरों की जलन शान्त होती है। रक्त का संचार बढ़ जाता है। सिर में गर्मी नहीं बढ़ने पाती, रात को नींद अच्छी आती है। जिन्हें प्रकृति के खुले वातावरण में रहने का सौभाग्य प्राप्त है उन्हें नंगे पैर अवश्य चलना चाहिए। जहाँ के लोगों के लिए मिट्टी का सीधा सम्पर्क सम्भव न हो वहाँ प्रातः समीप के बाग-बगीचे या पार्क में जाकर ओस गिरी हुई घास या मिट्टी में नंगे पैर पन्द्रह मिनट से आधा घण्टे या एक घण्टे तक अवश्य टहलना चाहिए। जो लोग ऐसा नहीं कर सकते वे अपने घर में ही नंगे फर्श पर एक-दो घण्टे तक नंगे पैर रहें। दिन में भी हमें खुले हवादार जूते- चप्पल ही प्रयोग करने चाहिएं। जहाँ तक संभव हो, छोटे बच्चों को जूते और मौजे नहीं पहनाने चाहिएं। मिट्टी में नंगे पैर रहना, मिट्टी में खेलना, मिट्टी में लेटना, बच्चों के स्वास्थ्य के लिए हितकारक है। मिट्टी पर टहलने की अपेक्षा ओस पड़ी हुई घास पर टहलना विशेष लाभदायक है। इससे शरीर इतना सुदृढ हो जाता है कि सर्दी जुकाम होने का कभी भय नहीं रहता।

(३) भूमि पर शयन

हमारी पृथ्वी एक विशाल चुम्बक है। पृथ्वी का उत्तरी ध्रुव इस चुम्बक का उत्तरी सिरा (North pole) तथा पृथ्वी का दक्षिणी ध्रुव चुम्बक का दक्षिणी सिरा (South pole) है। उत्तर से दक्षिण को चुम्बकीय किरणें प्रवाहित हो रही हैं। ये चुम्बकीय किरणें अपने चहुं ओर एक विद्युत् क्षेत्र को उत्पन्न करती हैं। इस प्रकार हमारी पृथ्वी के चारों ओर एक विद्युत् क्षेत्र

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पन्न होकर कार्य कर रहा है। इस क्षेत्र में रोगों को नष्ट करने की विशेष क्षमता है।

इस विद्युतीय क्षेत्र का अपने रोग निवारण में हम तब ही उपयोग ले सकते हैं जब कि हम अपने शरीर को भूमि पर विद्युतीय धाराओं की दिशा में सुला दें। खड़े होने या बैठने की स्थिति में वह शक्ति वैसा कार्य नहीं कर पाती।

हमारे प्राचीन ऋषि इस चुम्बकीय गुण से परिचित थे और इसीलिए उन्होंने शयन के विषय में अपने विचार देते हुएं बतलाया कि पूर्व दिशा में सिर करके सोने से आयु और आरोग्य की प्राप्ति होती है। उत्तर दिशा में सिर करके सोने से आयु क्षीण होती है। क्योंकि पृथ्वी विशाल चुम्बक है और वह हमारे शरीर रूपी लघु चुम्बक की शक्ति का आकर्षण कर लेती है। जिससे शरीर की शक्ति का क्षय होकर आयु क्षीण हो जाती है।

आजकल कृत्रिम चुम्बकीय छड़ से रोगोपचार की नई पद्धति प्रचलित हुई है। मानव की समझ पर हँसी आती है कि जो महाशक्तिशाली चुम्बक पृथ्वी का रोग निवारण में इस्तेमाल न करके बाजार से कृत्रिम चुम्बक का बक्स खरीद कर लाता है। प्राकृतिक चुम्बक पृथ्वी सर्वत्र सुलभ है और इसमें रोग हरण की शक्ति अनन्त गुणा है। आप भूमि पर शयन करके मनोवाञ्छित लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

पृथ्वी से आरोग्य लाभ लेने के लिए व्यक्ति को नग्न होकर भूमि पर इस प्रकार लेटना चाहिए कि सिर पूर्व दिशा में और पैर पश्चिम दिशा में रहें। मिट्टी के सीधे सम्पर्क में जाने से हमारे शरीर में एक ऊर्जा का प्रवेश होता है। यह पृथ्वी के विद्युत् क्षेत्र के कारण होता है। यह ऊर्जा शरीर के रोगाणुओं को आवेशित कर उनमें एक गति उत्पन्न करती है और वे अपना स्थान छोड़ देते हैं।

हमारे शरीर में सिर चुम्बक के उत्तरी ध्रुव का तथा पैर चुम्बक के दक्षिणी ध्रुव का कार्य करते हैं। चुम्बकीय किरणें सिर से पैर की ओर बहती हैं। इन चुम्बकीय किरणों के प्रभाव से शरीर में एक विद्युत् आवेश उत्पन्न होकर कार्य करता है। पृथ्वी के साथ सटकर लेट जाने से इस आवेश को बल प्राप्त होता है। जैसे कि किसी कम शक्तिशाली बैटरी को आवेशित करने के लिए किसी बड़ी बैटरी से जोड़ दिया जाता है। उसी प्रकार हमारा शरीर भी पृथ्वी से विद्युतीय आवेश ग्रहण करता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर के आवेशित रोगाणु सिर से पैर की ओर आगे बढ़ते हैं और अन्ततः पैरों के द्वारा पृथ्वी उनका शोषण कर लेती है। पृथ्वी के इस महोपकारी कार्य में, हम नंगे पैर भ्रमण तथा भूमि पर शयन करके, मदद कर सकते हैं। यदि हम इसमें आलस्य बरतेंगे तो रोगी रहेंगे। पृथ्वी पर शयन करने का अभ्यास हम पन्द्रह मिनट से आरम्भ करके एक घण्टे तक और फिर शनैः-शनैः उसे बढ़ा सकते हैं।

पृथ्वी के तल पर जो विद्युत् आवेश प्रवाहित हो रहा है उसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह उतनी ही वोल्टेज रखता है जितनी की हमारे शरीर को आवश्यकता है। यह ठीक है कि यह विद्युत् आवेश आप के घर में बल्ब नहीं जला सकता किन्तु आप के शरीर की बैटरी को अवश्य ही आवेशित कर देता है। जिससे बल, आयु और आरोग्य प्राप्त होता है।

पृथ्वी की विद्युतीय शक्ति रात्रि में विशेष काम करती है। आकाश और पृथ्वी की शक्तियों से मिलकर एक महान् शोधक शक्ति का उदय होता है।

विष को चूसने की मिट्टी में एक अद्भुत शक्ति है। सर्प-दंश से दंशित व्यक्तियों को मिट्टी में कण्ठ तक दबाकर कुछ घण्टे बैठा देने से ठीक होते देखे गये हैं।

रोगी की पाचन क्रिया को सुधारने एवं उसे शक्तिशाली बनाने के लिए जमीन पर सोने से अन्य कोई उत्तम उपाय नहीं है। जब कभी मौका मिले, कपड़े पहनकर ही सही, धरती पर बैठना चाहिये। टहलते समय या लम्बी यात्राओं में, धरती पर बैठकर या लेटकर आराम कीजिये। धरती का थोड़ी देर का सम्पर्क भी आपको नवजीवन प्रदान करेगा।

आकाश और प्रकाश

भूमि में छः प्रकार के रस, सूर्य में सात प्रकार की रश्मियाँ तथा आकाश में ४९ प्रकार के मरुद् गण हैं। भूमि पर प्रत्येक जीवधारी का जीवन इन सभी प्रकार के रसों, रश्मियों तथा मरुतों से प्रभावित होता है। खुले आकाश में नाना प्रकार के जीवनी तत्त्वों को लेकर मरुद् गण विचरते रहते हैं। भिन्न-भिन्न मौसम तथा जलवायु के परिवर्तन में ये मरुद्गण हेतुभूत होते हैं। अथर्ववेद का वचन है-

मरुद्भिरग्र प्रहितो न आगन्।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात्– मरुतों के द्वारा जीवधारी शक्ति प्राप्त करके गतिमान होते हैं। हमारे प्राण इन मरुतों से जीवनी शक्ति का ग्रहण करते हैं।

खुले आकाश में सीधे मरुतों के सम्पर्क में आकर यदि मानव शयन करता है, खुले वायुमण्डल में भ्रमण करता है तथा खुले स्थान पर निवास करता है तो वह सुखपूर्वक आरोग्य का जीवन जीता है। इसके विपरीत तंग स्थान पर रहने वाले प्राणियों के जीवन का विकास रुक जाता है।

किसी पौधे को यदि अन्धेरे–तंग स्थान पर रख दिया जाता है तो वह मुरझा जाता है। परन्तु खुले आकाश और प्रकाश में लाए जाने पर उसमें फिर जीवन ज्योति जगमगा उठती है। यही हाल पशुओं का भी होता है।

अंधेरे कमरों में बंद रखने पर पशुओं के रोमकूपों के द्वारा उनके शरीर की गरमी निकलती रहती हैं। परन्तु मनुष्य का शरीर कपड़ों से सदा ढका रहता है इस कारण उसके स्वाभाविक कार्य में बाधा पड़ती है। कपड़े उतारकर शरीर के वायु और प्रकाश के संसर्ग में आने से शरीर के अङ्ग प्रत्यङ्ग तेजी से काम करने लगते हैं। जीवनी शक्ति बढ़ती है और निर्जीव पड़े हुए रोगी शरीर में भी उल्लास भर जाता है।

कुछ जाति विशेषों को छोड़कर समूचा प्राणि–जगत् चाहे वह पेड़–पौधे हों या जीव–जन्तु सब के सब अपना भोजन सूर्य के प्रकाश में ग्रहण करते हैं। प्रभात काल से ही पौधे अपना भोजन निर्माण कार्य आरम्भ कर देते हैं। वायुमण्डल की कार्बन को ग्रहण करते और आक्सीजन को छोड़ते हैं। यह आक्सीजन मनुष्यों द्वारा ग्रहण की जाती है। जो हमारी जठराग्नि को प्रदीप्त करती है।

प्रातःकाल अगर हम अपने शरीर को निर्वस्त्र कर कुछ देर के लिए ही सीधे आकाश और प्रकाश के सम्पर्क में लायें तो शरीर की अग्नि उद्दिप्त होती है। हम अपनी नासिका द्वारा ही श्वसन क्रिया नहीं करते अपितु अपनी त्वचा के असंख्य रोमकूपों द्वारा भी श्वसन क्रिया करते हैं। भारी वस्त्रों के व्यवधान से वह क्रिया समुचित रूप से नहीं हो पाती। इतना ही नहीं, वस्त्रों के अन्दर रुकी हुई शरीर की गन्दी वायु को भी शरीर पुनः ग्रहण करने लगता है, जिससे अनेक रोगों की उत्पत्ति होती है।

आकाश और प्रकाश का सम्पर्क न मिलने से हमारी त्वचा अपना कार्य यथेष्ट नहीं कर पाती, फलतः सारा शरीर ही निर्बल और रोगी हो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है।

सभ्यता की आड़ में हम अपने शरीर को सदैव नंगा तो नहीं रख सकते किन्तु ऐसे वस्त्रों का प्रयोग तो हम स्वतंत्रता से कर ही सकते हैं जिनमें हमारे शरीर को यथेष्ट वायु, आकाश तथा प्रकाश का संसर्ग मिल सके।

सूर्य मण्डल जीवन का भण्डार है। वहाँ से सूर्य की किरणें जीवनी शक्ति लेकर पृथ्वी पर उतरती हैं और पृथ्वी के तल पर जल और वायु के सम्पर्क में आकर उनमें भी जीवन का संचार करती हैं। इन किरणों के संयोग से जल और वायु में विशेष परिवर्तन आते हैं। जिन स्थानों के जल और वायु को सूर्य की किरणें नहीं मिलती वे दूषित हो जाते हैं। सूर्य की किरणों में विषशोषण की अद्भुत शक्ति होती है। ऋग्वेद में कहा है–

सूर्ये विषम् आ संजोमि।

अर्थात्– सूर्य विष को अपनी किरणों से खींच लेता है।

सूर्य की किरणों के विभिन्न रंगों पर भी वैज्ञानिक लोगों ने खोज की है। जिनका रंग चिकित्सा में उपयोग किया जाता है। वैज्ञानिकों की खोज के अनुसार प्रत्येक रंग का अपना विशेष महत्त्व है। सूर्य की रश्मियाँ विभिन्न रंगों की शीशियों में रखे जल पर भिन्न–भिन्न प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करती हैं। जिनका अनेक रोगों के उपचार में प्रयोग किया जाता है। इस उपचार पद्धति को अंग्रेज़ी में Cromopathy कहते हैं।

प्रातःकाल उठने के बाद मानव यदि शीतल जल के स्नान के पश्चात् अपने शरीर को खुले आकाश और प्रकाश के सम्पर्क में केवल १५ मिनट के लिए भी ले आए और उस समय यथेष्ट व्यायाम करें तो सभी रोगों से छुटकारा मिल जाये और सुन्दर स्वास्थ्य का आनन्द प्राप्त होवे। सारे सुखों का मूल आधार स्वास्थ्य ही है। इस सच्चाई का ज्ञान हो जाने पर मनुष्य को ये सब प्राकृतिक क्रियाएँ भाररूप मालूम नहीं होतीं। मनुष्य फिर श्रद्धा से इनका अनुष्ठान करता है। मानवेतर सभी प्राणी प्रकृति के नियमों का पालन करते हैं। मनुष्य ने अपनी समझ से जो सभ्यता खड़ी की है उसी ने मानव समाज को रोगों का ग्रास बनाया है। मानव का रहन–सहन, खान–पान और वेशभूषा आदि सभी कुछ कृत्रिम और प्रकृति के विपरीत है।

प्रकृति की सहायता को मनुष्य जानबूझ कर ठुकराता है। आदमी को ज्वर हो जाने पर वह इसीलिये तेजी से बढ़ता है कि भीतर की गर्मी को

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न तो निकलने दिया जाता है और न ही वायु शरीर को शीतलता दे पाती है। जबकि रोगी अपने शरीर के कपड़े उतार फेंकने के लिए आतुर रहता है।

मनुष्य अपने को वायु और प्रकाश से दूर रखने का पाप बहुत समय से करता आ रहा है। इस पाप का उसे शीघ्रातिशीघ्र प्रतिकार करना चाहिए। उसे सर्दी से भयभीत नहीं होना चाहिए। प्रकृति ने जाड़े या ठण्ड की व्यवस्था इसलिए की है ताकि पृथ्वी पर सड़न पैदा करने वाले कीड़े–मकौड़े और गंदगी फैलाने वाले कीट तथा संक्रामक कृमि नष्ट हो जाएं। रोगी के शरीर की सफाई के लिए इसकी बहुत अधिक आवश्यकता होती है।

वायु और प्रकाश स्नान से यदि सर्दी–जुकाम होता है तो वह इस बात का प्रमाण है कि उनमें जीवनी शक्ति को जगाने की बहुत अधिक शक्ति है। जुकाम हो जाने पर भी प्रकाश स्नान बन्द नहीं करना चाहिए अन्यथा प्रकृति का कार्य रुक जाएगा। वस्तुतः वायु और प्रकाश स्नान से व्यक्ति का शरीर दिनभर गर्म रहता है। ठण्ड सहन करने की शक्ति बढ़ती है।

वायु और प्रकाश स्नान करते समय, विशेषकर जाड़े के मौसम में खूब व्यायाम करना चाहिए। टहलने और दौड़ के रूप में यह व्यायाम किया जा सकता है। इस स्नान के बाद शरीर में गर्मी लाना अत्यन्त आवश्यक है। तेजी से टहलने से, दौड़ने से या कोई श्रमसाध्य कार्य करने से अथवा कम्बल ओढ़कर लेटने से शरीर में गर्मी उत्पन्न करनी चाहिए।

यह समझना भूल है कि वायु और प्रकाश स्नान शरीर की गर्मी को कम करते हैं। वायु और प्रकाश लेने वाले व्यक्ति का शरीर स्नान के समय के अलावा हर समय गर्म रहता है। इससे रक्त सारे शरीर, हाथ–पैर की अङ्गुलियों तथा त्वचा की ऊपरी सतह तक तेजी से दौड़ने लगता है।

खुले आकाश में, शीतल जल तथा वायु और प्रकाश स्नान का ख्याल करके रोग की हालत में अनेक लोग भय से काँप उठेंगे। नंगे पैर घूमना, जमीन पर सोना और ठण्डे जल से स्नान करना तथा नंगे शरीर वायु और प्रकाश में रहना (भले ही थोड़ी देर का हो) लोगों को आश्चर्य की बातें लगती हैं और वे सोचते हैं कि ऐसा करने से तो स्वस्थ आदमी भी रोगी हो जाएगा और रोगी तो संसार से ही विदा हो जाएगा। किन्तु ऐसा सोचना सर्वथा निराधार है।

विश्व की रचना प्रेम के अनन्त भण्डार से हुई है। इस प्रेम के भण्डार में शुभ के अतिरिक्त अशुभ को स्थान ही नहीं है। जल की

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक–एक बूँद, शीतल पवन तथा सर्दी की प्रत्येक ठण्डी रात विश्व के कल्याण और सुख के लिए बनाई है।

प्रकृति से विमुख होकर मनुष्य ने कष्टों का कारण अपने अन्दर न खोजकर बाहर प्रकृति में खोजना आरम्भ किया। हम जितने ही बहिर्मुख होते जाते हैं प्रकृति हमें खतरों से भरी हुई, निर्दयी और कठोर मालूम होती है। ईश्वरीय प्राकृतिक नियमों पर भी हमें संदेह होता है। प्रकृति की घटनाओं तथा कार्यों का हम गलत अर्थ लगाने लगते हैं तथा प्रकृति के साधनों का अपनी दुर्मति से दुरुपयोग करके अपने लिए कष्ट और दुःख मोल लेते हैं।

हमारे गलत रहन–सहन और अप्राकृतिक भोजन के कारण हमारे शरीर में विजातीय द्रव्य इकट्ठे हो जाते हैं। हम लोग भारी–भारी जूते और अनेक मोटे तथा ऊनी वस्त्र पहनते हैं, शरीर पर ठण्डा पानी लगने से अपने को बचाते हैं, मिट्टी से हम दूर रहते हैं, वायु और प्रकाश हमारे शरीर को छूने नहीं पाते और हम सदैव गन्दी हवा में सांस लेते हैं। इन सब कारणों से तथा प्रकृति विरुद्ध अन्य पापों के कारण हमारी पाचन शक्ति बिगड़ जाती है। जीवनी शक्ति कम हो जाती है।

परन्तु मनुष्य जैसे ही अपने भारी–भारी जूतों–मोजों को तथा मोटे–मोटे कपड़ों को अलग कर देगा और ऐसे कपड़े प्रयोग करेगा जिनसे होकर शीतल हवा और प्रकाश शरीर तक आसानी से पहुँच सके, तथा प्राकृतिक भोजन आरम्भ करेगा तो प्रकृति हमारी जीवनी शक्ति को प्रेरित कर, विजातीय द्रव्यों को ढीला करके बलपूर्वक शरीर से बाहर कर देगी। जीवनी शक्ति की इस क्रिया को ही रोग का उभार कहते हैं।

इस प्रकार के उभार कमजोर, दुबले और बिगड़े हुए शरीर वाले लोगों में बहुत जल्दी और तेज गति से होते हैं और उनके लिए इसकी आवश्यकता भी अधिक होती है। क्योंकि अप्राकृतिक जीवन के फलस्वरूप उनकी जीवनी शक्ति बहुत मन्द पड़ जाती है और उनके शरीर में विजातीय द्रव्य बहुत बड़ी मात्रा में इकट्ठे हो जाते हैं।

इसलिए सर्दी और जुकाम आक्रमण करते हैं। विजातीय द्रव्य को बड़ी आतुरता से निकाल भगाने के लिए तीव्र रोग पैदा होते हैं।

शरीर में यदि विजातीय द्रव्यों का संग्रह न हो तो सर्दी–जुकाम पैदा होगा ही नहीं। CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम जितना आगे बढ़कर प्रकृति का स्वागत करेंगे, उतना ही शीघ्र हम अपने शरीर के अन्दर जमा हुए-हुए विजातीय द्रव्य को निकाल बाहर करेंगे। शरीर की जीवनी शक्ति जाग उठेगी। पाचनशक्ति बढ़ेगी, गुर्दे तथा बड़ी आँत अपना कार्य ठीक-ठीक करने लगेंगे, पसीना आने लगेगा, सभी अङ्ग-प्रत्यङ्ग बल प्राप्त करेंगे। तीव्र रोग हो जाने पर व्यक्ति को अपने में नई शक्ति की अनुभूति होगी। व्यक्ति को यह विश्वास हो जाएगा कि तीव्र रोग जरा भी खतरनाक नहीं हैं, वरन् वे उपचारात्मक उभार हैं, जिनके द्वारा शरीर अपने को विजातीय द्रव्य से मुक्त कर लेता है। तीव्ररोग अत्यन्त लाभकारी सिद्ध होते हैं। वे रोगी के लिए वरदान स्वरूप आते हैं। बड़े आनन्द और हर्ष के साथ उनका स्वागत करना चाहिए।

यदि तीव्र रोग होने पर व्यक्ति प्राकृतिक स्नान, मिट्टी के उपचार, वायु और प्रकाश आदि का पूरा-पूरा उपयोग लेता रहे तो वे बहुत शीघ्र ही शरीर को रोगमुक्त कर देते हैं।

स्वस्थ व्यक्तिं तथा जीर्ण रोग के रोगी भी यदि मिट्टी, जल, वायु और प्रकाश का समुचित उपयोग करें तथा प्राकृतिक आहार का सेवन करें, तो उन्हें जुकाम या अन्य कोई भी तीव्ररोग होगा ही नहीं।

पूर्णतया प्राकृतिक जीवन को अपना लेने से हमारे शरीर की जीवनी शक्ति प्रचण्ड रूप से उद्दीप्त हो उठती है और वह अपनी पूरी शक्ति से शरीर के विजातीय द्रव्य निकालने में लग जाती है। जब प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते हुए व्यक्ति के कुछ दिन बीत जाते हैं तो शरीर एकदम शुद्ध बन जाता है तो किसी प्रकार के उभार आदि की सम्भावना ही समाप्त हो जाती है।

न जाने प्रकृति से लोग इतना क्यों डरते हैं और उस पर विश्वास नहीं करते ? प्रकृति की चिकित्सा के साधन ही जल, मिट्टी, हवा, प्रकाश, सर्दी और गर्मी हैं। इन्हीं से संसार बना है और चलता है। प्रकृति सभी जीवों का भला चाहती है। वह बहुत दयालु है। यदि कोई उसकी तरफ एक कदम भी आगे बढ़ता है तो वह उसे अपने हृदय से लगाने के लिए हाथ फैलाकर दौड़ती है वह सदैव हमारा कल्याण करती है।

यद्यपि आजकल लोग प्राकृतिक जीवन का कुछ महत्त्व समझने लगे हैं, पर ठण्डी हवा के बजाय लोग पहले ठण्डे पानी की ओर आकृष्ट हो रहे हैं। स्थान-स्थान पर चिकित्सालयों में लोग ठण्डे जल से उपचार लेने जाते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। लोग यह समझ गए हैं कि ठण्डे जल में रोग निवारण का गुण बहुत अधिक मात्रा में है।

परन्तु शुद्ध ताजी और ठण्डी हवा में यह रोग निवारण का गुण जल से भी कहीं अधिक है। हवा मनुष्य का प्राण है। अपनी नासिका तथा त्वचा द्वारा मनुष्य जिस अनुपात में शुद्ध वायु का ग्रहण करता है ठीक उसी अनुपात में उसका शारीरिक मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य घटता या बढ़ता है।

यदि हम कुछ क्षणों के लिए मनुष्य को वायु से वञ्चित कर दें तो उसके जीवन का अन्त हो जाएगा। यदि हम उसके नाक और मुँह को खुले रखकर उसके सारे शरीर पर किसी ऐसे पदार्थ का लेप कर दें कि वह त्वचा से सांस न ले सके, तो कुछ ही घण्टों में उस की मृत्यु ही जाएगी।

इसके विपरीत ठण्डे पानी का उपयोग व्यक्ति एक बार में केवल कुछ ही देर तक और सीमित रूप में कर सकता है किन्तु वायु में वह हमेशा रह और घूम सकता है और इच्छानुसार समय–समय पर कपड़े भी उतार सकता है। जल का प्रयोग गलत ढंग से तथा अधिक देर तक करने पर हानि हो सकती है, किन्तु वायु और प्रकाश से कभी कोई नुकसान नहीं होता।

ठण्डी वायु, ठण्डे जल की भाँति ही गरम शरीर पर लगने से उसे चेतनता एवं शक्ति प्रदान करती है। गर्म दिन के बाद शीतल रात्रि का आगमन होता है। गर्मी के मौसम के बाद जाड़े का मौसम आता है। जाड़े के बाद गर्मी और गर्मी के बाद जाड़ा– इस परिवर्तन में प्रकृति के महान् उद्देश्य छिपे हुए हैं। खुली जगह में, वायु और प्रकाश के सम्पर्क में रोगी को ले जाने पर तीव्र रोग का रोगी भी तीव्र गति से स्वास्थ्य लाभ करेगा तथा जीर्ण रोग के रोगी की प्रकृति स्वयमेव अङ्गुली पकड़कर आनन्दमय लोक की ओर ले जाएगी।

---o---

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. श्रम और सफाई

श्रम मानव जीवन का एक अनिवार्य अङ्ग है। जो जाति या व्यक्ति निज जीवन में श्रम को अपना लेते हैं, वे अन्यों की अपेक्षा अधिक स्वस्थ और सुखी रहते हैं। ग्राम्य जीवन श्रमप्रधान होने से शहरों की अपेक्षा अधिक स्वस्थ और दीर्घायुष्य देखा जाता है। श्रम से दूर भागने वाले व्यक्ति अपने स्वास्थ्य की रक्षा नहीं कर सकते। ऐतरेय ब्राह्मण का वचन है–

नानाश्रान्ताय श्रीरस्ति। (ऐत० ब्रा० ७।१३)

अर्थात्– श्रम के द्वारा जिसने अपने शरीर और मस्तिष्क को नहीं थकाया ऐसे पुरुष को जीवन में कभी भी लक्ष्मी प्राप्त नहीं होती।

स्वास्थ्य रूपी धन सब धनों में श्रेष्ठ धन है। अतः उस श्रेष्ठ धन को पाने के लिए जो व्यक्ति श्रम नहीं करता वह उसे कभी नहीं पा सकता। स्वास्थ्य रक्षार्थ जो लोग श्रम करते हैं, वे ही स्वास्थ्य का आनन्द लेते हैं। परिश्रम का धनी व्यक्ति अपने खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त कर लेता है।

जिन व्यक्तियों के जीविकोपार्जन के साधनों में श्रम नहीं आता या न्यून आता है जैसे–आफिसों में काम करने वाले या दूकानदारी का काम करने वाले लोग, उन्हें प्रातः सायं अपनी दिनचर्या में भ्रमण आदि के द्वारा श्रम की क्षति पूर्ति करनी चाहिए। श्रम की महिमा में हमारे शास्त्र भरे पड़े हैं। ऐतरेय ब्राह्मण के ऋषि कहते हैं–

चरन् वै मधु विन्दति चरन् स्वादुमुदुम्बरम्।
सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते चरन्॥
चरैवेति चरैवेति॥

अर्थात्– चलता हुआ, श्रम करता हुआ व्यक्ति ही मधु पाता है। चलता हुआ ही स्वादिष्ट फल चखता है। जैसे सूर्य चलता हुआ कभी आलस्य नहीं करता। इसी प्रकार उससे शिक्षा ग्रहण करके तुम भी चलते रहो, चलते रहो।

व्यक्ति श्रम से पुनः–पुनः श्रान्त होने पर भी कार्य करता रहे। काम में लगे रहने वाले पुरुष को विजयश्री अवश्य ही प्राप्त होती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रम विहीन व्यक्ति आलसी और प्रमादी हो जाता है। आलस्य मनुष्य के रोगी, दरिद्र और भाग्यहीन होने का सबसे बड़ा कारण है। निठल्ले लोगों के शरीर और मन दोनों ही विकारयुक्त बन जाते हैं। गन्दे और मलिन विचार ऐसे ही लोगों के दिलों में अपना घर बनाते हैं। अंग्रेजी की कहावत है–

Constant occupation prevents temptation.

अर्थात्– कर्मण्यता कुविचारों में अवरोध पैदा करती है।

आलसी मनुष्य के सभी सद्‌गुण समाप्त हो जाते हैं तथा श्रमशील व्यक्ति में दैवी शक्तियों का उदय होता है और वह अपने श्रम के द्वारा ही जीवन का समग्र विकास कर लेता है। जीवनरूपी वृक्ष फल-फूल सकता है जबकि उसे निरन्तर श्रमरूपी जल से सींचा जाता रहे। श्रम मनुष्य को भाग्यवान्, कीर्तिमान् और पुण्यवान् बनाता है। किसी कवि ने कितना सुन्दर लिखा है–

उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः॥

अर्थात्– उद्यमी पुरुष ही जीवन के महान् लक्ष्य को प्राप्त होते हैं आलसी नहीं। जैसे सोते हुए सिंह के मुख में मृग स्वयं प्रवेश नहीं करते। अर्थात् अपनी क्षुधा शान्ति के लिए सिंह को भी प्रयत्न करना ही पड़ता है, वैसे ही पुरुष को भी अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जीवन में श्रम को अपनाना चाहिए।

श्रम ही जीवन है और आलस्य मृत्यु।

सफाई

सफाई का हमारे स्वास्थ्य के साथ बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। गन्दगी शरीर के अन्दर हो या बाहर, वहाँ रोगों को जन्म देती है। यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि गन्दगी का ही दूसरा नाम रोग है। शरीर के किसी भी भाग के रोगी होने का अर्थ है कि वहाँ गन्दगी का जमाव है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस गन्दगी का उन्मूलन ही रोगों का उन्मूलन है।

अतः यदि आप अपनी रोगों से सुरक्षा चाहते हैं तो सर्वप्रथम गन्दगी को दूर भगायें। यह नहीं भूलना चाहिए कि शरीर और वस्त्र की सफाई का जो महत्त्व है वही महत्त्व आपके घर, गली, मोहल्ले और नगर के परिवेश की सफाई का भी है। स्वयं में आप साफ–सुथरे रहकर भी गन्दे घर, गली और मोहल्ले के दुष्प्रभाव से नहीं बच सकते।

दुःख के साथ कहना पड़ता है कि हममें से अधिकांश लोगों को सामाजिक तौर पर ही नहीं व्यक्तिगत रूप से भी जीना ही नहीं आता। हम अपने को ऊपर से टीप–टाप करते हैं और अन्दर गन्दगी भरी होती है। हमारा दूसरों को दिखाने के लिए बाहर से कमीज साफ होना चाहिए। उसके नीचे की बनियान भले ही १५ दिन से साफ न की हो। इसी प्रकार देवियां क्रीम–पाऊडर से अपने चेहरे को चिकना–चुपड़ा बनाने में लगी रहती हैं और पेट के अन्दर मैल सड़ते रहते हैं। इन सब उपेक्षाओं का फल हमें रोग रूप में भुगतना पड़ता है। हम इन के ऐसे अभ्यस्त हो गये हैं कि हम रोगी बने रहेंगे किन्तु अपनी गन्दी आदतों को नहीं छोड़ना चाहते।

यही हाल हमारे सामाजिक जीवन का है। सार्वजनिक स्थलों को जहाँ भी देखिये रेलवेस्टेशनों, धर्मशालाओं, चिकित्सालयों, अनाथालयों, स्कूल–कॉलेजों के होस्टलों, विश्रामगृहों, भोजनालयों, वाचनालयों, बैंकों, तथा डाकघरों आदि के शौचालयों, मूत्रालयों तथा स्नानघरों में किसी सभ्य पुरुष की खड़े होने की भी इच्छा नहीं होती। वहाँ गन्दगी के अम्बार लगे रहते हैं। सभ्य कहलाने वाला सुशिक्षित मानव टट्टी जाने के बाद सीट को साफ करना अपना कर्त्तव्य नहीं समझता। जो काम पशु नहीं करते उसे यह मनुष्य करता है। मैले के ऊपर बैठकर शौच करने में न इसे रोगों का भय है और न ही लज्जा। इसने पशुओं को भी मात कर दिया है।

हमारी सरकार का स्वास्थ्य विभाग भी मानों इस विवेकशून्य जनता की सेवा करते–करते थक गया है। कहीं भी मलमूत्र की निकासी का कोई समुचित प्रबन्ध देखने में नहीं आता। स्वास्थ्य रक्षा के लिए जो स्थान बनाये गए थे, वे रोग प्रसार के कारण बने हुए हैं। इन स्थानों में मल–मूत्र सड़ते रहते हैं जिसके कारण यात्रियों तथा आसपास के मोहल्ले वाले लोगों का दम घुटता रहता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ भद्र पुरुष धार्मिक भावना से देव पूजा के निमित्त प्रातःकाल जब मन्दिर जाते हैं तो प्रकृति के प्राङ्गण में सुन्दर-सुन्दर खिले हुए फूलों और मुस्कराती हुई कलियों को तोड़कर ले जाते हैं। देव सुगन्धप्रिय होते हैं, इसी हेतु श्रद्धालु जन मन्दिर में फूल लेकर जाते हैं। किन्तु भक्तजन स्व-विवेक से काम नहीं लेते। एक परम्परागत परिपाटी में पुष्प भञ्जन का अपराध करते रहते हैं।

प्रकृति देवी ने देव आराधना के लिए ही सुन्दर सुगन्धित फूलों को महकाया है। अपनी डाली से पृथक् होकर फूल और कलियाँ कुछ ही समय के बाद सड़ने लगते हैं। जो फूल डाली पर रहकर कई दिनों वा सप्ताहों तक आपके उपवन की शोभा बढ़ाता और अपनी सुगन्धि से पर्यावरण की दुर्गन्ध को दूर करता उसे पुजारी अपने हाथों नोच डालता है। जिस देवाधिदेव ने प्रकृति के पुष्पों को नाना प्रकार के आकर्षक रङ्गों और विभिन्न प्रकार की मनमोहक गन्धों से युक्त उत्पन्न किया है। वह चुपचाप छिपी हुई आँखों से आपको देखता रहता है। पुष्प तोड़ना पाप है।

मनुष्य एक फूल भी नहीं खिला सकता। उसमें रंग नहीं डाल सकता। सुगन्ध नहीं भर सकता। वह केवल फूल के बीज की बुवाई कर सकता है। उसमें खाद और पानी लगा सकता है। इतने पर भी पुष्प उगाकर वह देव-पूजा करता है। पुष्प उत्पन्न करना पुण्य कर्म है और उसे तोड़ना देव-द्रोह।

आप अपने घरों में, देवालयों में, सार्वजनिक स्थलों में अधिक से अधिक पुष्प उगाईये। अपने घरों, ग्राम-नगर व देश को सुन्दर बनाईये। पर्यावरण को सुगन्धित कर स्वास्थ्य का लाभ उठाईये। पुष्प उत्पन्न करना भी राष्ट्र की सेवा है। राष्ट्र हमारे लिए पूजनीय है। हमें उसकी पूजा फूल तोड़ कर नहीं, फूल उगाकर करनी चाहिए।

हमारे व्यक्तिगत जीवन में सामाजिक और राष्ट्रीय भावनाओं का नितान्त अभाव हो गया है। हम कभी सोचते ही नहीं कि हमारा समाज और राष्ट्र सुन्दर बने और हमें अपने इस दोष का दण्ड राष्ट्रीय स्वास्थ्य के पतन तथा आयु के ह्रास के रूप में भोगना पड़ता है। हम रोगों से बार-बार प्रताड़ित होकर भी उनके कारणों पर विचार नहीं करना चाहते।

अगर किसी गांव या नगर के दस प्रतिशत लोग भी सामाजिक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सफाई की भावना से संयुक्त होकर सड़ी–गली नालियों, गन्दगी के ढेरों तथा सार्वजनिक उपयोग के अन्य स्थानों की सफाई का स्वयं सेवी बनकर अभियान चलायें तो यह एक बहुत पवित्र कर्म और राष्ट्र की बड़ी सेवा होगी।

गन्दगी के बड़े–बड़े ढेरों ने राष्ट्रीय जनमानस को भी बुरी तरह से दूषित कर दिया है। हिंसा, राग-द्वेष, छल–कपट, चिड़चिड़ापन, लड़ाई, झगड़े आदि राष्ट्रीय मानस के अस्वास्थ्य के प्रतीक हैं। स्वस्थ मानस में प्रेम, दया, सहानुभूति, सहिष्णुता, परोपकार, सज्जनता, सरलता आदि दैवी गुणों का निवास होता है। आज तो सर्वत्र काम, क्रोध, मोह, लोभ, अभिमान, स्वार्थपरता आदि भयङ्कर रोगों ने अपना ऐसा जाल फैलाया है कि मानव के शरीर और मानस को सर्वथा जीर्ण–शीर्ण और खोखला कर दिया है।

बाहरी गन्दगियों ने मन को मलिन किया है और मन की मलिनता ने अनेक शारीरिक रोगों को जन्म दिया है। इस प्रकार यह दोहरा बन्धन देखकर अच्छे–अच्छे चिकित्सक भी चकराते हैं। शरीर और मन एक–दूसरे पर आश्रित हैं। एक के स्वास्थ्य का प्रभाव दूसरे पर भी पड़ता है। एक यदि रुग्ण होता है तो दूसरा भी रुग्णता से नहीं बच सकता।

अतः पूर्ण स्वास्थ्य के लिए शरीर और मन, दोनों की सफाई आवश्यक है। उभयतः परिशुद्ध नागरिक ही राष्ट्रीय स्वास्थ्य का आनन्द लेते हैं। अपने शरीर और परिवेश की शुद्धि हम जल–मृत्तिका आदि से कर सकते हैं। समाज और नगर के पर्यावरण की शुद्धि श्रम और यज्ञ के द्वारा तथा मन की शुद्धि आत्मचिन्तन, सत्सङ्ग, स्वाध्याय और ईश्वरोपासना द्वारा कर सकते हैं।

---o---

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२. दृढ इच्छाशक्ति

इच्छाशक्ति अजेय है। इच्छाशक्ति के बल से व्यक्ति जीवन में सभी क्षेत्रों में सफलता प्राप्त कर सकता है। विद्या, बुद्धि, तेज, बल, आरोग्यता, धन, कीर्ति, राज्यभोग वा योग में सदा सर्वत्र दृढ इच्छाशक्ति व्यक्ति को विजय दिलाती है। इच्छा–शक्ति के द्वारा किए गए कार्यों को देखकर जन–सामान्य दंग रह जाता है।

संसार की जिस वस्तु को आप गुण और उपयोगिता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मानते हैं, उसे पाने के लिए आप अध्यवसाय आरम्भ कीजिए और उसके साथ दृढ इच्छाशक्ति का प्रयोग भी कीजिए। कोई भी कार्य जो आपने हाथ में लिया है, कभी भी आधे–अधूरे मन से न कीजिए। आपके पास जितनी भी शक्ति है शारीरिक व मानसिक उस सबको एक ही केन्द्र–बिन्दु पर केन्द्रित कर दीजिए। सफलता आपकी अनुचरी बन जाएगी। आपके इष्ट–आराध्य देव आपके सकल मनोरथों को पूर्ण कर देंगे। खुशियों से आप की झोली भर जाएगी। संसार आपकी प्रशंसा के गीत गायेगा। वर्तमान आपका इतिहास लिखेगा तथा भविष्य आपके इतिहास से शिक्षा ग्रहण करेगा और आपकी सफलताओं पर शीश झुकाकर श्रद्धा सुमन चढ़ाएगा।

दोहरे मन से या आधे–अधूरे मन से किया गया कार्य कभी भी पार नहीं उतरता। जिस कार्य के लिए आपने अपने पूर्ण मनोयोग से काम नहीं किया उसमें यदि असफलता होती है तो उसके लिए निराश होने की कौन सी बात है और इस असफलता का दोष आप अन्य किसको देना चाहते हैं। अन्यमनस्क होकर क्रिया करने से यह बेहतर होता कि आप क्रिया का आरम्भ ही न करते।

आधे–अधूरे मन से क्रिया आरम्भ करने पर उसमें असफलता तो होती ही है उसके अलावा मनुष्य के अन्तःकरण में एक भीषण अन्तर्द्वन्द्व चलता है कि इसे करूँ या न करूँ ? यह कार्य अच्छा है या बुरा ?

एक क्षण जिस कार्य, वस्तु अथवा विचार को या किसी व्यक्ति विशेष को जिसे मैं अच्छा कहता हूँ दूसरे ही क्षण उसी को मैं बुरा कहने लगता हूँ। उसकी अच्छाईयां मेरे लिए बुराईयों में परिवर्तित हो जाती हैं और दूसरे क्षण जिसको मैंने बुरा कहा अथवा बुरा देखा यदि भविष्य में हमेशा के लिए मैं उसे बुरा ही मान लूँ और उसे बुरा समझकर उससे किनारा कर लूँ तो भी मेरी नौका एक किनारे लग जावे, किन्तु व्यवहार में ऐसा होता नहीं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे क्षण में जो विचार वा वस्तु अथवा व्यक्ति मेरे लिए बुरा था तीसरे क्षण में मैं उसे फिर अच्छा कहने लगता हूँ। परन्तु अब भी मेरी वही डांवाडोल स्थिति है।

अपने अनुभव या प्रत्यक्षज्ञान के आधार पर तीसरे क्षण जिसे मैंने अच्छा देखा है मेरा अन्तरात्मा अगर उसे हमेशा के लिए अच्छा ही देखने लगे तब भी मेरा कल्याण हो जाए किन्तु तीसरे क्षण में अच्छी दिखने वाली वस्तु चौथे क्षण में मेरे लिए फिर कटु हो जाती है। इस प्रकार यह मेरे मानस की भ्रान्त स्थिति मेरे अन्तरात्मा में एक पीड़ा उत्पन्न करती है और इस अन्तर्द्वन्द्व में व्यक्ति की बहुत बड़ी शक्ति का अपव्यय होता है। ऐसी स्थिति में हम जीवन के किसी भी क्षेत्र में कुछ भी सही निर्णय नहीं ले पाते और मानव जीवन मझधार में ही लटकता रह जाता है। ऐसे ही पुरुषों के लिए गीता में कहा है–

संशयात्मा विनष्यति।

अर्थात्– जो लोग किसी सत्य का निश्चय कर उस पर दृढ नहीं हो पाते, जो कदम–कदम पर संशय में ही उलझे रहते हैं, वे विनष्ट हो जाते हैं।

प्रत्येक विषयव्यसनी के मन की यही स्थिति होती है। शराबी, कबाबी, वैश्यागामी, दुराचारी, चोर और जुआरी सभी अपनी अन्तरात्मा से लड़ते हुए देखने में आते हैं। किन्तु उनकी अन्तरात्मा में इतना बल नहीं होता कि वे अपनी दृढ इच्छाशक्ति का प्रयोग कर इन दुष्ट व्यसनों के भूत को भगा सकें।

यदि किसी ऐसे व्यक्ति को दैवयोग से किसी पुण्यात्मा महापुरुष का सङ्ग मिल जाता है तो उसकी अन्तरात्मा का बल उदय हो जाने से उसका सम्पूर्ण जीवन ही परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार की घटनाओं से इतिहास के पृष्ठ भरे हुए हैं। जननायक जयप्रकाश जी के सामने हज़ारों दस्युओं द्वारा आत्मसमर्पण की घटना इसका प्रबल उदाहरण है। इसी प्रकार महर्षि दयानन्द के संसर्ग से नास्तिक गुरुदत्त, शराबी मुंशीराम, पाखण्डी बस्तीराम, दुराचारी अमीचन्द आदि अनेक लोगों के जीवन में इतना बड़ा परिवर्तन हुआ कि गुरुदत्त सच्चा आस्तिक, मुंशीराम स्वामी श्रद्धानन्द, बस्तीराम और अमीचन्द वैदिक धर्म के सच्चे प्रचारक बन गए।

दृढ इच्छा–शक्ति के पीछे आत्मा का बल काम करता है। आत्मा यदि निर्बल है तो इच्छाशक्ति क्षेत्र में जाकर लड़खड़ाने लगती है। प्रलोभनों के जरा से झोंके से उसके पैर उखड़ जाते हैं और इच्छाशक्ति मैदान छोड़कर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग जाती है।

इच्छाशक्ति के निर्बल पड़ते ही शरीर रूपी साम्राज्य के सभी मोर्चे दुर्व्यसनों और दुराचार के आधीन हो जाते हैं। वे अब मनमानी लूट मचाते हैं। बुद्धि और सद्विचार की यहाँ कोई अपील नहीं होती। अविद्या का एकछत्र राज्य होता है। ये लुटेरे मानव के धन, बल, बुद्धि, यौवन, आरोग्य, धीरता, वीरता, श्री और कीर्ति सब का सब लूट ले जाते हैं। आत्मा के खज़ाने सब खाली हो जाते हैं।

तब अपनी स्थिति पर दुर्योधन की आवाज में अन्तरात्मा विलाप करता हुआ इस प्रकार कहता है–

जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः।
जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः॥

अर्थात्– मैं धर्म को भी जानता हूँ और अधर्म को भी जानता हूँ। किन्तु मैं इतना अशक्त हूँ कि अधर्म का परित्याग और धर्मानुचरण नहीं कर सकता। मानों कि दुष्प्रवृत्तियाँ मुझे बलपूर्वक अधर्म में लगाती हैं।

जिस प्रकार से बीज के अन्दर अङ्कुरण शक्ति सोई हुई रहती है, उसे जगाने के लिए भूमि, पानी, हवा और प्रकाश की आवश्यकता होती है उसी प्रकार हम में से प्रत्येक व्यक्ति का अन्तरात्मा सत्य–असत्य का जानने वाला है। उसके अन्दर दिव्य शक्तियां पड़ी हुई हैं। वे शक्तियां अविद्या के आवरण में दबी रहती हैं।

अगर किन्हीं उपयुक्त साधनों के द्वारा यह अविद्या का आवरण हटा दिया जाए तो आत्मा अपने रूप में देदीप्यमान हो उठता है। अब वह अपनी जिस इच्छाशक्ति को कार्य क्षेत्र में भेजता है वह विशिष्ट शक्तियों से युक्त होती है और दृढता उसमें स्वाभाविक रूप से उत्पन्न हो जाती है। आत्मबल से ही इच्छाशक्ति में दृढता आती है।

आत्मा के सान्निध्य में बुद्धि जो निर्णय लेती है उसमें स्पष्टता और निश्चलता होती है। दृढ इच्छाशक्ति की देख–रेख में मनोयोगपूर्वक जो कार्य किये जाते हैं उनमें विजय अवश्यम्भावी होती है।

अब प्रश्न यह है कि वे कौन से साधन हैं जिनसे अविद्या के आवरण का उच्छेदन होकर आत्मा अपने निज स्वरूप में स्थित हो जाता है? इसका उत्तर यह है कि एक और केवल एक ही साधन है जिससे अविद्या का अन्धकार सदा–सदा के लिए दूर होकर विद्या का प्रकाश हो जाता है। और वह साधन है–योग। योग दर्शनकार ने कहा है–

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वरप्रणिधानाद्वा।

अर्थात्– योगाङ्गों के अनुष्ठान से, ईश्वरार्पण भाव से अविद्या आदि क्लेशों का क्षय होकर ज्ञान का उदय होता है।

विद्या के प्रकाश में आत्मा धर्माधर्म को पृथक्–पृथक् देखता है और अपने प्राण, मन, इन्द्रियादि को धर्माचरण में नियुक्त करता है। अब अधर्म के प्रति उसमें कोई आकर्षण नहीं रह जाता। ऐसे आत्मज्ञानी जितेन्द्रिय पुरुष में अद्भुत संकल्प शक्ति तथा दृढ इच्छाशक्ति देखने को मिलती है।

मनुष्य का आत्मा यदि अपनी बुद्धि को विवेक के कार्य में लगाकर अविद्यादि क्लेशों से अपना पिण्ड छुड़ा ले तो अपनी इच्छानुसार जीवन के किसी भी क्षेत्र में सफल हो सकता है। परन्तु क्लेशों के रहते हुए इसके सभी कार्यक्रमों की बागडोर उनके हाथ में ही रहती है। जिस प्रकार नदी के अत्यन्त वेग में बहते हुए जन्तु के लिए बाहर निकलना कठिन होता है ठीक वही दशा क्लेशों के प्रवाह में बहते हुए आत्मा की भी होती है।

जब आत्मा अपने स्वरूप को भूलकर मन और इन्द्रियों की वृत्तियों में रंग जाता है तब मन और इन्द्रियों के विक्षिप्त रूप का उस पर भी प्रभाव पड़ता है और बुद्धि पर भी इन वृत्तियों से चित्रित आत्मा का प्रभाव होने के कारण बुद्धि के निर्णय एक ही विषय में अनेक और विरुद्ध हुआ करते हैं। उस मनुष्य से बढ़कर असफल मनुष्य और कौन होगा जो अपनी जीवन–यात्रा के लिए कोई मार्ग निश्चित न कर सके।

मानव का जीवन एक बीहड़ जंगल के समान है जिसमें घना अन्धकार छाया हुआ है। कदम–कदम पर समस्याएँ हैं और इन समस्याओं को सुलझा न पाना ही एक अन्धकार है। ईश्वर की कृपा से हमारे हाथ में बुद्धि का सुन्दर दीपक आ गया है। उसके ऊपर सत्त्वगुण का पारदर्शी चमकता हुआ शीशा लगा हुआ है और उसके अन्दर रजोगुण की दहकती हुई ज्वाला जल रही है। यह ज्वाला और शीशा दोनों मिलकर हमें मार्ग दिखला रहे हैं। इस प्रकाश में हमें अपनी समस्याएँ और उनके सुलझाने के उपाय दोनों ही स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं।

हमें सावधान रहना होगा कि कहीं रजोगुण की ज्योति में से निकलकर तमोगुण की स्याही शीशे को भी मैला न कर दे। हमें ऐसा प्रयत्न करना होगा कि इस ज्योति में स्याही उत्पन्न ही न होने पावे। उसके लिए हमें दो उपाय करने होंगे। पहला यह कि मन के विक्षेप की आँधी को शान्त रखा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाए। जिसके लिए सत्कर्मों का अभ्यास, सत्सङ्ग और स्वाध्याय आवश्यक हैं तथा दूसरा उपाय है आत्मा की इच्छाशक्ति बलवती हो।

यह कौन मानने को तैयार होगा कि स्वामी के असावधान रहते सेवक सजग रहें ? हमारी बुद्धि का स्वामी चेतन आत्मा यद्यपि इसकी पीठ पीछे सदा ही विद्यमान रहता है परन्तु भेद केवल इतना ही होता है कि कभी जाग रहा होता है और कभी सो जाता है। जब वह जाग रहा होता है तो इसकी इच्छाशक्ति बुद्धि की ज्योति को जीवनदान देती रहती है और वह ज्योति तमोगुण के आक्रमण से बची रहती है। परन्तु इसकी पलक के झपकते ही और इच्छाशक्ति के मन्द पड़ते ही ज्वाला और शीशा दोनों ही तमोगुण से भर जाते हैं। दीपक हाथ में होते हुए भी हम उसी विकट मार्ग में अन्धकार से घिर जाते हैं।

अतः सफलता के अभिलाषी यात्री के लिए यह आवश्यक है कि वह सावधान रहता हुआ अपनी इच्छाशक्ति के प्रभाव से मन के विक्षेप तथा अविवेक को दूर कर अपनी बुद्धि की ज्योति को स्थिर और उज्ज्वल बनाए रखे।

आत्मा की इस इच्छा को और भी सबल बनाने के लिए हमें श्रद्धा देवी की शरण लेनी पड़ेगी। जिस मनुष्य की अपने लक्ष्य में उत्कट श्रद्धा नहीं वह उस लक्ष्य तक कभी पहुँच ही नहीं सकता। अन्तःकरण की सभी शक्तियाँ श्रद्धा देवी के सामने हाथ जोड़कर खड़ी रहती हैं। श्रद्धालु मनुष्य भयङ्कर से भयङ्कर कष्टों से पीड़ित होने पर भी एक पग भी पीछे नहीं हटाता और अपने लक्ष्य की ओर दौड़ता हुआ चला जाता है। श्रद्धा देवी, कर्म क्षेत्र में खड़े हुए मनुष्य की, माता की भांति रक्षा करती है। अतः श्रद्धा देवी की शरण लेना अपनी इच्छा को सबल बनाने के अभिलाषी मनुष्य का आवश्यक कर्त्तव्य है।

प्रिय पाठक गण! आत्मा की इच्छाशक्ति महान् है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इस जीवन के पुरुषार्थ-चतुष्टय का साधक जो आरोग्य है, उसे पाने के लिए अपनी दृढ इच्छाशक्ति का प्रयोग कीजिए। ध्यानयोग से आत्मबल को जागृत कीजिए और आत्मबल से इच्छाशक्ति को बलवती बनाईये। निश्चय ही तुम्हारे सभी दुःखों का क्षय होकर आरोग्यता का उदय होगा।

---o---

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३. निराश क्यों ?

जो मनुष्य पर्वत के समीप नीचे की भूमि पर खड़ा है और उसके मन में अभिलाषा है कि मैं भी पर्वत की उस ऊँची चोटी पर चढ़कर जिस पर दूसरे मनुष्य चढ़े हुए हैं चारों ओर के सुहावने दृश्य देखूँ और ठण्डे तथा सुगन्धित वायु का आनन्द लूँ। किन्तु तत्काल ही उसके मन में यह विचार आता है कि यह चोटी बहुत ऊँची है, इतनी चढ़ाई मैं कैसे कर सकूँगा ? परन्तु दृढ इच्छाशक्ति रखने वाला मनुष्य अपने मन को स्थिर बनाकर अपने कार्यक्रम का प्रारूप तैयार करता है और बलपूर्वक कहता है कि पर्वत पर चढ़ना कोई असम्भव बात नहीं है, क्योंकि दूसरे मनुष्य जो चोटी पर खड़े हैं, वे स्वयं भी तो वहाँ चढ़ कर ही पहुँचे हैं।

इच्छाशक्ति से हीन व्यक्ति जिसके मन में कायरतापूर्ण भावनाओं ने घर बना लिया है, उसका चोटी पर चढ़ना असम्भव ही हो जाएगा।

ठीक इसी प्रकार जो व्यक्ति अपने दोषों का छूटना असम्भव समझकर, हार मान कर बैठ जाएगा, उसके लिए जीवन में एक पग भी उठाना कठिन हो जाएगा।

मनुष्य को अपनी शक्तियों पर विश्वास करना चाहिए। बड़े से बड़े लक्ष्य के कार्यक्रम का आरम्भिक रूप बहुत छोटा ही होता है। अतः थोड़ी सी शक्ति से मैं इतना बड़ा लक्ष्य कैसे प्राप्त करूँगा ऐसी धारणा से उसे घबराना नहीं चाहिए। वर्णमाला की चार पृष्ठों की पुस्तक भी कठिनाई से पढ़ने वाला छात्र, शास्त्री परीक्षा की पुस्तकों का ढेर देखकर घबरा सकता है। परन्तु क्रम से श्रेणीवार आगे बढ़ता हुआ, शास्त्री कक्षा में पहुँचकर वह उन पुस्तकों को पढ़ लेना आसान समझेगा। इसी प्रकार किसी भी बड़े लक्ष्य की ओर हमें क्रमवार चलना होगा और क्रम कठिन से कठिन कार्य को भी सरल बना दिया करता है।

सफलता के अभिलाषी मानव को अपने मन में ऐसी धारणा को प्रबल कर लेना चाहिए कि मैं क्रम से एक के बाद एक डण्डे पर चढ़ता हुआ अन्तिम डण्डे तक अवश्य ही पहुँच जाऊँगा।

हे मानव! तू सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् ईश्वर का पुत्र है। तू अपने को हारा हुआ क्यों महसूस करता है। तुझमें संसार की अनन्त शक्तियाँ प्रवाहित हो रही हैं। तुझ में परमेश्वर ने ज्ञानरूपी सूर्य का आलोक किया है। स्वयं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिलोकीनाथ तेरे हृदय मन्दिर में विराजमान हो रहे हैं। तू क्या नहीं कर सकता।

तू आत्मा है। शक्तियों का भण्डार है। संसार में तेरे लिए असाध्य कार्य कौन सा है ? उठ तेरे लिए परमपिता का आदेश है–

स्वयं वाजिँस्तन्वं कल्पयस्व स्वयं यजस्व स्वयं जुषस्व।
महिमा ते अन्येन न सन्नशे॥ (यजु० २३।१५)

हे वीर पुरुष! उठ। अपने शरीर को दृढ बना। कर्म कर और कर्म के मधुर फलों का आस्वाद ले। तेरी महिमा अपार है। उसे दूसरा कोई तिरस्कृत नहीं कर सकता।

तू अपनी शक्तियों को भूलकर संसार के विषय जाल में फंस गया है। तू दिव्य अपवर्ग का अधिकारी किस कारागार में बन्द पड़ा है। हे राजपुत्र! कौन है ऐसा ? किसकी सामर्थ्य है कि जो तुझे बन्दी बना सके ? तू स्वयं अपने स्वरूप को भूलकर कहाँ कीचड़ में पड़ा है। अपने बालकपन में तूने उठ–उठकर, गिर–गिरकर चलना सीखा है। नाना प्रकार के विषयों का तूने ज्ञानसञ्चय किया है। तेरी प्रयत्न शक्ति में विशिष्ट बल है। अपनी कर्मण्यता को पहचान और गर्वपूर्वक कह–

कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः। (अथर्व० ७।५२।८)

अर्थात्– मेरे कर्म का फल मेरे पास है। कोई शक्ति उसे छीन नहीं सकती। अपनी कर्मशक्ति से मैं जो चाहूँ प्राप्त कर सकता हूँ।

हे मानव! क्या तूझे स्मरण नहीं, जब तू स्वस्थ था, तो स्वास्थ्य लुटाने में लगा था। अब जब कि स्वास्थ्य चला गया, तो उसके लिए तू वैद्यों और डाक्टरों के इर्द–गिर्द चक्कर लगा रहा है। डाक्टरों से तू औषध तो खरीद सकता है किन्तु स्वास्थ्य नहीं। अब तुझे स्वास्थ्य की कीमत का पता चला है। परन्तु इस सत्य को तू याद रख कि स्वास्थ्य तब तक वापिस नहीं लौट सकता ज़ब तक तू अपने दुर्व्यसनों को छोड़कर अपनी भूलों को नहीं सुधारता और अपने जीवन को शुद्ध प्राकृतिक नियमानुसार नहीं ढालता।

अविवेकासंयमयो योगो रोगाणां कारणम्।

अर्थात्– अविवेक और असंयम ही रोग के स्थायित्व में कारण हैं। योग्य पुरुषों के सङ्ग में विवेक प्राप्त करके आत्मसंयम का अनुष्ठान कर। रोग तेरी जिन भूलों और दुर्व्यसनों की देन हैं; उनके बने रहते स्वास्थ्य कैसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौट सकता है ? प्रकाश और अन्धकार साथ–साथ नहीं रहते।

हे मानव! डरने की क्या बात है ? व्यर्थ की चिन्ता मत कर। चिन्ता को छोड़ और जहाँ से रास्ता भटके थे वहीं वापिस चलो। न तो प्रकृति की सामर्थ्य है और न ही परमेश्वर की जो हमें हमारे कर्म के विपरीत फल दे सकें। नहीं, नहीं, वे तो हमारे माता–पिता के समान रक्षक हैं और हमारी भूलों पर हमें बार–बार प्रेरणा करते रहते हैं। किन्तु जब हम उनकी बराबर अनसुनी करते जाते हैं, तो हमें हमारे पापकर्म का फल ही ले डूबता है। किन्तु वह दयालु हमारा अनन्य सखा हमें फिर भी उद्बोधन करता है–

मा बिभेर्न मरिष्यसि जरदष्टिं कृणोमि त्वा।
निरवोचमहं यक्ष्ममङ्गेभ्यो अङ्गज्वरं तव॥
(अथर्व० ५।३०।८)

हे मित्र! डर नहीं! तू मरेगा नहीं। मैं तूझे स्वस्थ बनाता हूँ। तेरे शरीर के अङ्ग–प्रत्यङ्ग से ज्वरादि के द्वारा तेरा शोधन करता हूँ। तू मेरी आज्ञाओं का पालन कर।

जो स्वस्थ हैं वे अकाल मृत्यु का ग्रास नहीं होते। स्वस्थ व्यक्ति न मृत्यु को पाता है और न मृत्यु जन्य अन्धकार में प्रवेश करता है।

मृत्योः स मृत्युमाप्नोति यो नानेव पश्यति।

अर्थात्– जो मेरे उपदेशों को अनसुना करके मनमाना व्यवहार करते हैं, वे ही मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

भोगापवर्गार्थं दृश्यम्।

हे मानव! यह शरीर तुझे भोग और अपवर्ग के लिए दिया गया था किन्तु रोगी होकर अब तू भोग के भी योग्य नहीं रहा अपवर्ग की तो बात ही क्या है। तूने अपने मिथ्या आहार–विहार से अपने शरीर को नरक का कुण्ड बना दिया है। तुझे इस हीन दशा तक पहुँचाने में तेरा अपना अज्ञान ही कारण है।

उठ! आँखें खोल! ज्ञान सूर्य से आलोक प्राप्त कर स्वकर्त्तव्य कर्मों का अनुष्ठान कर। अपने स्वरूप को निहार। मन और इन्द्रियों को विषयों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का दास न बना। भोगासक्त होकर रोगों को निमन्त्रण मत दे। रोगों के कारण और निदान विषय पर चरकशास्त्र में कैसा सुन्दर लिखा है–

रोगाः कुतः, संशमनं किमेषाम् ? हर्षस्य शोकस्य च किं निमित्तम्।
शरीरसत्त्वप्रभवा विकाराः कथं न शान्ताः पुनरापतेयुः॥
प्रज्ञापराधो विषमास्तथाऽर्थाः, हेतुस्तृतीयः परिणामकालः।
सर्वामयानां त्रिविधा च शान्तिः ज्ञानार्थकालाः समयोगयुक्ताः॥
धर्म्याः क्रिया हर्षनिमित्तमुक्तास्ततोऽन्यथा शोकवशं नयन्ति।
शरीरसत्त्वप्रभवास्तु दोषास्तयोरवृत्त्या न भवन्ति भूयः॥
(चर० शरी० २।४०)

अर्थात्– रोग कहाँ से उत्पन्न होते हैं ? इनके शमन का क्या हेतु है ? हर्ष और शोक का क्या कारण है ? शरीर और मन के रोग सदा के लिए शान्त न होकर क्यों पुनः–पुनः आते रहते हैं ? इसके उत्तर में महर्षि जी बताते हैं कि प्रज्ञा का अपराध, विषय का विषम प्रयोग तथा परिणामकाल, रोगोत्पत्ति के हेतु हैं और ज्ञान अर्थ तथा काल इन तीनों का समयोग रोगों की शान्ति के हेतु हैं। धर्मकृत्य, हर्ष का और अधर्मकृत्य शोक का निमित्त है। शरीर और मन का अस्तित्व ही सदोष है। इनकी निवृत्ति होने पर दोषों का पुनरागमन नहीं होता।

सभी ऋषि–मुनि अपने ज्ञान से तेरे रास्ते को आलोकित कर रहे हैं। प्रकृति माता का वरदहस्त तेरे सिर पर है। अपनी भूलों को सुधार, प्राकृतिक जीवन जीना आरम्भ कर। तेरी खोई हुई शक्ति का पुनः उदय होगा। अपना सर्वस्व प्रकृति को समर्पित कर दे। वह तेरा स्वास्थ्य रूपी धन तुझे सौंपकर आनन्द से भरपूर कर देगी। तेरे चेहरे से मुस्कान की किरणें फूट निकलेंगी। जिनसे सारा संसार जगमगाएगा। तेरी मुस्कान में जादू भरा है। जब तुम मुस्कराते हो तो तुम्हारी सारी आपदाएं हवा में उड़ जाती हैं। तूने अपनी हंसी को भुलाकर यह गम्भीर रूप क्यों अपनाया है। उठ, खिलखिलाकर हँस। ललकारकर कह– मैं अमृतपुत्र हूँ, मैंने निज आत्मरूप को देख लिया है। अपनी शक्तियों को पहचान लिया है। विषय और व्यसनों के मज़बूत पाश अब मुझे नहीं बांध सकते। मेरी विजय अवश्यम्भावी है।

---o---

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४.स्वास्थ्य-विज्ञान {Science of Health}

वनस्पति जगत् में हम देखते हैं कि किसी भी पौधे के पुष्ट होने का रहस्य जिन प्राकृतिक कारणों पर निर्भर करता है, वे हैं- पुष्ट बीज, खाद, पर्याप्त जल, हवा, आकाश एवं प्रकाश। इन हेतुओं में से किसी भी हेतु के अभाव में पौधा पुष्ट नहीं हो सकता। ठीक ये ही सब चीजें हमारे सुन्दर स्वास्थ्य के लिए भी आवश्यक हैं।

हमारे शरीर की उत्पत्ति हमारे माता-पिता के रजोवीर्य से हुई है। रोगी व निर्बल माता-पिता के सन्तान स्वस्थ नहीं हो सकते। अतः स्वस्थ सन्तान की कामना के अभिलाषी माता-पिता को रुग्णावस्था में अथवा शरीर की निर्बल अवस्था में गार्हपत्य सम्बन्ध नहीं करने चाहियें। पुष्ट रजोवीर्य वाले स्त्री-पुरुष ही सन्तानोत्पत्ति के अधिकारी हैं।

पौधे के विकास और पोषण के लिए जिस प्रकार से खाद आवश्यक है उसी प्रकार बालक के शरीर पोषण तथा विकास के लिए सन्तुलित आहार आवश्यक है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पौष्टिक आहार के सात आवश्यक संघटक हैं-

(१) कार्बोहाइड्रेट्स, (२) चिकनाई, (३) प्रोटीन, (४) प्राकृतिक लवण(खाद्योज), (५) विटामिन, (६) पानी तथा (७) आक्सीजन।

किसी व्यक्ति के सन्तुलित आहार में इन सब अवयवों का, उसके शरीर की आवश्यकता के अनुसार होना उचित है। प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताएँ उसकी शारीरिक शक्ति और कार्यानुसार भिन्न-भिन्न होती हैं। उदाहरण के तौर पर-चिकनाई और प्रोटीन की जो मात्रा एक स्वस्थ व्यक्ति पचा सकता है, वह कोई बालक, अथवा निर्बल व्यक्ति नहीं पचा सकता तथा कठिन परिश्रम करने वाले श्रमिक के भोजन में कार्बोहाड्रेट्स और प्रोटीन की मात्रा, मस्तिष्क का कार्य करने वाले किसी व्यक्ति के भोजन की अपेक्षा अधिक आवश्यक है।

सन्तुलित भोजन का प्रत्येक घटक शरीर में एक विशेष कार्य का सम्पादन करता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उस पर हम यहाँ संक्षेपतः विचार करते हैं-

(१) **कार्बोहाइड्रेट्स**- बहु हाइड्रोक्सी एल्डिहाइड्स या कीटोन अथवा वे यौगिक पदार्थ जो जल अपघटित होकर एल्डिहाइड या कीटोन में परिवर्तित हो जाते हैं-कार्बोहाइड्रेट्स कहलाते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं एक शर्करा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप में तथा दूसरे शर्करा से भिन्न रूप में।

पहले प्रकार के कार्बोहाइड्रेट्स हैं– ग्लुकोज, फ्रक्टोज, सुक्रोज, माल्टोज तथा लैक्टोज।

शर्करा भिन्न कार्बोहाइड्रेट्स जैसे– स्टार्च, सेलुलोज तथा ग्लाइकोजन।

सभी प्रकार के कार्बोहाइड्रेट्स शरीर को ऊर्जा प्रदान करते हैं और हमारे शरीर के तापक्रम को स्थिर रखने में सहयोग देते हैं। शरीर में जाकर ये सर्वप्रथम जल अपघटित होते हैं और ग्लुकोज में बदल जाते हैं। यह ग्लुकोज शरीर के रक्त में मिल जाता है। फिर आक्सीजन के द्वारा आक्सीकृत होकर कार्बन आक्साईड तथा पानी में परिवर्तित हो जाता है। आक्सीकरण की इस प्रक्रिया में ६७७ कैलोरी उष्मा मुक्त होती है, जो हमारे शरीर को गर्मी प्रदान करती है।

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \rightarrow 6Co_2 + 2H_2O + 677 \text{ Calories.}$$

हमारे शरीर को आवश्यक ऊर्जा का ५० प्रतिशत से अधिक भाग कार्बोहाइड्रेट्स के द्वारा ही प्राप्त होता है। शरीर की आवश्यकता से अधिक कार्बोहाइड्रेट्स का सेवन करने पर वह ग्लाइकोजन में बदल जाता है जो यकृत में संगृहित होता है। आवश्यकता पड़ने पर यही ग्लाइकोजन शरीर की मांग को पूरा करता है।

(२) चिकनाई या फैट्स– घी, तेल और वसा ऊर्जा के बहुत बड़े स्रोत हैं। कार्बोहाड्रेट्स की अपेक्षा इनमें ऊर्जा का कई गुणा भण्डार होता है। पाचन प्रणाली में जाकर चिकनाई पहले जल–अपघटित होती है जिससे ग्लिसरोल और वसीय अम्ल बनते हैं। फिर ये दोनों जटिल अभिक्रियाओं द्वारा आक्सीकृत होकर ऊर्जा प्रदान करते हैं। भोजन में चिकनाई का अभाव होने पर विभिन्न प्रकार के त्वचा रोग उत्पन्न हो जाते हैं तथा दूसरी ओर आवश्यकता से अधिक चिकनाई शरीर में अनावश्यक चर्बी को उत्पन्न करती है, जो त्वचा के नीचे इकट्ठी होकर शरीर को बेडौल तथा भद्दा बना देती है।

अधिकतर तेल ग्लिसरोल और मोनो–कार्बोग्जिलिक अम्लों के एस्टर होते हैं। प्रकृति में पाये जाने वाले तेल ऊँचे अणुभार के मोनो–कार्बोग्जिलिक अम्लों के ट्राइएस्टर होते हैं। प्रायः तेल तथा वसाएँ मिश्रित ग्लिसराइड होते हैं।

सभी चिकनाईयाँ, दो विभागों में रखीं जा सकती हैं–

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) संतृप्त (**Saturated**)– पशुओं से प्राप्त होने वाली चर्बी अथवा घी इस वर्ग में आते हैं।

संतृप्त चिकनाई रक्त में अधिक मात्रा में कोलस्ट्राल उत्पन्न करती है। जो शरीर में कई प्रकार के रोगों का कारण बनता है। किन्तु मछली का तेल इस दोष से मुक्त होता है। यही कारण है कि मछली का तेल औषध्यर्थ मालिश के रूप में प्रयोग किया जाता है।

(२) असंतृप्त (**Unsaturated**)– वनस्पति जगत् से प्राप्त होने वाले तेल इस वर्ग में आते हैं। ये रक्त में बहुत कम मात्रा में कोलेस्ट्राल उत्पन्न करते हैं। इसी सच्चाई को जानते हुए चरक शास्त्र में ऋषिवर लिखते हैं–

घृतेन शतगुणं तैलम्–मर्दनेन न तु भक्षणेन।

अर्थात् – घी से तेल में सौ–गुणा अधिक गुण है। किन्तु यह भी ध्यान रहे कि वह मर्दन करने में ही गुणकारी है–भक्षण में नहीं। गोले का तेल वानस्पतिक है किन्तु संतृप्त है तथा यह बालों के लिए अतीव उपयोगी है।

खाने योग्य तेल या वसा का द्रवणाङ्क शरीर के सामान्य ताप ३७°C. से कम होना चाहिए ताकि वह आमाशय में जाकर सरलता से पिघल सके और सुगमता से पचाई जा सके। प्राकृतिक वसा (मक्खन) में असंतृप्त ग्लिसराइड्स का भी एक निश्चित अनुपात होता है जिसके कारण उसका द्रवणाङ्क ३७°C. से कम होता है। घी अथवा तेल को अधिक गर्म करने पर उसकी अणु रचना बिगड़ जाती है। अतः उनके गुण विकृत हो जाते हैं। इसका कारण यह है कि गर्म करने पर ग्लिसरोल भाग से जलीय अंश पृथक् हो जाता है तथा एक्रालिन नामक गैस निकलती है। अधिक गर्म किए हुए घी अथवा तेल सरलता से नहीं पचते।

ऊपर की पंक्तियों में बतलाया गया कि संतृप्त वसा व तेल कोलेस्ट्राल उत्पन्न करते हैं। प्रश्न उत्पन्न होता है कि यह कोलेस्ट्राल क्या है ? कोलेस्ट्राल वैज्ञानिकों के मतानुसार मोम जैसा एक जटिल पदार्थ होता है। यह शरीर के कोषों की भित्तियों का निर्माण करने वाला एक आवश्यक तत्त्व है। यह हमारे शरीर में विटामिन डी, नाड़ी–तन्त्र, बाइल अम्ल तथा हार्मोन्स उत्पन्न करने में भी सहायता करता है। यह खाद्य पदार्थों में उपस्थित होता है। किन्तु हमारे रक्त में पाये जाने वाले कोलेस्ट्राल की केवल १५ प्रतिशत मात्रा हम भोजन द्वारा प्राप्त करते हैं। शेष ८५ प्रतिशत मात्रा का निर्माण हमारा यकृत ही करता है। रक्त में कोलेस्ट्राल की मात्रा अधिक बढ़ जाने से हार्ट

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फेल होने की सम्भावनाएँ भी बढ़ जाती हैं और यह रक्त धमनियों में जम जाता है, जो रक्त-संचार में बाधक होकर नाड़ी-मण्डल के अन्यान्य रोग उत्पन्न करता है।

हमें अपने शरीर में कोलेस्ट्राल की मात्रा कम करने के लिए अपने भोजन में ली जाने वाली चिकनाई की मात्रा कम कर देनी चाहिए। क्योंकि भोजन में घी अथवा चर्बी का अधिक प्रयोग यकृत को कोलेस्ट्राल उत्पन्न करने के लिए विवश कर देता है।

(३) प्रोटीन – अमोनिया के यौगिकों का नाम ही प्रोटीन है। इन्हें अमीन भी कहते हैं। ये कई प्रकार के होते हैं। सभी प्रोटीन हमारे शरीर के कोषों का निर्माण करते हैं। शरीर में पायी जाने वाली विभिन्न प्रकार की कोशिकाएँ तथा सभी प्रकार के तन्तु प्रोटीन्स के द्वारा ही बने होते हैं। पुरानी कोशिकाओं के नष्ट हो जाने पर नई कोशिकाओं का निर्माण भी इन्हीं प्रोटीन्स के द्वारा ही होता है। ये प्रोटीन्स शरीर को ऊर्जा भी प्रदान करते हैं।

हमारे शरीर में जाकर प्रोटीन्स पहले छोटे अणुओं में विभक्त होते हैं। इस प्रक्रिया को रसायन की भाषा में अपघटन कहते हैं। अपघटन की यह प्रक्रिया विभिन्न प्रकार के कण्वों द्वारा सम्पन्न होती है। अपघटित प्रोटीन्स विशेष प्रकार के कण्वों द्वारा एमीनो अम्ल में परिवर्तित होकर रक्त में मिश्रित हो जाते हैं और शरीर के विभिन्न भागों में पहुँच जाते हैं। वहाँ जाकर तन्तुओं तथा कोशिकाओं का निर्माण करते हैं। जिन प्रोटीन्स की शरीर को आवश्यकता नहीं होती वे यकृत के कुछ अन्य कण्वों द्वारा अमोनिया के रूप में बदल जाते हैं जो कि यूरिया अथवा अन्य किसी अमोनियम लवण के रूप में गुर्दे के द्वारा रक्त धारा से पृथक् होकर मूत्र के साथ शरीर से बाहर निकाल दिए जाते हैं।

इन प्रोटीन्स की पाचन-प्रक्रिया में पेप्सिन, ट्रिप्सिन और इरेप्सिन नामक कण्व भाग लेते हैं। इन कण्वों का निर्माण हमारे शरीर की तिल्ली नामक ग्रन्थी के अन्दर होता है। पक्वाशय में पहुँचकर ये कण्व रसायन क्रिया में भाग लेते हैं।

आधुनिक वैज्ञानिक खोज के अनुसार हमारे शरीर में २२ प्रकार के अमीनों अम्ल की आवश्यकता होती है। ये सभी विभिन्न प्रकार की दालों से प्राप्त किए जा सकते हैं। इन अमीनों में से १४ प्रकार के अमीनो अम्ल हमारे शरीर के कोषों के अन्दर ही रासायनिक क्रियाओं के फलस्वरूप हमें प्राप्त हो जाते हैं। शेष अमीनो अम्ल हमें खाद्य रूप में लेने की आवश्यकता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती है। एक स्वस्थ मनुष्य को उसके शरीर के भार के अनुसार ०.८ ग्राम प्रोटीन प्रति किलोग्राम के हिसाब से आवश्यकता होती है। उदाहरण के रूप में ५० किलोग्राम भार वाले व्यक्ति के लिए ४० ग्राम प्रोटीन की दैनिक आवश्यकता होती है।

(४) प्राकृतिक लवण (खाद्योज)– हमारे भोजन का चतुर्थ आवश्यक तत्त्व है–प्राकृतिक लवण। ये लवण विभिन्न प्रकार के होते हैं। रासायनिक भाषा में अकार्बनिक अम्लों की विभिन्न प्रकार की धातुओं के साथ अभिक्रियाओं के फलस्वरूप जो यौगिक प्राप्त होते हैं उन्हें प्राकृतिक लवण कहते हैं। जैसे– हाइड्रोक्लोरिक अम्ल की सोडियम के साथ अभिक्रिया होने पर सोडियम क्लोराइड नामक प्राकृतिक लवण प्राप्त होता है और हाइड्रोजन गैस विस्थापित हो जाती है।

$$2Hcl + Na_2 \rightarrow Nacl + H_2$$

प्राकृतिक लवण हमारे शरीर में उन तत्त्वों की पूर्ति करते हैं जो कार्बोहाइड्रेट्स, चिकनाई और प्रोटीन में उपलब्ध नहीं होते। ये लवण हमारे शरीर की हड्डियों तथा रक्त–कोशिकाओं का निर्माण करते हैं तथा रक्त संचार में भी सहायता करते हैं। सभी लवणों को दो विभागों में विभक्त किया जा सकता है–

(१) **सूक्ष्म लवण** (Micro minerals) –जैसे सोडियम, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्निशियम, फोस्फोरस, गन्धक और क्लोराईड आदि।

(२) **अतिसूक्ष्म लवण (Trace minerals)**–जैसे लोहा, ताँबा, जस्ता, कोबाल्ट, फ्लोराइड, आयोडीन, मैगनीज, सोलिनम, सोलिबिडिनम आदि–आदि।

ये सभी लवण विभिन्न प्रकार की हरी–सब्जियों, फलों तथा दूध एवं दही आदि में पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं।

सूक्ष्म लवणों की अपेक्षा अतिसूक्ष्म लवणों की स्वल्प मात्रा ही हमारे शरीर को पर्याप्त होती है। कभी–कभी शरीर के रुग्ण होने पर औषध रूप में इन लवणों की अतिरिक्त मात्रा की आवश्यकता होती है। किन्तु आवश्यकता से अधिक मात्रा का सेवन हमारे शरीर में यकृत, तिल्ली और हृदय पर घातक प्रभाव डालता है। जैसे सोडियम का अधिक मात्रा में प्रयोग उच्च रक्तचाप उत्पन्न करता है। अम्लता और अल्सर को जन्म देता है। कैन्सर को पैदा करता है।

पाठकों को यह जानकारी आवश्यक है कि नमक और सोडियम

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक ही वस्तु के दो नाम नहीं हैं अपितु ये दोनों भिन्न-भिन्न पदार्थ हैं। क्लोरीन के साथ सोडियम के यौगिक को नमक कहते हैं। इसमें लगभग ४० प्रतिशत भाग सोडियम होता है। हमारे शरीर को जितने सोडियम की आवश्यकता है उसके १/३ भाग की पूर्ति हम नमक द्वारा पूरा करते हैं तथा ५/६ भाग सोडियम हमें प्राकृतिक शाक-सब्जियों से ही प्राप्त हो जाता है। शेष हम नमकीन पदार्थों से ग्रहण करते हैं। अपने दैनिक भोजन में नमक की मात्रा घटाकर शरीर में सोडियम की मात्रा को नियन्त्रित कर सकते हैं।

प्रकृति के विस्तृत प्राङ्गण में निर्जीव लवण (Inorganic salts) प्रचुर मात्रा में बिखरे हुए हैं। किन्तु उनका सीधे उसी रूप में प्रयोग हमारे शरीर के लिए हानिकारक है। लोहा, ताँबा आदि सभी लवण निर्जीव हैं। अतः उनका सीधा प्रयोग प्राणघातक है। किन्तु ऊपर कहा गया है कि ये लवण हमारे शरीर के लिए उपयोगी हैं। यदि उपयोगी हैं तो किस प्रकार ? उसका उत्तर यह है कि वनस्पति जगत् उन्हें हमारे शरीर के लिए उपयोगी बना देता है। वनस्पति जगत् के पेड़-पौंधे, शाक-सब्जियाँ, फल-फूल आदि निर्जीव लवणों (Inorganic-salts) को सजीव लवणों (Organic Salts) में बदल देते हैं। वनस्पति का यह अद्भुत गुण प्राणी मात्र के जीवन की रक्षा करता है। अत एव आरोग्याभिलाषी एवं स्वास्थ्य प्रेमी जनों का कर्त्तव्य है कि वे प्रतिदिन फलों तथा शाक-सब्जियों का अपक्व सलाद के रूप में यथेष्ट मात्रा में सेवन करें जिससे शरीर आवश्यकतानुसार सभी लवणों को ग्रहण कर सके।

(५) विटामिन– हमारे सन्तुलित आहार में विटामिन्स का विशेष महत्त्व है। विटामिन्स कार्बन के यौगिक हैं, जो कि भोजन के पाचन में, रक्त-परिभ्रमण में, शरीर की वृद्धि तथा विकास में, रक्त-कोपों के निर्माण में, तथा नाड़ी-संस्थान के सञ्चालन में सहायता करते हैं। शरीर के लिए आवश्यक कुछ विटामिन हमारे शरीर की ग्रन्थियों में ही निर्मित होते हैं। किन्तु शरीर की मांग अन्दर के विटामिन्स से ही पूरी नहीं हो जाती। उसके लिये हमें अपने भोजन में सन्तुलित अनुपात में विटामिनों को सम्मिलित करना पड़ता है। अगर हम अपने दैनिक भोजन में विटामिनों का विचार किए बिना विटामिनों से रहित भोजन करते जाते हैं तो हमारा शरीर रोगी हो जाता है।

वैज्ञानिक खोजों के आधार पर अभी तक ज्ञात विटामिनों की संख्या लगभग २० है। इन विटामिनों का संज्ञीकरण आङ्गल भाषा के वर्णों क्रम से किया जाता है। जैसे– विटामिन A, विटामिन B आदि-आदि।

सभी प्रकार के विटामिन साधारणतया किसी एक ही पदार्थ में नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलते। किन्तु कई विटामिन कुछ पदार्थों में एक साथ भी मिलते हैं। प्रत्येक प्रकार के विटामिन का हमारे शरीर के लिए अपना विशेष प्रकार का योगदान होने से उसका अपना विशेष महत्त्व है। कुछ विटामिन कई विटामिनों के मिश्रण के रूप में भी मिलते हैं। जैसे – विटामिन बी कई विटामिनों का मिश्रण होता है। हमारे शरीर में किसी खास विटामिन की कमी हो जाने पर कोई विशेष बीमारी या अनियमितता उत्पन्न हो जाती है।

विटामिनों के कार्य और उपयोग

विटामिन ए– यह एक साधारण कार्बनिक यौगिक है जिसका अणुसूत्र $C_{20}H_{30}O$ होता है। यह प्राथमिक एल्कोहल के गुण-धर्म रखता है। इसे वैज्ञानिक भाषा में रेटिनोल (Retinol) भी कहते हैं।

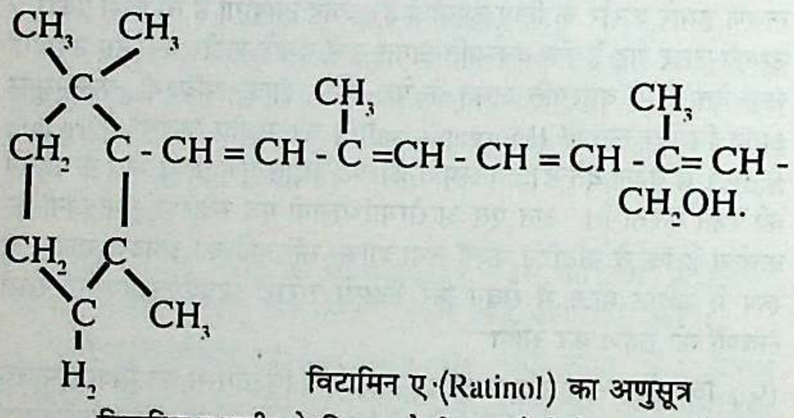

विटामिन ए (Ratinol) का अणुसूत्र

विटामिन ए शरीर के विकास के लिए, आँखों के स्वास्थ्य के लिए, त्वचा, गला, श्वसन नली, मस्तिष्क तथा जठराग्नि के लिए आवश्यक है।

विटामिन ए की कमी से बच्चों में शरीर का विकास रुक जाता है अथवा बेढंगा विकास होता है इसकी कमी से नेत्ररोग, मन्दाग्नि और मस्तिष्क की मन्दता एवं निष्क्रियता उत्पन्न हो जाती है।

यह विटामिन प्रायः सभी हरी-सब्जियों में पाया जाता है। किसी सब्जी में उपस्थित विटामिन ए उसके हरेपन के अनुपात में मिलता है। दूध, मक्खन और पनीर में भी यह काफी मात्रा में होता है। पके हुए आम, पपीता, धनिया, अजवायन, गाजर, पत्तागोभी और सहजन में पर्याप्त मात्रा में मिलता है। आलू तथा प्याज में इसका नितान्त अभाव होता है।

विटामिन बी– इसे साधारणतया विटामिन बी-काम्पलेक्स कहते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं क्योंकि यह लगभग बारह प्रकार के विटामिनों का मिश्रण होता है। ये सभी विटामिन सामान्यतया एक ही साथ विभिन्न पदार्थों में पाए जाते हैं। यह विटामिन शरीर की ऊर्जादायिनी अभिक्रियाओं में भाग लेता है।

(१) बी$_१$ (थाइमिन)–यह विटामिन दूध, दाल, खमीर, हरी मटर, आलू तथा अन्य कुछ हरी सब्जियों में पाया जाता है। गर्म करने पर यह बहुत शीघ्र नष्ट हो जाता है। इसकी कमी से शरीर का विकास रुक जाता है। बेरी–बेरी नामक रोग उत्पन्न हो जाता है। भूख कम हो जाती है। स्त्रियों के शरीर में दूध कम मात्रा में उत्पन्न होने लगता है।

(२) बी$_२$ (राइबोफ्लेविन)–इसकी कमी होने पर भी शरीर का विकास रुक जाता है। त्वचा के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। आँखों की रोशनी कम हो जाती है। जिह्वा पर जलन होती है और वह लाल हो जाती है। बाल झड़ने लगते हैं तथा अधिक कमी से शरीर में सूजन आ जाती है।

(३) नाइसिन या निकोटेनिक एसिड– इस विटामिन की कमी से मानसिक असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है। दस्त लग जाते हैं। अन्य पाचन सम्बन्धी विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं तथा त्वचा के रोग पैदा हो जाते हैं।

शरीर के कोष्ठकों द्वारा आक्सीजन तथा इन्धन के ठीक–ठीक प्रयोग के लिए यह विटामिन आवश्यक होता है। यह दालों तथा अनाजों में पाया जाता है। दूध और पनीर में भी यह पर्याप्त मात्रा में मिलता है।

(४) पाइराडाक्सिन– यह विटामिन पूर्णान्नों में तथा दूध में पाया जाता है। हमारे यकृत में भी इसका निर्माण होता है। स्नायुमण्डल के सुचारु रूप से कार्य करने के लिए यह सहायता देता है। अमिनो एसिड से CO_2 को यह अलग कर देता है। शरीर के अधिक अमिनो एसिड को गन्धक में तथा गन्धक को अमिनो एसिड में बदल देता है। पेशाब के द्वारा अमोनियम आक्सिलेट (जो पित्ताशय तथा मूत्राशय में पथरी बनने का कारण बनता है) को दूर करता है।

(५) पेन्टोथेनिक अम्ल– गिरी वाले मेवों तथा पूर्ण अन्नों में यह पाया जाता है। शरीर की ऊर्जा उत्पादक अभिक्रियाओं में यह भाग लेता है। इस की कमी से त्वचा रोग उत्पन्न हो जाते हैं तथा शरीर का पोषण भी बिगड़ जाता है।

(६) बायोटीन– यह ताजी हरी सब्जियों तथा गिरी वाले मेवों में पाया जाता है। त्वचा के रोगों से रक्षा करता है और रक्त सञ्चार में मदद

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता है।

(७) पैरा–अमीनों बेजोइक अम्ल–

इसकी कमी से कम आयु में ही बाल सफेद हो जाते हैं। कई औषधियों के हानिकारक प्रभाव से भी शरीर की रक्षा करता है।

(८) इनोसिटाल– यह बालकों के स्वास्थ्य के लिए अत्यावश्यक है। इसकी कमी से बाल झड़ने लगते हैं और तोंद निकल जाती है।

(९) कोलीन– शरीर में इसकी कमी होने पर रक्तचाप बढ़ जाता है। यह प्रोटीन के पाचन में होने वाली रासायनिक अभिक्रियाओं में भाग लेता है।

(१०) फोलिक एसिड– पत्तियों से प्राप्त होने के कारण इसे फोलिक एसिड कहते हैं। इसकी कमी होने पर शरीर में एनिमिया रोग हो जाता है। ट्यूमर तथा कैंसर के उपचार में यह उपयोगी है।

(११) एल्फा लाइपोइक एसिड– यह विटामिन कार्बोहाइड्रेट्स के पाचन में होने वाली रासायनिक अभिक्रियाओं में भाग लेता है।

(१२) विटामिन बी$_{१२}$– इसकी कमी होने से भी एनिमिया रोग हो जाता है। अधिक कमी होने पर स्नायविक दोष उत्पन्न हो जाते हैं। १२ वर्ष से कम आयु के बच्चों के शारीरिक विकास के लिए यह आवश्यक तत्त्व है। इसके अणु में कोबाल्ट होता है।

विटामिन सी– इस विटामिन का रासायनिक नाम एस्कार्विक अम्ल है। यह शरीर में नये रक्त निर्माण में सहायक होता है। इसकी कमी से त्वचा के रोग हो जाते हैं। स्कर्वी नामक बीमारी हो जाती है। इस बीमारी में मसूड़ों से खून निकलने लगता है तथा दान्त गिरने लगते हैं और हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं। बच्चों में यह बीमारी पैदा होने से उनकी शरीर की बनावट बिगड़ जाती है।

यह विटामिन ताजे फलों और कुछ सब्जियों में पाया जाता है। आँवले में यह सबसे अधिक मात्रा में मिलता है। सिट्रस् समुदाय के फलों जैसे– नारंगी, सन्तरा, मौसमी आदि में यह काफी मात्रा में पाया जाता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एस्कार्बिक अम्ल एक बहु हाइड्रिक कीटोनिक अम्ल होता है इसकी अणु रचना निम्न प्रकार होती है–

$$CH_2OH.\ CHOH.CHOH.CHOH\text{-}CO.COOH.$$

विटामिन डी– यह विटामिन दाँतों तथा हड्डियों के बनने तथा उनकी मजबूती के लिए आवश्यक होता है। इसकी शरीर में कमी होने पर बच्चों में सूखा रोग हो जाता है। दूध, मक्खन, घी आदि में यह पाया जाता है। सूर्य की किरणों में भी यह पर्याप्त मात्रा में मिलता है। विटामिन ए की उपस्थिति में ही यह अपना कार्य करता है। शरीर में कैल्शियम (Calcium) की मात्रा को यह नियन्त्रित रखता है।

विटामिन इ– यह शरीर की प्रजनन शक्ति को उत्पन्न करता हैं। यह कई यौगिकों का मिश्रण होता है। लोहे के पाचन में यह सहायक होता है। दाल, सब्जियों, दूध, गाजर, पालक, बिनौला, तथा अङ्कुरित गेहूँ में यह अधिक मात्रा में पाया जाता है।

इसकी कमी हो जाने पर स्त्रियों में वन्ध्यापन तथा शरीर में रक्त का अभाव हो जाता है।

विटामिन के– दो विभिन्न यौगिकों को विटामिन 'के' कहा जाता है। ये दोनों शरीर में एक जैसा ही कार्य करते हैं। इसकी कमी से रक्त का स्पन्दन अनियमित हो जाता है। यह टमाटर तथा हरी सब्जियों में पाया जाता है।

शरीर की विशेष परिस्थितियों में अतिरिक्त विटामिनों की आवश्यकता हो जाती है, जैसे– शिशुओं को विटामिन डी तथा महिलाओं को गर्भावस्था में फोलिक अम्ल की विशेषरूप से आवश्यकता होती है। जो लोग घी, दूध, मक्खन का प्रयोग नहीं करते उन्हें $बी_{१२}$ की तथा जो अत्यल्प आहार पर रहते हैं, उन्हें भी शरीर पोषण के लिए अतिरिक्त विटामिनों की आवश्यकता होती है। जो कि उन्हें विशेष खुराक के रूप में लेना चाहिए। लेकिन कृत्रिम विटामिनों की अधिक मात्रा शिशुओं के लिए मारक सिद्ध हो सकती है। कृत्रिम विटामिनों की अतिरिक्त मात्रा देने पर यह देखा गया है कि यह शरीर की सर्दी–जुकाम से रक्षा नहीं करती और न ही उससे सर्दी–जुकाम का उपचार सम्भव है। अपितु कृत्रिम विटामिनों की इस अतिरिक्त मात्रा के अधिक सेवन से गुर्दे तथा यकृत में पथरी होने की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं तथा अतिसार, मूत्र नलिका का प्रदाह और रक्त का

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धमनियों में जमाव आदि रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं। वैज्ञानिकों का इस बात में भी कोई तर्क नहीं कि कृत्रिम विटामिनों के प्रयोग से मानसिक तनाव, उन्माद, बुद्धि शैथिल्य, जोड़ों की सूजन, आमाशयिक कष्ट, रक्तचाप का घट जाना व अधिक मदिरापान से उत्पन्न रोगों में कोई लाभ होता हो। अतः प्राकृतिक फल–सब्जी, दूध आदि खाद्य पदार्थों में पाए जाने वाले विटामिनों का प्रयोग ही शरीर के लिए उपयोगी है। इसके विपरीत कृत्रिम विटामिनों का प्रयोग सदैव भयावह एवं हानिकारक होने से त्याज्य है।

(६) पानी– हमारे शरीर की रचना में पानी लगभग ७० प्रतिशत होता है। यह शरीर में भोजन के पाचन एवं अवशोषण में सहायक होता है, तथा शरीर के ताप को स्थिर रखने में मदद करता है। शरीर के अन्दर अनुपयोगी घुलनशील पदार्थों को पसीने और मूत्र के रूप में घोलकर बाहर निकाल देता है और रक्त के सञ्चरण में सहायता देता है। पानी हमारा जीवन साथी है। इसके अभाव में मनुष्य पांच–छः दिन से अधिक जीवित नहीं रह सकता।

वैज्ञानिक खोजों के आधार पर मनुष्य के शरीर में रक्त के अन्दर ८३% तक पानी होता है, तथा मांस–पेशियों में ७५% और हड्डियों में २२% पानी होता है। एक स्त्री के शरीर में ५५ से ६५% तक तथा पुरुष के शरीर में ६५ से ७५% तक पानी की मात्रा होती है। एक प्रौढ़ व्यक्ति के शरीर में पानी की औसतन मात्रा ३५ से ५० लीटर तक पाई जाती है। जिसमें से २.३ से २.८ लीटर पानी पसीने या मूत्र के रूप में बाहर निकल जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि शरीर में पानी का सन्तुलन बनाए रखने के लिए स्वस्थ मनुष्य को २.३ से २.८ लीटर तक पानी प्रतिदिन अवश्य पीना चाहिए। अगर हम पानी की इससे कम मात्रा का प्रयोग करते हैं तो उसका स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

इस सन्दर्भ में यहाँ यह भी जानना आवश्यक है कि पानी की यह मात्रा हम दूध, फल, सब्जियों आदि के रूप में भी पूरा करते हैं। फलों और सब्जियों में ३/४ भाग से कुछ अधिक ही पानी की मात्रा होती है। जैसे कि कई हरी सब्जियों में लगभग ८९% तथा तरबूज में ९५% पानी की मात्रा होती है। दूध में ८५% से भी अधिक पानी की मात्रा होती है। जो लोग अपने भोजन में दूध,फल और सब्जियों का प्रयोग नहीं करते अथवा न्यून मात्रा में करते हैं, उन्हें अपेक्षाकृत अधिक पानी की मात्रा ग्रहण करनी चाहिए।

(७) हवा– हवा में जीवन है। बिना वायु के हम एक सेकिण्ड

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी जीवित नहीं रह सकते। सोते-जागते हमारा श्वसन संस्थान वायु से जीवन ग्रहण करता रहता है। बिस्तर पर विश्राम कर रहे एक स्वस्थ मनुष्य को एक मिनट में ९ लीटर हवा की आवश्यकता होती है। इसके विपरीत बैठा व्यक्ति १ मिनट में १८ लीटर, चलता हुआ २७ लीटर तथा दौड़ता हुआ व्यक्ति एक मिनट में ५६ लीटर वायु को ग्रहण करता है। कुर्सी पर बैठकर काम करने वाले व्यक्ति को शारीरिक कठोर श्रम करने वाले व्यक्ति की अपेक्षा कम आक्सीजन की आवश्यकता होती है। वह सामान्यतया एक मिनट में १६ बार श्वास लेता है। एक बार की श्वसन क्रिया में १/२ लीटर वायु अपने फेफड़ों में भरता है। फेफड़ों में जाने वाली यह १/२ लीटर वायु की सम्पूर्ण मात्रा शरीर के उपयोग में नहीं आती। इसका लगभग १/३ भाग अप्रयुक्त रहकर फेफड़ों से बाहर निकल जाता है। केवल १/३ भाग ही शरीर की क्रियाओं में भाग लेता है।

श्वसन की इस क्रिया में वायु की जो मात्रा हम ग्रहण करते हैं उसमें आक्सीजन की मात्रा १५ से २० प्रतिशत तक होती है, शेष नाईट्रोजन आदि दूसरी गैसें होती हैं। आक्सीजन की यह प्रतिशत मात्रा भी हमारे परिवेश की शुद्धि पर निर्भर करती है। अशुद्ध परिवेश में कभी-कभी तो यह अनुपात घटकर ५% से भी कम हो जाता है। हमारे शरीर में ऊर्जा-उत्पादन भी आक्सीजन के इस अनुपात के साथ ही घटता-बढ़ता रहता है। शुद्ध हवा में श्वास लेने पर शरीर में आक्सीजन अधिक मात्रा में जाती है। फलतः आक्सीजन की क्रिया तीव्र हो जाती है जिसके कारण हम अधिक अन्न पचा सकते हैं। हमारी भूख बढ़ जाती है। अधिक ऊर्जा का उत्पादन होता है। अशुद्ध वायु में श्वास लेने पर ठीक इसके विपरीत प्रतिक्रिया होती है। भूख न लगना, ऊर्जा का ह्रास होना आदि-आदि।

हमारे फेफड़ों का स्वास्थ्य और आरोग्यता शुद्ध वायु में श्वास लेने पर ही निर्भर करती है। हमारे शरीर का अशुद्ध रक्त फेफड़ों द्वारा आक्सीजन लेकर पुनः नए कोषों से युक्त हो जाता है और यह शुद्ध रक्त फेफड़ों से हृदय में जाता है। इसी आक्सीकृत रक्त द्वारा हमारा हृदय भी जीवन प्राप्त करता है। अशुद्ध रक्त हृदय के लिए मारक-विष का कार्य करता है। उससे हृदय के वाल्व खराब होकर कई भयानक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। फेफड़े और हृदय की आरोग्यता के साथ ही हमारे सम्पूर्ण शरीर और मस्तिष्क की आरोग्यता आबद्ध है।

हृदय से जो नाड़ियाँ रक्त को लेकर शरीर के विभिन्न भागों में पहुँचती हैं, उन्हें धमनियाँ कहते हैं तथा जो नाड़ियाँ शरीर से रक्त को हृदय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में वापिस लाती हैं, उन्हें शिराएँ कहते हैं। असंतुलित पोषण के अभाव में हमारी धमनियों तथा शिराओं में विजातीय द्रव्य संगृहित हो जाते हैं, जिसके कारण रक्त का प्रवाह मन्द पड़ जाता है अथवा अवरुद्ध हो जाता है और उसका परिणाम होता है शरीर के विभिन्न तन्तुओं का नष्ट हो जाना एवं हृदय रोगों का उदय होना। इस प्रकार के रोगों से बचने का निरापद उपाय है– व्यायाम तथा प्राणायाम द्वारा नाड़ी तन्त्र का शोधन कर शरीर को प्राकृतिक पोषण दिया जाए। धूम्रपान तथा मद्यादि का सेवन फेफड़ों और हृदय के लिए भयङ्कर विष का काम करते हैं। स्वास्थ्य प्रेमी सज्जनों को ऐसे दुर्व्यसनों से कोसों दूर रहना चाहिए।

व्यायाम के समय हृदय की स्पन्दन गति बढ़ जाती है। यूँ तो हमारा शरीर प्रतिक्षण ऊर्जा का उत्पादन तथा व्यय करता ही रहता है और ऊर्जा उत्पादन के इस कार्य में रक्त के कोष्ठक आक्सीजन की उपस्थिति में जलकर एक निश्चित ताप को पैदा करते हैं। किन्तु व्यायाम करते समय शरीर की यह क्रिया अधिक तीव्र गति से कार्य करने लगती है। शरीर के जिस अङ्ग को अधिक कार्य करना पड़ता है वहाँ आक्सीजन की अधिक आवश्यकता होती है ताकि वह रक्त कोष्ठकों से ऊर्जा को उत्पन्न कर सके। इसी ऊर्जा के कारण शरीर से पसीना बहने लगता है।

ऊर्जा उत्पादन की इस समस्त प्रक्रिया में फेफड़ों से आया हुआ आक्सीजन रक्त के साथ मिश्रित होकर शरीर के अङ्ग–प्रत्यङ्गों में सूक्ष्म मांस–पेशियों तक पहुँच जाता है और वहाँ मांस–पेशियों के कोष्ठकों में उपस्थित कार्बन–डाई–आक्साईड का स्थान आक्सीजन ले लेती है तथा कार्बन–डाई–आक्साईड को वह मुक्त कर देती है। इस प्रक्रिया को आक्सीकरण की क्रिया कहते हैं। यह विस्थापित कार्बन–डाई–आक्साईड (Co_2) रक्त प्रवाह के साथ फेफड़े द्वारा अथवा स्वेद रूप में शरीर से बाहर निकल जाती है। रक्त में उपस्थित ग्लुकोज, चिकनाई तथा प्रोटीन इन्धन का काम देते हैं। मांस–पेशियों को जब कभी नये रक्त से ग्लुकोज आदि प्राप्त नहीं होते तो वे अपने पूर्व संगृहित कोष में से इनका उपयोग करते हैं।

सभी प्रकार की कसरतों का मुख्य उद्देश्य–शरीर में सूक्ष्म से सूक्ष्म भाग तक आक्सीजन को पहुँचाना तथा ऊर्जा–उत्पादन में प्रत्येक अङ्ग को सक्षम बनाना है। समुचित कसरत से हमारा शरीर सुडौल, स्वस्थ, सुन्दर एवं दीर्घ जीवन प्राप्त करता है।

सभी प्रकार के शारीरिक व्यायामों में ऊर्जा की एक मात्रा का व्यय भी होता है, जिसकी पूर्ति शरीर नए ऊर्जा उत्पादन द्वारा करता है। कभी–कभी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कठोर व्यायाम से हम शरीर को इतना अधिक थका देते हैं कि मांस-पेशियों तक अपेक्षित आक्सीजन नहीं पहुँच पाती और आक्सीजन के अभाव या न्यूनता में उन अङ्गों में नई ऊर्जा भी पैदा नहीं होती। इस प्रकार का अधिक थका देने वाला व्यायाम हम अपने शरीर से अधिक दिनों तक नहीं कर सकते। आक्सीजन के अभाव में मांस-पेशियों के अन्दर रासायनिक अभिक्रियाओं में लैक्टिक एसिड (Lactic Acid) उत्पन्न हो जाता है। यह एसिड अङ्गों में अकड़न पैदा करता है और इससे मांस-पेशियों का लचीलापन समाप्त हो जाता है। उनमें टूटे हुए कोष्ठक एकत्रित हो जाते हैं। जो रक्त-संचालन के मार्ग में भी बाधा उपस्थित करते हैं। ऐसी स्थिति में शरीर को विशेष आराम की आवश्यकता होती है।

जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं- हमारे भोजन के सात घटक हैं। उनमें से प्रथम तीन- कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन और चिकनाई शरीर के ऊर्जा-उत्पादन में मुख्यतया इन्धन का काम देते हैं। शरीर के निर्धारण, विकास एवं दृढता में भी ये काम आते हैं। किन्तु शरीर में आक्सीकृत होकर विभिन्न धातुओं के रूप में यह ही परिवर्तित होते हैं। ऊर्जा उत्पादन के लिए जो विभिन्न रासायनिक क्रियाएँ शरीर में होती हैं, वे भोजन के शेष चार घटकों- प्राकृतिक लवण, विटामिन, पानी और आक्सीजन की सहायता से ही होतीं हैं। उनके अभाव में रासायनिक क्रियाएँ नहीं होंगी। अतः शरीर में न भूख लगेगी, न ऊर्जा-उत्पादन होगा और शरीर की सारी क्रियाएँ भी ठप पड़ जायेंगी।

जो भोजन हम प्रतिदिन ग्रहण करते हैं- वह हमारी पाचन-प्रणाली द्वारा शोषित होकर रस रूप में रक्त के साथ मिल जाता है और हृदय द्वारा शरीर के प्रत्येक अङ्ग में वितरित कर दिया जाता है। रक्त के साथ ही विभिन्न अङ्गों तक लवण, विटामिन तथा आक्सीजन व पानी भी पहुँच जाते हैं तथा वहाँ रासायनिक क्रियाएँ घटित होकर नए कोष्ठकों का निर्माण करती हैं और ऊर्जा का उत्पादन होता है। इस प्रकार प्रतिदिन के भोजन से हम नई शक्ति को प्राप्त करते हैं।

हमारे भोजन में उपस्थित कार्बोहाइड्रेट यकृत द्वारा सर्वप्रथम ग्लुकोज में परिवर्तित हो जाता है। यह ग्लुकोज रक्त में शोषित होकर शरीर के विभिन्न अङ्गों को सद्यः शक्ति प्रदान करता है। इस ग्लुकोज को हमारे शरीर के कोष्ठक तुरन्त ग्रहण कर लेते हैं, जिसके द्वारा उन्हें नई ऊर्जा प्राप्त होती है।

यदि हमारे भोजन में ग्लुकोज की अपेक्षित मात्रा कम होती है तो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा शरीर प्रोटीन तथा चिकनाई से उसकी कमी की पूर्ति करता है। चिकनाई के पाचन में एक रासायनिक तत्त्व उत्पन्न होता है जिसे वैज्ञानिक भाषा में कीटोन कहते हैं। कीटोन हमारे शरीर के लिए बहुत उपयोगी पदार्थ नहीं होते। मुँह के अन्दर एक विशेष गन्ध इनके कारण उत्पन्न होती है। जब कोई व्यक्ति उपवास करता है, तब शरीर की चिकनाई अधिक काम में आती है और वह जब जठराग्नि में जलती है तो कीटोन अधिक मात्रा में बनने लगता है। जिसके कारण मुँह का स्वाद बिगड़ जाता है। जब शरीर की चिकनाई समाप्त हो जाती है तो अग्नि प्रोटीन को जलाने लगती है। क्योंकि प्रोटीन से हमारे शरीर के कोष्ठकों का निर्माण होता है अतः उसके जलने से शरीर की विशेष क्षति होने लगती है और शरीर उत्तरोत्तर कमजोर होता जाता है।

जब हमारे भोजन में ग्लुकोज या चिकनाई की मात्रा अपेक्षा से अधिक होती है तो शरीर उसे विशेषकाल के लिए संगृहीत कर लेता है। ग्लुकोज–ग्लाईकोजन के रूप में यकृत के अन्दर तथा मांस–पेशियों में एकत्रित हो जाता है और चिकनाई चर्बी के रूप में हमारी त्वचा के नीचे और मांस–पेशियों में जमा होने लगती है। जब शरीर को विशेष शक्ति की आवश्यकता होती है तब इन्हीं कोषों से वह ग्रहण करता है। किन्तु एक निश्चित मात्रा तक ही शरीर इनका संग्रह कर सकता है। ऐसा नहीं है कि वह महीनों अथवा वर्षों के लिए इनका संग्रह कर ले। जैसे कि हमारा यकृत २५० ग्राम तक ग्लाईकोजन का संग्रह कर सकता है। उससे अधिक मात्रा होने पर वह स्वयं यकृत के लिए रुग्णता का कारण बन जाता है। रक्त में उसकी मात्रा बहुत बढ़ जाने से मधुमेह आदि रोगों की उत्पत्ति हो जाती है। अतः शरीर की आरोग्यता के लिए सन्तुलित आहार की आवश्यकता है।

हमारे शरीर में अभिघटित होने वाली रासायनिक क्रियाएँ जिन रासायनिक द्रव्यों द्वारा प्रभावित होती हैं वे शरीर की कुछ अन्तःस्रावी ग्रन्थियों में उत्पन्न होते हैं। इनं ग्रन्थियों का स्वस्थ रहना रासायनिक अभिक्रियाओं के लिए बहुत आवश्यक है। यूँ तो हमारे शरीर में कई सहस्र अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ विद्यमान हैं। हजारों स्वेद ग्रन्थियाँ हैं तो हजारों लोम ग्रन्थियाँ हैं। किन्तु शरीर के पाचन संस्थान के साथ सीधा सम्बन्ध रखने वाली ६–७ ग्रन्थियाँ ही हैं। उनका हम अपने पाठकों के ज्ञानार्थ नीचे संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करते हैं।

(१) पिट्यूटरी ग्रन्थि (मस्तिष्क ग्रन्थि)– इस ग्रन्थि का स्थान हमारे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मस्तिष्क के मध्यभाग के नीचे की ओर होता है। ब्रह्म रन्ध्र के नीचे तथा तालू के ऊपर मस्तिष्क के निचले भाग में मटर के दाने के आकार की गुलाबी रंग की, मस्तिष्क में नीचे की ओर लटकी रहती है। इसका भार लगभग १/२ ग्राम के बराबर होता है। इस ग्रन्थि की कार्य-प्रणाली बहुत ही जटिल और रहस्यपूर्ण है। शरीर और मस्तिष्क की प्रत्येक क्रिया इस ग्रन्थि के नियन्त्रण में कार्य करती है। शरीर के अन्दर वर्तमान अन्य सभी ग्रन्थियों के कार्यों को यह ग्रन्थि नियन्त्रित करती है और कार्य करने के लिए शक्ति प्रदान करती है। इस कारण यह ग्रन्थि सभी ग्रन्थियों में प्रधान ग्रन्थि कहलाती है। इस ग्रन्थि के हार्मोन्स की अत्यल्प मात्रा मानव जीवन में आश्चर्यजनक परिवर्तन कर देती है। इसके अन्दर लगभग १०-१२ प्रकार के हार्मोन्स तैयार होते हैं। ये हार्मोन्स ही विभिन्न ग्रन्थियों के कार्यों को प्रभावित करते हैं। शरीर की वृद्धि, विकास, भूख, प्यास, प्रजनन आदि सभी क्रियाएँ इसी ग्रन्थि के आधीन सम्पन्न होती हैं।

(२) पीनियल ग्रन्थि– यह ग्रन्थि मस्तिष्क में पिट्यूटरी ग्रन्थि के थोड़ा सा ऊपर की ओर स्थित रहती है। मानसिक सन्तुलन बनाए रखना इस ग्रन्थि का मुख्य कार्य है। शरीर तथा मस्तिष्क की सभी क्रियाएँ इस ग्रन्थि से प्रेरित होती हैं। भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, भय, क्रोध आदि संवेदनाएँ इस ग्रन्थि द्वारा नियन्त्रित होती हैं। शरीर में यह ग्रन्थि सोडियम, पोटेशियम और पानी के सन्तुलन को बनाकर रखती है। शरीर का समूचा नाड़ी-संस्थान इस ग्रन्थि द्वारा नियन्त्रित होता है।

(३) थाइराइड ग्रन्थियाँ– थाइराइड ग्रन्थियाँ गले के अन्दर श्वास नली के दोनों ओर एक तितली के आकार में स्थित होती हैं। इस ग्रन्थि के अन्दर जो हार्मोन्स (रासायनिक द्रव्य) तैयार होते हैं, उनका शरीर के विकास में बहुत बड़ा महत्त्व है। यह जठराग्नि के उद्दीपन का कार्य करता है। भूख की मात्रा इसके रासायनिक द्रव्य की मात्रा पर ही निर्भर करती है। पाचन-संस्थान के आयोडाइड को यह ग्रन्थि आयोडीन में परिवर्तित कर देती है और उसे टाईरोसीन नामक अमिनो एसिड के रूप में संगृहीत कर लेती है। जिससे शरीर में प्रोटीन का पाचन होता है। शरीर में आयोडीन की कमी हो जाने से इस ग्रन्थि का कार्य रुक जाता है अथवा धीमा पड़ जाता है। आयोडीन हमें हरी सब्जियों से प्राप्त होता है या उसे आयोडाइज्ड नमक द्वारा ग्रहण कर सकते हैं। औषधियों का अधिक सेवन भी शरीर की आयोडीन को प्रभावित करता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये ग्रन्थियाँ हमारे शरीर में कैल्शियम तथा फास्फोरस के परिणाम को सन्तुलित रखती हैं। इनके ठीक कार्य न करने पर शरीर सूख जाता है। स्नायु-तन्त्र में ऐठन आ जाती है। हिचकियाँ आने लगती हैं। कभी-कभी शरीर में चर्बी की मात्रा भी बढ़ जाती है। मानसिक विकास रुक जाता है तथा पेट में पथरी हो जाती है। सन्तुलित प्राकृतिक भोजन इस ग्रन्थि की आरोग्यता के लिए आवश्यक है।

(४) थाइमस ग्रन्थि– यह ग्रन्थि हमारी छाती के मध्यभाग में छाती की हड्डी के ऊपर स्थित होती है। इस ग्रन्थि का मुख्य कार्य शरीर के घावों में सड़न तथा अन्य किसी भी प्रकार के विजातीय बैक्टीरिया, वायरस अथवा विष के प्रभाव को रोकना है। आवश्यकता होने पर यह ऐसे रासायनिक द्रव्यों को उत्पन्न करती है जो शरीर की रक्षा में सहायक होते हैं। शरीर में यह ग्रन्थि सैन्य-बल का कार्य करती है। कैन्सर के कोषों की उत्पत्ति में अथवा रक्त के अन्य विकार होने पर यह प्रतिरोधक का कार्य करती है। इस ग्रन्थि में विकार आने पर सारे शरीर की क्रियाएँ प्रभावित होती हैं। अङ्गुलियों के नाखून सड़ने लगते हैं। मुँह में छाले हो जाते हैं। मांस पेशियाँ जलने लगती हैं और वे कमजोर पड़ जाती हैं तथा शरीर के घाव भरने में नहीं आते। इस ग्रन्थि का थाईमोसिन नामक तत्त्व तिल्ली की सक्रियता को बल प्रदान करता है। लगभग ५० वर्ष की आयु के बाद इस ग्रन्थि का कार्य बन्द हो जाता है।

(५) तिल्ली (पेक्रियाज ग्रन्थि)–यह ग्रन्थि हमारे पेट में बाईं ओर अवस्थित होती है। आकार में यह लगभग १५ सेंटीमीटर लम्बी तथा भार में ८५ ग्राम के लगभग होती है। प्रतिदिन यह लगभग एक लीटर पाचक रस तैयार करके पाचन संस्थान में भेज देती है। आमाशय से आए हुए अम्लीय खाद्य द्रव्य को यह क्षारीय बना देती है। आमाशय के अम्ल प्रोटीन को विखण्डित करते हैं और तिल्ली के पाचक रस ग्लुकोज को पचाते हैं। रक्त की शक्कर को नियन्त्रित करते हैं। इन्सुलिन नामक रासायनिक द्रव्य इस ग्रन्थि का एक मुख्य द्रव्य होता है। यह ग्रन्थि कोष्ठकों के ऊर्जा उत्पादन में इन्धन आपूर्ति (Suply)का कार्य करती है।

इस ग्रन्थि में तीन प्रकार के किण्व उत्पन्न होते हैं। जिनमें ट्रिप्सिन नामक किण्व भोजन की प्रोंटीन को अमिनो एसिड में बदल देता है। जो कि रक्तधारा के साथ प्रवाहित होकर शरीर में तन्तु-निर्माण का कार्य करता है। दूसरा एमाइलोज नामक किण्व मांडी (Starch) को शक्कर में बदल देता है तथा तीसरा लाईपेज नामक किण्व चिकनाई को फैट्टी एसिड्स तथा ग्लिसरीन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में परिवर्तित कर देता है।

इस ग्रन्थि में इन्सुलिन नामक रासायनिक द्रव्य के उत्पन्न न होने पर शरीर में मधुमेह रोग उत्पन्न हो जाता है। यह द्रव्य यकृत के कार्य को भी प्रभावित करता है। जब रक्त में शक्कर की मात्रा अधिक हो जाती है तो यकृत उसको ग्लाइकोजन में बदल देता है। शरीर में शक्कर की कमी हो जाने पर यही ग्लाइकोजन पुनः ग्लुकोज में बदल जाता है। यकृत और तिल्ली के कार्य बहुत अंशों तक एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं।

(६) यकृत– यकृत हमारे पाचन-संस्थान का एक प्रधानतम अङ्ग है। यह हमारी छाती में दाएँ फेफड़े के नीचे स्थित होता है। इसका भार लगभग डेढ़ किलोग्राम के बराबर होता है। हमारे यकृत के अन्दर हजारों प्रकार के किण्व उत्पन्न होते हैं जो शरीर की सैंकड़ों प्रकार की रासायनिक क्रियाओं में भाग लेते हैं। शरीर के किसी घाव में से रक्त बहने पर उसे जमा देना यकृत का एक कार्य है। आँतों में बने हुए अमीनो एसिड्स को यकृत विषैले प्रभाव से मुक्त करके उन्हें शरीर के लिए उपयोगी बना देता है तथा शरीर की आवश्यकता से अधिक अम्ल को यूरिया के रूप में मूत्र के साथ शरीर से बाहर भेज देता है।

लवण की मात्रा को नियन्त्रित करने वाले द्रव्य जो एड्रिनल नामक ग्रन्थि में उत्पन्न होते हैं, उनकी मात्रा को भी यकृत नियन्त्रित रखता है तथा अपेक्षा से अधिक मात्रा में बढ़ जाने पर उन्हें नष्ट कर देता है।

यकृत शरीर में विष-प्रतिरोधक का भी कार्य करता है। शरीर से श्रम लेते समय हमारी मांस-पेशियाँ लेक्टिक एसिड (Lactic Acid) का निर्माण करती हैं। हमारा यकृत उस एसिड को ग्लाइकोजन में परिवर्तित कर देता है। जो आवश्यकता पड़ने पर शरीर को पुनः ग्लुकोज के रूप में ऊर्जा प्रदान करता है। भोजन के रूप में हम जो गुड़ अथवा चीनी ग्रहण करते हैं, उसे हमारी आँतें ग्लुकोज में बदल देती हैं। रक्त में ग्लुकोज़ की अधिकता होने पर मधुमेह रोग पैदा हो जाता है। यकृत उस अतिरिक्त ग्लुकोज की मात्रा को ग्लाइकोजन माँडी के रूप में बदल देता है। इस रूप में वह लगभग २५० ग्राम ग्लाइकोजन आपातकाल के लिए संगृहित कर लेता है। रक्त में ग्लुकोज की मात्रा कम होने पर इसे पुनः रक्त में भेज देता है।

हमारा यकृत प्रतिदिन एक लीटर से भी अधिक पित्त का निर्माण करता है। जो खाद्य पदार्थों को पचाने के लिए अत्यावश्यक है। यकृत प्रतिक्षण लाखों रक्त कोषों का निर्माण करता है। पुराने रक्तकोषों के स्थान पर नए रक्तकोष बनाता है।

CC-0 Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूषित आहार विहार से यकृत के अन्दर कई प्रकार के दोष उत्पन्न हो जाते हैं। शरीर में पीलिया रोग यकृत की विकृति की सूचना देता है। जब यकृत लाल रक्त के टूटे हुए कोष्ठकों को शरीर से बाहर करने में असमर्थ हो जाता है तथा नए रक्तकोषों का निर्माण नहीं कर पाता तब पीलिया रोग उत्पन्न हो जाता है। अधिक मात्रा में लिए हुए घी या तेल को जब शरीर नहीं पचा पाता तो वह भी यकृत की विकृति का कारण बन जाता है।

भूख बन्द हो जाना, कमजोरी, थकान, पेट में दर्द रहना आदि यकृत-विकृति के लक्षण हैं।

शारीरिक विश्राम तथा प्राकृतिक आहार-विहार यकृत-रोगों से मुक्ति के उपाय हैं।

(७) एड्रिनल ग्रन्थि– यह ग्रन्थि एक जोड़े के रूप में गुर्दों के ऊपरी भाग में अवस्थित होती है। इस ग्रन्थि का स्वस्थ रहना शरीर की आरोग्यता के लिए आवश्यक है। इसके रुग्ण होने पर शरीर भी रोगी हो जाता है। व्यक्ति पागल भी हो जाता है। मृत्यु तक हो जाती है। इस ग्रन्थि में ५० जोड़े हार्मोन्स उत्पन्न होते हैं। प्रतिदिन उत्पन्न होने वाले हार्मोन्स की मात्रा एक ग्राम के लगभग ३६वें भाग के बराबर होती है। शरीर में अचानक जख्म हो जाने पर यह ग्रन्थि शरीर की चिकनाई और प्रोटीन को शक्कर में बदलकर शरीर को ऊर्जा प्रदान करती है। इस ग्रन्थि में उत्पन्न होने वाले हार्मोन्स को तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम श्रेणी के हार्मोन्स वसा, कार्बोहाइड्रेट्स और प्रोटीन के चयापचय को नियन्त्रित करते हैं। दूसरी श्रेणी के हार्मोन्स शरीर में जल तथा लवण का सन्तुलन बनाकर रखते हैं तथा तीसरी श्रेणी के हार्मोन्स प्रजनन क्रिया में भाग लेते हैं। भूख न लगना, रक्तदाब, उल्टी होना, मांस-पेशियों का नष्ट हो जाना आदि अनेक रोग इस ग्रन्थि के विकार के सूचक हैं।

जीवन में तनाव, चिन्ता, क्रोध, ईर्ष्या, घृणा आदि भाव इस ग्रन्थि के कार्य को शिथिल कर देते हैं या रोक देते हैं।

इस प्रकार हमने देखा कि इन ग्रन्थियों की आरोग्यता हमारे शरीर के लिए कितनी आवश्यक है और इनकी आरोग्यता पर ही हमारे शरीर की आरोग्यता निर्भर करती है। इन्हें स्वस्थ रखने के लिए सन्तुलित भोजन और प्राकृतिक जीवन ही एक मात्र आधार है।

॥इति अलम्॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

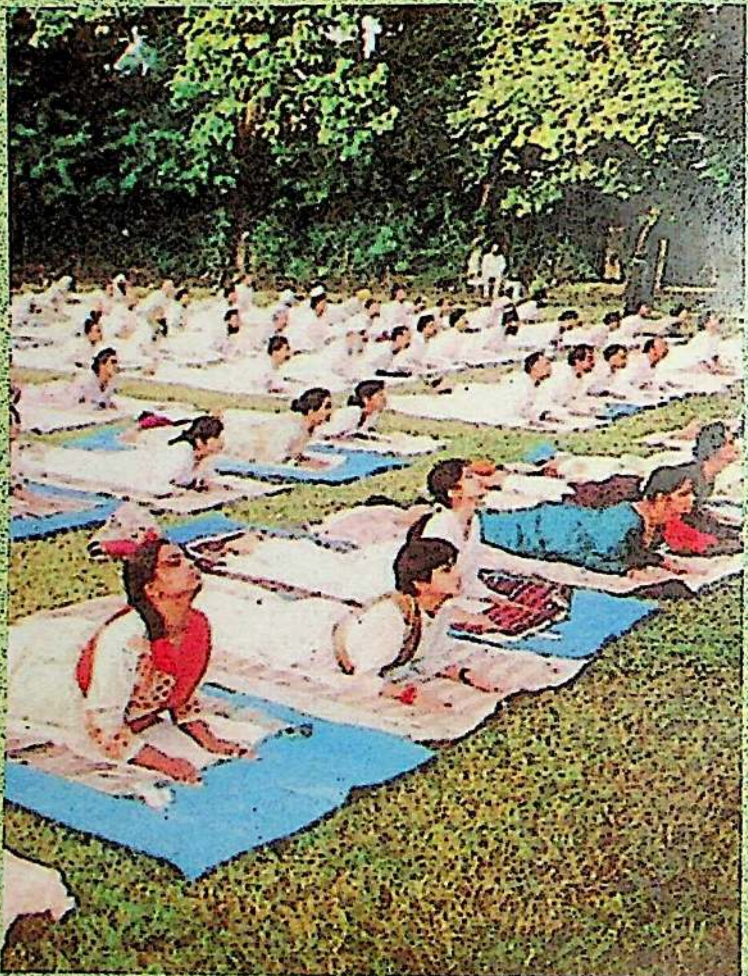

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.